महाभारत भाषा

सभापर्व

अनुवादक
आगरानिवासी
पं० कुंजबिहारीलाल शर्मा

मुद्रक और प्रकाशक
श्रीकेसरीदास सेठ
नवलकिशोर-प्रेस,
लखनऊ

सन् १९३१ ई०

पाँचवीं बार]

[सर्वाधिकार रक्षित

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

महाभारत भाषा सभापर्व का सूचीपत्र

	विषय	पृष्ठ
	मय दानव का पांडवों के लिये सभा बनाने को स्थान नियत करना ...	१
	श्रीकृष्णजी का पांडवों से बिदा होकर द्वारकापुरी को जाना	२
	मय दानव का पांडवों के लिये रत्नजटित सभा बनाना	४
	युधिष्ठिर कृत ब्राह्मण भोजन व सभा में प्रवेश और अनेक देश के राजा व ऋषियों के आने पर नृत्य गीतादि होना...	६
	पांडवों की सभा में नारद को आकर नीति सम्बन्धी प्रश्न करना ...	८
	नारद से युधिष्ठिर का प्रश्न करना कि आपने ऐसी और सभा देखी है और उनका ब्रह्मादि की सभाओं का वर्णन करना	१८
	युधिष्ठिर से नारद का इन्द्र की सभा का वर्णन करना	२०
	नारदजी का युधिष्ठिर से यमराज की सभा का वृत्तांत कहना	२१
	नारद का युधिष्ठिर से वरुण की सभा का वर्णन करना	२३
	नारद का युधिष्ठिर से कुबेर की सभा का वृत्तांत वर्णन करना	२५
	नारद का युधिष्ठिर से ब्रह्माजी की सभा का वृत्तांत वर्णन करना	२७
	युधिष्ठिर के प्रति नारद का हरिश्चन्द्र नृप का वृत्तांत कथन और राजसूय यज्ञ करने का उपदेश	२९
	युधिष्ठिर का धर्म से राज्यप्रबन्ध करना और अपने भाई सम्बन्धी ऋषि और श्रीकृष्णजी से राजसूय यज्ञ करने को सलाह करना	३२
	श्रीकृष्णजी का युधिष्ठिर से राजसूय यज्ञ करने के लिये पहिले जरासन्ध राजा को मारने का उपदेश करना	३५
१५	युधिष्ठिर, भीमसेन और कृष्णचन्द्र का जरासन्ध को मारकर साम्राज्य पदवी पाने का विचार करना	३९
१६	अर्जुन का जरासन्ध को मारकर साम्राज्य पदवी लेने का मंत्र देना ...	४१
१७	श्रीकृष्णजी का युधिष्ठिर से जरासन्ध के उत्पन्न होने की कथा कहना ...	४२
१८	राजा बृहद्रथ से जरा नाम राक्षसी को अपना वृत्तांत कहना और उसके द्वारा पुत्र मिलने के कारण से अपने पुत्र का नाम जरासन्ध रखना	४५
१९	चंडकौशिक मुनि का मगध देश में जाना, राजा बृहद्रथ का उनकी पूजा करना, मुनीश्वर का जरासन्ध को आशीर्वाद देना और बृहद्रथ का जरासन्ध को राज्य देकर तपस्या को चला जाना	४६
२०	श्रीकृष्णजी का अर्जुन व भीम को साथ लेकर जरासन्ध के मारने को मगध देश में जाना	४८
२१	श्रीकृष्णजी का भीम और अर्जुन के साथ मगध देश में पहुँचना और जरासन्ध से प्रश्नोत्तर होना	५०
२२	श्रीकृष्णजी का जरासन्ध के वध करने का उद्योग करना	५३
२३	जरासन्ध और भीमसेन से मल्लयुद्ध होने का वृत्तांत	५६

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अ० विषय पृष्ठ
से छुड़ा कर पांडवों सहित इन्द्रप्रस्थ को आना और पांडवों से बिदा द्वारका को चला जाना ... ...
२५ अर्जुन आदि का चारों दिशाओं के राजाओं को विजय कर बहुत-सा धन ४१
२६ अर्जुन का उत्तर दिशा में अनेक राजाओं को जीतकर राजा भगदत्त क करके जीतना ... ...
२७ अर्जुन का उत्तर दिशा में आगे जाना और युद्ध करके पहाड़ी राजा विजय करना १४३
२८ अर्जुन का सम्पूर्ण उत्तर दिशा को जीतकर इन्द्रप्रस्थ को आना और लाये हुए पदार्थों को युधिष्ठिर को निवेदन करना ... ...
२९ भीमसेन का पूर्व दिशा को विजय करना और चँदेरी के राजा से क आगे को जाना १४८
३० भीमसेन का दिग्विजय करके बहुत-सा धन लेकर इन्द्रप्रस्थ को लौट सब द्रव्य युधिष्ठिर को निवेदन कर देना १५५
३१ सहदेव का सम्पूर्ण दक्षिण दिशा को विजय करके इन्द्रप्रस्थ लौटक और सब लाये हुए धन को युधिष्ठिर को निवेदन करना ... १५७
३२ नकुल का पश्चिम दिशा का विजय करना और वहाँ से लाये हुए युधिष्ठिर को दे देना ... ...
३३ युधिष्ठिर का यज्ञ की सब सामग्री मँगाकर यज्ञ करने को दीक्षित होन सब राजा और ब्राह्मण आदि को निमन्त्रण भेजना १५९
३४ निमन्त्रण पाने पर युधिष्ठिर के यज्ञ में सहस्रों ब्राह्मणों और राजाओं का और राजा युधिष्ठिर का उनको सुन्दर घरों में टिकाकर सत्कार करना १६१
३५ युधिष्ठिर का पृथक्-पृथक् कामों पर पृथक्-पृथक् मनुष्यों को नियत क यज्ञ करना १६२
३६ राजा युधिष्ठिर का यज्ञस्नान करना और भीष्मजी के कहने से श्रीकृष्णजी को अर्घ देना ८०
३७ राजा शिशुपाल का श्रीकृष्णचन्द्र की पूजा होना देखकर युधिष्ठिर, भीष्म और श्रीकृष्णजी की निन्दा करना ८२
३८ राजा युधिष्ठिर का शिशुपाल को समझाना और भीष्मजी का श्रीकृष्णजी की महिमा कहकर उनका पूजन होना योग्य बताना ८४
३९ श्रीकृष्णजी की पूजा होने पर सब राजाओं का क्रोध करके यज्ञ विध्वंस करने की सलाह करना और युद्ध के लिये उपस्थित होना ८६
४० युधिष्ठिर का सब राजाओं को युद्ध के लिये तैयार देखकर भीष्मजी से उपाय पूछना और भीष्मजी का श्रीकृष्णजी की महिमा कहकर युधिष्ठिर का भय दूर करना ८७
४१ राजा शिशुपाल का भीष्मजी की मति की निन्दा करना ८८
४२ शिशुपाल के रूखे वचनों को सुनकर भीमसेन का क्रोध करना और भीष्म का उसके क्रोध को शांत करना ९१
४३ भीष्मजी का भीमसेन से शिशुपाल की उत्पत्ति और श्रीकृष्णजी से वरदान पाने का वृत्तांत कहना ९२
४४ शिशुपाल का भीष्म और कृष्ण की निन्दा करना और शिशुपाल, भीष्म और सब राजाओं का आपस में विवाद होना ९४

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

विषय पृष्ठ

श्रीकृष्णजी का शिशुपाल के सौ अपराध पूरे होने पर मारडालना यज्ञ का पूरा होना, सब राजाओं का अपने अपने घर को चला जाना और सभा में दुर्योधन और शकुनि का रह जाना ९७
व्यासजी का युधिष्ठिर से उत्पातों का फल कह कर चला जाना और युधिष्ठिर का शोच करना १००
दुर्योधन का पांडवों की सभा में जाकर धोखे से गिरना और पांडवों का हँसना और दुर्योधन को रोष होना और शकुनि के प्रति सर्व वृत्तांत कहना १०२
शकुनि का दुर्योधन को युधिष्ठिर पर क्रोध न करने का उपदेश करना और उसके न मानने पर उसे युधिष्ठिर से जुआ खेलने की सलाह देना १०५
दुर्योधन का सताप व शकुनि से सलाह करके छल के पाँसों से पांडवों की लक्ष्मी जीतने को युधिष्ठिर को बुलवाना १०७
राजा धृतराष्ट्र का दुर्योधन से दुःख का कारण पूछना और दुर्योधन का युधिष्ठिर के वैभव और भीमसेन आदि की हँसी से दुःख पाने का वृत्तांत कहना १११
दुर्योधन का धृतराष्ट्र से युधिष्ठिर के यज्ञ में अनेक देशों से आये हुए धन का वृत्तांत कहना ११४
दुर्योधन का धृतराष्ट्र से उन राजाओं का वृत्तांत कहना जिन्होंने युधिष्ठिर को यज्ञ में कर दिया था ११६
दुर्योधन का धृतराष्ट्र से सब राजाओं को युधिष्ठिर की सेवा करते हुए देखकर सताप होने का हाल वर्णन करना ११६
राजा धृतराष्ट्र का दुर्योधन को पांडवों से द्वेष न करने को उपदेश करना ... १२१
दुर्योधन का धृतराष्ट्र से अनेक नीति के कारण कहकर यह कहना कि हमको पांडवों की लक्ष्मी लेना ही उचित है नहीं तो मरना अच्छा है
धृतराष्ट्र का दुर्योधन के कहने के अनुसार जुआ खेलने को सभा बनवाना ... १२२
और विदुर को भेजकर पांडवों को बुलवाना १२४
विदुर का राजा धृतराष्ट्र से जुआ का विरोध करना १२६
विदुर का धृतराष्ट्र की आज्ञा से इन्द्रप्रस्थ जाकर पांडवों को लाना और पांडवों का हस्तिनापुर में आकर सबसे मिलकर वास करना १२६
युधिष्ठिर का सभा में जाना और शकुनि से वार्त्तालाप होकर जुए का प्रारम्भ १२६
सभा में राजा धृतराष्ट्र, भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य आदि का आना तथा युधिष्ठिर का कौरवों से जुआ खेलना १३०
युधिष्ठिर का शकुनि से जुआ होना और युधिष्ठिर का बहुत-सा धन हारना ... १३१
विदुर का धृतराष्ट्र को समझाना और दुर्योधन को त्याग करने का कहना १३३
विदुर का अनेक पूर्वापर समझाकर धृतराष्ट्र को जुआ बंद कराने का कहना १३५
दुर्योधन का क्रोध से विदुरजी की निन्दा करके निकाल देना व विदुरजी का हितकारी बातें कहकर चला जाना १३६
युधिष्ठिर का जुए में सब राज्य और धन हारना और पीछे अपने चारों छोटे भाई अपने आप और द्रौपदी को भी हार जाना १३८

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अ० विषय

६६ दुर्योधन का विदुरजी को द्रौपदी को दासी कर्म करने के लिये लाने की
आज्ञा देना और विदुरजी का उसकी निन्दा करके ऐसा काम न करने का
उपदेश देना ... ...

६७ दुःशासन का द्रौपदी को बाल पकड़ कर सभा में खींचकर लाना और
द्रौपदी का दुःखी होकर सभासदों से अपने दासी होने या न होने का
प्रश्न करना ... ...

६८ भीमसेन का युधिष्ठिर पर कोप करना और दुःशासन का द्रौपदी को सभा में
लाना और द्रौपदी का अपने जीते जाने अथवा न जीते जाने का प्रश्न करना,
उसका उत्तर न मिलना, दुःशासन का द्रौपदी के नग्न करने को वस्त्र खींचना,
उस समय द्रौपदी का श्रीकृष्णचन्द्र को याद करना और श्रीकृष्णचन्द्र का
वहाँ गुप्त आना और द्रौपदी की लज्जा रखना ... ...

६९ द्रौपदी का विलाप करना और कहना कि मेरे प्रश्न का उत्तर मिले और
भीष्मजी का यह कहना कि जो उत्तर युधिष्ठिर देवें, वही प्रमाण है ...

७० दुर्योधन का द्रौपदी से अपना प्रश्न पांडवों से ही पूछने को कहना और
क्रोधपूर्वक भीमसेन का उत्तर देना ... ...

७१ भीमसेन का प्रण व कौरवों की अनीति और उत्पातसूचक गीदड़ों का
बोलना, उसे सुन धृतराष्ट्र का द्रौपदी को वर देना और पांडवों का दास-भाव
छूटना ... ...

७२ भीम को कर्ण की बात सुन क्रोध करना व युधिष्ठिर को उसके क्रोध
शांत करना ६४

७३ धृतराष्ट्र का युधिष्ठिर की शिक्षा करना और युधिष्ठिर का
विदा हो जाना १६६

७४ दुर्योधन का धृतराष्ट्र से अनेक कारण कहकर पांडवों को पुनः
के लिये बुलवाना १६७

७५ गांधारी का धृतराष्ट्र को समझा कर दुर्योधन को त्यागने ...शा-
और धृतराष्ट्र को कहना न मानकर पांडवों को फिर जुआ ... १६९

७६ धृतराष्ट्र की आज्ञा से युधिष्ठिर का शकुनि का फिर जुआ ... १७२
राज्यादि हार जाना ... ... कुन्ती

७७ दुर्योधन व दुःशासनकृत पांडव हँसी और पांडवों का दु... ... १७४
सन और कर्ण के मारने का प्रण और मृगचर्म ओढ़ कर ...त्तांत

७८ युधिष्ठिर का भीष्मपितामह आदि सब बड़ों से बिदा ... उनकी

७९ द्रौपदी का कुन्ती से बिदा मांगना कुन्ती का विलाप १७७
को अपने घर लिवा ले जाना और द्रौपदी सहित पांड... ... १८०

८० विदुरजी का धृतराष्ट्र के पूछने पर पांडवों के अनेक रू...
कहना दुर्योधन का द्रोणाचार्य की शरण में जाना औ...
रक्षा करने की प्रतिज्ञा करना ... ...

८१ पांडवों के वन को चलेजाने पर धृतराष्ट्र को बड़ी चि...

शुभमस्तु ।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

महाभारत भाषा

सभापर्व

चरणकमलद्युतिधाम धूम्रकेतु गणनाथ के।
पदपङ्कजअभिराम श्रीगुरु के वन्दन करहुँ॥
अव्यय अक्षयधाम जेहि गावत सब वेदविद।
वन्दि ताहि निष्काम सभापर्व भाषा करहुँ॥

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्। देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्॥

पहिला अध्याय

मय दानव का पांडवों के लिए सभा बनाने का स्थान नियत करना

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! खांडव वन के जल जाने के पीछे मय दानव अर्जुन को श्रीकृष्णचन्द्र के पास वारंवार पूजकर मधुर वाणी से हाथ जोड़कर कहने लगा—महाराज, आपने मुझको इन वासुदेवजी और अग्नि से बचाया है, इससे मैं भी आपका कुछ काम किया चाहता हूँ। जो कुछ आप कहें वही मनोकामना मैं आपकी पूरी करूँ। यह सुनकर अर्जुन ने कहा—तुम हमारा सब काम कर चुके, हम तुम पर प्रसन्न हैं। अब तुम कल्याणपूर्वक अपने घर जाओ, और हमसे प्रीति रक्खो। मय दानव बोला—आप सत्य कहते हैं, आप इसी योग्य हैं, परन्तु मैं दैत्यों का विश्वकर्मा हूँ और शिल्पविद्या अच्छी तरह जानता हूँ इससे मैं प्रीतिपूर्वक आपका कुछ काम किया चाहता हूँ। १-६। यह सुनकर अर्जुन बोले—तुम अपने को हमसे रक्षा किया हुआ मानकर हमारा काम करना चाहते हो, परन्तु मेरा कोई ऐसा काम नहीं है जो मैं तुमसे कराऊँ। इससे जो तुमको

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हमारा काम करना ही है तो श्रीकृष्णजी से कहो और वे जो कुछ आज्ञा दें सो करो। उनका काम करना हमारा ही काम है। यह सुनकर मय ने श्रीकृष्णजी से कहा और वे क्षणभर विचार करके लोकनाथ प्रजापति की प्रेरणा से बोले—हे दानव! जो तू धर्मराज का प्रिय करना चाहता है तो एक ऐसी सुन्दर सभा बना जिसके सदृश इस संसार में दूसरी सभा न निकले तथा उसे देख-देखकर सम्पूर्ण असुर और मनुष्य तेरी मति की प्रशंसा करें।७-१३। यह सुनकर मय दानव ने प्रसन्न होकर सभा बनानी अंगीकार की, और "विमानप्रतिमा" नाम की सभा बनाने का विचार किया। श्रीकृष्ण और अर्जुन मय को युधिष्ठिरके पास ले गए और उनसे सब वृत्तान्त कहकर मयदानवके सभा बनानेका हाल कहा। युधिष्ठिर ने उस वृत्तान्त को सुनकर मय की यथोचित पूजा की और वह उस पूजा को अंगीकार करके प्रसन्नतापूर्वक वृषपर्वा दानव का चरित्र पाण्डवोंसे कहने लगा। फिर कुछ दिनके बाद स्वस्थ होकर श्रीकृष्ण और अर्जुनकी आज्ञानुसार शुभ दिन में मङ्गलपूर्वक सहस्रों ब्राह्मणों को खीर का भोजन करा और धन आदि से तृप्त करके उस दैत्य ने ऐसी महारमणीक पृथ्वी देखकर, जहाँ सब ऋतुओं में सुख रहे, दश सहस्र हाथ पृथ्वी को चारों ओर से नापकर सभा बनाने के लिए स्थान नियत किया।१४-२१।

दूसरा अध्याय

श्रीकृष्णजी का पाण्डवों से बिदा होकर द्वारकापुरी को जाना

वैशंपायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! इसके पीछे श्रीकृष्णजी ने पिता के दर्शनों की लालसा से पांडवों के साथ प्रीतिपूर्वक बहुत दिनों तक बसकर द्वारका जाने की इच्छा की। और अपनी फूफी कुंती से आज्ञा माँगकर उसके पैरों पर अपना मस्तक रख दिया। कुंती ने उनके मस्तक को सूंघकर प्रीतिपूर्वक उठाकर छाती से लगा लिया। इसके पीछे श्रीकृष्णजी सुभद्रा के पास गए और प्रेम के आँसू भरकर उससे बहुत सी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हितकारी बातें कहीं। उसका संदेशा सुनकर उससे प्रीतिपूर्वक बिदा हुए। फिर द्रौपदी के पास गए और उसे भी प्रसन्न करके उससे बिदा हुए। फिर धौम्य ऋषि के पास गए और उनके चरणों में वंदना करके पांडवों के पास चले गए। जब यात्रा का काल आया, तब उन्होंने स्नान किया और पवित्रता से यात्राकालिक आवश्यक कृत्य करके देवता और ब्राह्मणों की गंधादिक से पूजा की। शुभ मुहूर्त्त के आने पर दही, फल और अक्षतों से पूजित होकर ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन सुनते हुए, अच्छे भूषण वसन पहिनकर नगर के बाहर निकले। ब्राह्मणों को धन देकर और उनकी प्रदक्षिणा करके शैव्य सुग्रीव नाम घोड़ों से जुते हुए सुवर्ण के रथ पर शंख, चक्र और गदा आदि अस्त्रों को लिए हुए बैठ गए। उस समय युधिष्ठिर ने दारुक सारथी को रथ पर से उतार दिया और बागडोर आप हाथ में लेकर श्रीकृष्णजी का रथ हाँका। अर्जुन सुवर्ण की डंडी का चमर लेकर रथ के दाहिनी ओर चढ़कर चमर ढोरने लगा। भीमसेन, नकुल, सहदेव पुरवासी और ऋत्विजों सहित उनके पीछे पीछे हो लिये। उस समय श्रीकृष्णजी पाण्डवों सहित ऐसे शोभित मालूम होते थे, मानों शिष्यों सहित गुरु बैठे हुए हैं। इस प्रकार से श्रीकृष्णजी उन सब पाण्डवों से अन्वीयमान और पूजित होते हुए सबके साथ साथ उसी रथ पर दो कोस तक गये। उपरांत युधिष्ठिर के चरणों को छूकर उनसे लौटने को कहा, युधिष्ठिर ने श्री-कृष्ण के शिर को बड़ी प्रीति से सूँघकर छाती से लगा लिया और जाने की आज्ञा दी। तब फिर श्रीकृष्णजी अर्जुन आदि सब छोटे भाइयों से यथायोग्य मिले। फिर आने का नियम करके उन सबको बड़े कष्ट से लौटाकर द्वारकापुरी को चल दिये। पाण्डव उनको बड़ी प्रीति से पीछे से खड़े हुए देखते रहे। जब उनका रथ दृष्टि से बाहर हो गया तब अपने मन को उनके साथ करके आप सब उनकी मूर्ति को प्रीति-पूर्वक मन से ध्यान करते हुए घर को लौट आये। श्रीकृष्णजी उस रथ पर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चढ़े हुए आगे दारुक और पीछे सात्यकी सहित द्वारकापुरी में पहुँचे। १-३०। वैशंपायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! युधिष्ठिर अपने भाई और सुहृज्जनों के साथ लौटकर अपने नगर में पहुँचा और उन सबको बिदा करके द्रौपदी के पास जाकर आनन्द करने लगा। श्रीकृष्णजी भी द्वारका में पहुँचकर यादवों से पूजित हुए। उग्रसेन, वसुदेवजी, बलदेवजी और माता को दण्डवत् करके अपने प्रद्युम्न, साम्ब, निशठ, चारुदेष्ण, गद, अनिरुद्ध और भानु आदि पुत्र-पौत्रों को गोद में लेकर प्यार करके रुक्मिणी के भवन में चले गये। यहाँ इन्द्रप्रस्थ में मय दानव ने सब रत्नों से जटित युधिष्ठिर के लिये सभा बनानी आरंभ की। ३१-३६।

तीसरा अध्याय

मय दानव का पाण्डवों के लिये रत्नजटित सभा बनाना

वैशंपायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! मय दानव ने अर्जुन से कहा—कैलास पर्वत के उत्तर और मैनाक पर्वत है। उस पर्वत में एक बिन्दुसर है। मैंने वहाँ पहिले दैत्यों के यज्ञ करने की इच्छा करने पर वृषपर्वा दैत्यराज की सभा बनाई थी। उसी स्थान के निकट उस सभा के बनाने के द्रव्य अर्थात् अनेक प्रकार की मणि और रत्नादिक रक्खे हुए हैं। मैं वहाँ उन सब वस्तुओं को लेने जाता हूँ। उनको लाकर आपके लिये बड़ी सुन्दर, रत्नजटित और मन को आनन्द देनेवाली सभा बनाऊँगा। उसी बिंदुसर के निकट एक कांचनमयी बड़ी भारी गदा इसी प्रकार की, जैसा गांडीवधनुष है, राजा वृषपर्वा ने शत्रुओं को मारकर रख दी थी। वरुण का देवदत्त नामक बड़ा शङ्ख भी जिसका शब्द बड़ी दूर से सुनाई पड़ता है, वहीं रक्खा हुआ है। मैं उन दोनों को भी लेता आऊँगा। वह शङ्ख आपके और गदा भीमसेन के योग्य है। यह कहकर वह दैत्य ईशानकोण की ओर को चल

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दिया, कैलास पहाड़ की उत्तर ओर मैनाक पर्वत पर पहुँचकर बिन्दुसर के निकट जा पहुँचा। यह वही स्थान है जहाँ भगीरथ ने गंगाजी के दर्शनों की इच्छा से बहुत वर्ष रहकर तपस्या की थी। प्रजापति ने यज्ञ किया था। उस स्थान पर मणिमय यज्ञखम्भ और सुनहरी सींवा वृक्ष लगे हुए हैं। उसी स्थान पर इन्द्र ने यज्ञ करके बड़ी सिद्धि पाई थी। वहाँ पर सहस्रों प्राणी शिवजी महाराज का आराधन करते हैं। उसी जगह नर, नारायण, ब्रह्मा और महादेवजी सहस्र युगों के व्यतीत होने पर यज्ञ किया करते हैं। वासुदेवजी ने इसी स्थान पर धर्मप्रवृत्ति के लिये अनन्त यज्ञ करके सुवर्णयुक्त यज्ञखम्भ और दीप्त सींवा वृक्ष दान दिये थे। १-१७। वह दैत्य वहाँ पहुँचकर उस गदा, शङ्ख और सभा बनाने को मणिआदिक नाना प्रकार के द्रव्य जो दैत्यों से रक्षित वहाँ रक्खे हुए थे, लेकर इन्द्रप्रस्थ को लौट आया। गदा भीमसेन को और शङ्ख अर्जुन को देकर सभा की रचना करने लगा। थोड़े दिनों में वह सभा मणिमय द्रव्यों से बनकर चारों ओर दश दश सहस्र हाथ लंबी तय्यार हो गई। वह सभा ऐसी अद्भुत बनी थी कि उसके सदृश श्रीकृष्ण की सुधर्मा नाम सभा और ब्रह्मा की भी सभा न थी। उत्तम उत्तम द्रव्यों और रत्नों से ऐसी बनाई गई थी कि सूर्य और चंद्रमा की भी सभा वैसी न थी। उस सभा में ऐसा प्रकाश था कि उसके सामने सूर्य का भी प्रकाश अस्त हो गया और ऐसी शोभायमान थी कि मनुष्य की थकावट वहाँ जाते ही दूर हो जाती थी। ऊँची ऐसी थी कि आकाश में लगी हुई जान पड़ती थी। दैत्यों के विश्वकर्मा उस मय दानव ने सभा को बहुत द्रव्यों से बनाकर उसकी रक्षा के लिये आठ सहस्र किंकर नामी दैत्य जो बड़े पराक्रमी लंबी चौड़ी लाल लाल आँखें और शङ्खवत् कान रखनेवाले थे, नियत कर दिये। वे दैत्य उस सभा को जहाँ चाहें वहाँ उठाकर ले जा सकते थे। १८-२६।

मय दानव ने उस सभा में जो एक नलिनी अर्थात् कमलयुक्त सरोवर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बनाया था। उस सरोवर की सीढ़ियाँ स्फटिक की बनी थीं। कीच-रहित जल उसमें मोती के सदृश झलकता था। उसके चारों ओर मणियों का चौतरा बना दिया था। उस सरोवर में जो कमल थे उनकी पत्तियाँ वैडूर्यमणि की और नालें पद्मराग आदि मणियों की बनाई थीं। उसमें अनेक अनेक प्रकार की मणियों से जटित सुनहले कछुए और मछलियाँ फिरते थे। पद्मराग आदि मणियों के बने हुए अनेक प्रकार के पक्षी जहाँ तहाँ बैठे हुए थे। वायु वहाँ शीतल चलती थी। उस सभा को बहुत से मनुष्य देखने आये और भ्रांति से थल को जल और जल को थल जानजान कर गिर गिर पड़े। उस सभा के चारों ओर बड़े बड़े सुन्दर और शीतल छाया देनेवाले वृक्ष लगा दिए गये। बड़ी सुगन्धि देनेवाले बाग, कमल, हंस और चकवा चकवी आदि से युक्त सरोवरों के होने से वह सभा अत्यन्त सुशोभित हो गई। वायु वहाँ सब प्रकार के जल में उत्पन्न होनेवाले कमलों और थल में फूलनेवाले फूलों की सुन्दर गंध को लेकर बहने लगी। वैशंपायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! मय दानव ने उस सभा को चौदह महीने में बनाकर युधिष्ठिर को निवेदन कर दिया। ३०-३७।

चौथा अध्याय

युधिष्ठिर का सहस्र ब्राह्मणों को भोजन कराके सभा में प्रवेश करना और सब देश के राजा और ऋषियों के आने पर नृत्य गीतादिक आनन्द होना

वैशंपायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! उस सभा के बन जाने पर युधिष्ठिर ने उसमें प्रवेश करने के लिए दश सहस्र ब्राह्मणों को भोजन कराया। घी शहद मिली हुई खीर, पूरी, मूल और फलों के अनेक शाक, मृग, वाराह और बकरी आदि के अनेक-अनेक प्रकार के मांस और पीने, चूसने और खाने के अनेक पदार्थों से नानादिशाओं से आए हुए ब्राह्मणों को तृप्त करके प्रत्येक ब्राह्मण को एक-एक गाय और नवीन-नवीन

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वस्त्र दिये। ब्राह्मणों ने उनको लेकर बड़े उच्चस्वर से पुण्याहघोष किया। इसके पीछे युधिष्ठिर देवताओं की स्थापना करके दिव्यगंधों से पूजित होकर उस सभा में विराजमान हुआ और मल्ल, नट, उल्ल, सूत और वैतालिक अपनी-अपनी कृत्य करनेलगे। इसके पीछे युधिष्ठिर अपने भाइयोंसहित स्वर्ग में इन्द्र के समान उस सभा में विहार करने लगा और अनेक देशों से ऋषि और राजा लोग उस सभा में युधिष्ठिर के पास आकरके स्थित हुए। उन ऋषियों के नाम ये हैं—असित, देवल, सत्य, सर्पमाली, महाशिरा, अर्वावसु, सुमित्र, मैत्रेय, सुनक, बलिबक, दाल्भ्य, स्थूलशिरा, कृष्णद्वैपायन, शुक, सुमन्त, जैमिनि और पैल आदि। व्यासजी के शिष्य और तित्तिरि, याज्ञवल्क्य, लोमहर्षण अपने पुत्रोंसहित, अशुहोम्य, धौम्य, अणीमांडव्य, कौशिक, दामोष्णीष, त्रैबलिपर्णाद, घृटजानुक, मौंजायन, वायुभक्ष, पराशर्य, सारिक, बलीवाक, सिनीवाक, सत्यपाल, कृतश्रम, जातूकर्ण, शिखावान्, आलंब, पारिजातक, पर्वत, महामुनिमार्कंडेय, पवित्रपाणि, सावर्ण, भालुकि, गालव, जंघाबन्धु, रैभ्य, कोपवेग, भृगु, हरिबभ्रु, कौंडिन्य, बभ्रुमाली, सनातन, काक्षीवान्, औषिज, नाचिकेत, गौतम, पैंग, वराह, शुनक, शांडिल्य, कुक्कुर, वेणुजंघ, कालाय और कठ इनके सिवाय और-और बहुत से वेदपारग और पुण्यकथाओं के कहनेवाले ब्राह्मण आए थे। १-२०।

राजाओं के नाम ये हैं—मुंजकेतु, विवर्द्धन, संग्रामजित्, दुर्मुख, उग्रसेन, राजा कक्षसेन, क्षेमक, काम्बोजराज, कमठ, कंपन जिसने बड़े-बड़े अस्त्रवेत्ता यमनों को युद्ध में कँपा दिया था। कालकेय, मद्रक देशों का राजा जटासुर, कुन्ति, किरातों का राजा पुलिन्द, अंग और वंग देश के राजा पुण्ड्र, पांड्रयोंड्र, अंधृक, अंग, वंग, सुमित्र, कर्शन, शैव्य, किरातों का राजा सुमना, यमनों का राजा चाणूर, देवरात, भोज, भीमरथ, स्रुतायुध, राजा कलिंग, जयत्सेन, राजा मगध, सुकर्मा, चेकितान, अमित्र, कर्शनपुरु, केतुमान, वसुदान, वैदेह, कृतक्षण,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सुधर्मा, अनिरुद्ध, श्रुतायु, अनूपराज, दुर्धर्ष, क्रमजित्, सुदर्शन, शिशुपाल, राजाकरुष, वृष्णिवंशीकुमार, आहुक, विप्रथु, गद, सारण, अक्रूर, कृतवर्मा, सत्यक, भीष्मक, कृतिक, द्युमत्सेन, कैकय, यज्ञसेन, सौमकि, केतुमान, वसुमान और-और बहुत से राजा लोग थे। परन्तु उनमें से मुख्य मुख्यों के नाम कहे गए हैं। इनमें से बहुत से राजकुमारों और वृष्णिवंशी प्रद्युम्न, साम्ब, युयुधान, सात्यकि, सुधर्मा, अनिरुद्ध, शैव्य आदि अनेकों ने अर्जुन के पास रहकर वहाँ धनुर्वेद सीखा था। इसी सभा में तुम्बुरु नाम का गन्धर्व भी जो अर्जुन का मित्र था, नित्य अर्जुन के पास रहता था। उस सभा में चित्रसेन आदि सत्ताईस गन्धर्व और अनेक अप्सरा आई थीं। मनस्वी और तुम्बुरु की प्रेरणा से किन्नर और गन्धर्वों ने जो गाने बजाने, स्वर मिलाने और अलापने में बड़े निपुण थे। बड़ी मधुर तानों के साथ सुन्दर सुन्दर भजन गाये। जैसे सब देवता स्वर्ग में ब्रह्माजी की उपासना करते हैं इसी प्रकार से वह सब वहाँ रहकर युधिष्ठिर और ऋषियों को रमण करा-कराकर उनकी उपासना करने लगे। २१-३०।

पाँचवाँ अध्याय

नारदजी का सभा में पांडवों के पास आना और उनसे नीतिसम्बंधी प्रश्न करना

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय ! जब युधिष्ठिर, राजा लोग और गंधर्वों सहित सभा में बैठ गया, तब वहाँ नारदजी आये। वे वेद, उपनिषद्, इतिहास और पुराणों की कथा जिनको देवता भी मानते हैं। पूर्वकल्प, न्यायशास्त्र, धर्मतत्त्व और वेद के छः अंगों के जाननेवाले, सबसे श्रेष्ठ, एकात्मभाव रखने और संयोग को पृथक् पृथक् करनेवाले, एक धर्म में अनेक धर्मों का आचरण जाननेवाले, बड़े वक्ता, असंबद्ध न बोलनेवाले, मेधावी, स्मृतियों और दायविभाग आदि के जाननेवाले, कवि, ज्ञान, कर्मकाण्ड और हर बात को प्रमाण

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सहित निश्चय करनेवाले, प्रतिज्ञा आदि पाँचों अवयवों से युक्त, हर बात के गुण और दोष को पहचाननेवाले, बृहस्पति के कहे हुये पर भी उत्तर देनेवाले, अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष के निर्णय को यथावत् कहनेवाले, सम्पूर्ण विश्व को देखनेवाले, सांख्ययोग के विभाग को जाननेवाले, संधि और विग्रह के तत्त्व के ज्ञाता, देवता और असुरों को विपरीत करनेवाले, छः गुणों की विधि और सब शास्त्रों में पंडित, युद्ध और गान्धर्वविद्या में निपुण और सब जगह विना रोकटोक जानेवाले थे। वे अनेक लोकों में घूमते हुए मन के वेग की तरह पारिजात, रैवत, सुमुख और सौम्य ऋषियों सहित उस युधिष्ठिर की सभा में पांडवों के देखने को अकस्मात् आ पहुँचे। युधिष्ठिर को प्रीति सहित जय का आशीर्वाद दिया। उनको देखते ही सब पांडव खड़े हो गये। फिर विनययुक्त दण्डवत् करके उनको सुन्दर आसन पर बैठाया और अर्घ्य, पाद्य, मधुपर्क और रत्नों से उनकी पूजा की। १-१५।

नारदजी पाण्डवों की पूजा से प्रसन्न हुए और उनसे अर्थ, धर्म, कामयुक्त यह पूछने लगे कि कहो तुम्हारे अर्थ सिद्ध होते हैं? मन प्रसन्न और धर्म में लगा रहता है? या नहीं और अंतर आत्मा में ध्यान लगाने पर मन इधर उधर तो नहीं जाता? तुम्हारे पहले पुरुषाओं के अर्थ, धर्म और काम तीनों से युक्त आचरणों में तुम्हारी प्रवृत्ति रहती है। अथवा उससे निवृत्त होगये हो। तुम्हारे अर्थ से धर्म और धर्म से अर्थ और काम और प्रीति से अर्थ और धर्म दोनों को बाधा तो नहीं पहुँचती। तुमने अर्थ, धर्म और काम को करने के लिये काल का विभाग किया है? अर्थात् ब्राह्म मुहूर्त्त में धर्म करना, दिन में अर्थ उपार्जन और रात्रि में कामकलोल करने का नियम किया है या नहीं। और राजाओं के छः गुणों की सेवा अर्थात् १ दूत और मंत्रियों को उपदेश करना, २ शत्रुको दबाने में उत्कर्ष दिखाना, ३ तर्क में कुशल होना, ४ स्मृति, ५ भूत को शास्त्र से और भविष्य को बुद्धि बल से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जानना, और ६ नीतिशास्त्र को जानना और ७ उपायों की साधना अर्थात् १ साम, २ दाम, ३ दंड, ४ भेद, ५ मंत्र, ६ ओषधी और ७ अपने और शत्रु के बलाबल का विचार। और चौदह दोषों की परीक्षा अर्थात् १ नास्तिकता, २ असावधानी, ३ दीर्घसूत्रता, ४ इन्द्रियोंके वश में रहना, ५ किसी प्रयोजन को अकेला चिंतन करना, ६ ऐसे मनुष्यों के साथ विचार करना जो विपरीत अर्थ देखनेवाले हैं, ७ क्रोध, ८ ज्ञानियों का दर्शन करना, ९ निश्चित किये हुए काम को आरम्भ न करना, १० सलाह को सबसे कह देना, ११ मंगल कामों को न करना, १२ सब शत्रुओं पर एक साथ चढ़ाई करना, १३ झूठ बोलना, १४ और आलस्य करते हो या नहीं और इन चौदह बातों को भी देखते हो या नहीं १ घोड़ा, २ हाथी, ३ क़िला, ४ योधा, ५ देश, ६ कोष, ७ अधिकारी, ८ शत्रु, ९ शास्त्र, १० व्यवहार, ११ दूत, १२ महल, १३ जमाखर्च और १४ रथ आदि की गणना। राज्य का प्रबन्ध अपने और शत्रुओं के बलाबल को विचारकर करते हो या नहीं और आठ कर्म अर्थात् १ खेती का प्रबन्ध, २ व्यापार का प्रबन्ध, ३ सड़कें बनवाना, ४ किले बनवाना, ५ पुल बनवाना, ६ हाथियों को बहुत खाने के कारण से ग्राम २ में बँधवाना, ७ सोना, चाँदी आदि की खानों पर कर बाँधना, और ८ उजड़े हुए अथवा शून्य देश को बसाना करते हो या नहीं। और तुम्हारी सब प्रकृतियाँ अर्थात् १ क़िले का रक्षक, २ सेनापति, ३ धर्माध्यक्ष, ४ चमूपति, ५ पुरोहित, ६ वैद्य, ७ ज्योतिषी, ८ अमात्य, ९ सुहृद्, १० कोष, ११ राष्ट्र, १२ दुर्ग, और १३ सेना नष्ट तो नहीं हैं। अर्थात् ऐसा तो नहीं हुआ है कि धन का लोभ देकर तुम्हारे शत्रुओं ने उनको अपनेवशमें करलियाहो और तुम्हारी सलाहको तुम्हारे विश्वासी मनुष्य, दूत और मंत्री प्रकाश तो नहीं करते। तुम अपने मित्र शत्रु उदासीन मनुष्यों और काल के अनुसार संधि और विग्रह को जानते हो या नहीं। जो मनुष्य तुम्हारे मित्र हैं, न शत्रु और जो मध्यम हैं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अर्थात् तुमसे और तुम्हारे शत्रु दोनों से मिले हुए हैं, उनके कर्तब को भी देखते रहते हो या नहीं। और तुमने अपने मंत्री अपनी आत्मा के समान, शुद्ध अन्तःकरण, समर्थ, बुद्धिमान्, वृद्ध, कुलीन और प्रीतिमान् मनुष्यों को किया है या नहीं। मंत्री ही विजय का मूल गिना जाता है। तुम्हारे राज्य को ऐसे मंत्री जो मंत्र को किसी से न कहे और शास्त्र में पण्डित हो रक्षा करते हैं या नहीं। कहीं राज्य को तुम्हारे शत्रु तो नष्ट नहीं करते हैं? तुम समय पर जगते हो या निद्रा के वश में रहते हो? अपने कार्य का विचार ब्राह्ममुहूर्त में करते हो या नहीं। कहीं ऐसा तो नहीं करते हो कि अकेले-अकेले जो चाहें सो सलाह कर ली अथवा औरों के साथ भी की तो बहुत से मनुष्यों में बैठकर की और सलाह सब राज्य में विख्यात हो गई और ऐसे कामों के शीघ्र करने में जिनमें परिश्रम थोड़ा हो और फल बहुत हो विघ्न तो नहीं हो जाता है।१६-३१। तुम्हारे राज काज करनेवाले अविश्वासी और ऐसे तो नहीं हैं जिनको तुम न जानते हो। तुम ऐसा तो नहीं करते हो कि कभी किसी मनुष्य को किसी अधिकार पर कर दिया फिर उसी को दूसरा अधिकार दे दिया? तुम्हारी खेती आदि विश्वासी और वृद्ध मनुष्यों के द्वारा होती है या नहीं। तुम्हारे काम कृतप्राय तो नहीं हैं? तुम्हारे पुत्रों को सब शास्त्रों में पण्डित और धर्म उपदेश करनेवाले आचार्यलोग शिक्षा करके उनको योद्धाओं में मुख्य करते हैं या नहीं। राजाओं को उचित है कि सहस्रों मूर्खों के बदले में एक पण्डित को मोल ले लें क्योंकि पण्डित ही सब कामों में कल्याण का करनेवाला होता है, तुम भी ऐसा करते हो या नहीं। तुम्हारे सब क़िले धन धान्य आयुध जलयंत्र शिल्पविद्या को जाननेवाले और धनुर्धारी योद्धाओं से पूरित हैं या नहीं। जिस राजा के एक मंत्री भी मेधावी शूर जितेन्द्रिय और चतुर होता है उसकी लक्ष्मी की बहुत वृद्धि होती है। तुम्हारे भी मंत्री ऐसे हैं या नहीं। तुम अपने शत्रु के अठारह अंगों की अर्थात् मंत्री १,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पुरोहित २, युवराज ३, चमूपति ४, द्वारपाल ५, अंतर्देशिक ६, कारागृहाधिकारी ७, खजाञ्ची ८, दीवान ९, प्रदेष्टा १०, नगराध्यक्ष ११, कार्यनिर्माणकर्त्ता १२, धर्माध्यक्ष १३, सभापालक १४, दंडपाल १५, क़िले का रक्षक १६, राष्ट्रांतपालक १७, अटवीपालक १८, और अपने पक्ष के पन्द्रह अंगों की अर्थात् मंत्री युवराज और पुरोहित को छोड़कर शेष पन्द्रह अंगों की खबर विना जाने हुए दूतों के द्वारा रखते हो या नहीं। तुम अपने शत्रुओं के नित्य उद्योगी और सावधान दूतों के विना जाने अपने शत्रुओं के मन की बात को जानते हो या नहीं। तुम्हारा पुरोहित शिक्षायुक्त अच्छे कुल में उत्पन्न, बहुत से शास्त्रों का जाननेवाला व दूसरे के गुण में दोष लगानेवाला शास्त्रचर्चा में कुशल, श्रौत, स्मार्त अग्नियों से युक्त विधि का जाननेवाला, बुद्धिमान्, सीधा और समय पर हुत और होष्यमाण वस्तु को बतानेवाला है या नहीं। ३२-४१। तुम्हारा ज्योतिषी सब ज्योतिष के अंगों में कुशल है या नहीं। तुमको ग्रहों की बाधा का हाल जताता रहता है या नहीं। तुम उत्तम कामों में, मुख्य-मुख्य मध्यम कामों में, मध्यम और नीच कामों में, नीच मनुष्यों को नियत करते हो या नहीं। श्रेष्ठ कर्मों के करने को तुम अपने छलहीन पिता और बाबाओं को नियत करते हो या नहीं। तुम अपनी प्रजा को बड़ा दंड देकर दुःख तो नहीं देते हो? हिंसाकर्म करके राज्य करने से याचकलोग इस प्रकार से तुम्हारा अपमान तो नहीं करते हैं, जैसे स्त्रियाँ उस पति का अपमान करती हैं, जो इच्छाचारी होता है। तुम्हारा सेनापति शूरवीर, बुद्धिमान् धैर्यवान्, युवा, पवित्र, कुलीन, प्रीतिमान् और दक्ष और सेना के मुख्य-मुख्य योद्धा सब युद्धों को जाननेवाले, निष्कपट, जय करनेवाले और तुमसे सत्कृत हैं या नहीं। तुम अपनी सेना आदि का मासिक समय पर दे देते हो या नहीं। कहीं ऐसा तो नहीं करते कि समय बहुत बीतजावे और वह लोग अपना मासिक न पावें, क्योंकि ऐसा करने

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

से सब चाकर बड़ा अनर्थ करते हैं। उनकी जीविका और कुछ नहीं होती है। तुम्हारे मंत्री तुमसे प्रीति रखकर समय पर युद्ध में तुम्हारे लिए अपने प्राणों के देने को उद्यत रहते हैं या नहीं।४२-५१। तुम ऐसा तो नहीं करते कि शास्त्र की आज्ञा को उल्लंघन करके अपनी इच्छा के अनुसार योद्धाओं को जो चाहे सो आज्ञा देते हो ? जो मनुष्य अपने पुरुषार्थ से कोई बड़ा काम करे उसको तुम आदरपूर्वक धन से सन्मानते हो या नहीं। ज्ञानी और विद्वानों को पारितोषिक आदि देते हो या नहीं। जो मनुष्य तुम्हारा काम करने को दुःख पा रहे हैं अथवा तुम्हारे काम में उनके प्राण जाते रहे हैं, उनके कुटुम्ब का पालन करते हो या नहीं। जो शत्रु भय से अथवा धनहीन होने से अथवा युद्ध में हार जाने के कारण से तुम्हारी शरण आता है उसका तुम पालन पुत्र की तरह करते हो या नहीं। सब पृथ्वी को माता पिता की तरह एक-सा और शंकारहित देखते हो या नहीं। अपने शत्रु को व्यसनी अर्थात् स्त्री, जुआ, अहेर, मद्य, नाच, गीत, वृथा फिरना, वाद्य, निन्दा और दिन में सोना आदि व्यसनों में लिप्त सुनकर और अपने को तीनों बल अर्थात् मंत्री, कोश और सेना से युक्त देखकर वेग से उस शत्रु को जीतने को जाते हो या नहीं। तुम अपने ज्योतिषियों के द्वारा अपने को हरानेवाले पाँच दैवी अर्थात् अग्नि १, जल २, व्याधि ३, दुर्भिक्ष ४, मरण ५ और पाँच मानुषी अर्थात् अयुक्त १, चौर २, शत्रु ३, राजवल्लभ ४, और राजा के लाभ से प्रजा को भय होना ५, व्यसनों को जानकर काल के अनुसार मंगलकृत्य करके यात्रा करते हो या नहीं। सेना का मासिक आगे से देकर शत्रु के मुख्य सेनापतियों को यथायोग्य विना जाने रत्न आदि देकर अपनी ओर फोड़ लेते हो या नहीं। आप जितेन्द्रिय होकर अजितेन्द्रिय शत्रु को जीतने का उपाय करते हो या नहीं। ५२-६१।

जब तुम शत्रु के ऊपर चढ़कर जाते हो तब साम १, दाम २, दंड ३,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

भेद ४ इनका अच्छी तरह बर्ताव करते हो या नहीं। राजा को चाहिये कि अपनी जड़ को पक्की करके दूसरे पर चढ़ाई करे। युद्ध में अच्छे प्रकार से पराक्रम करे, और विजय होने पर सबकी यथायोग्य रक्षा करे, तुम भी ऐसा करते हो या नहीं। तुम्हारी सेना में आठ अंग अर्थात् रथ १, हाथी २, घोड़ा ३, योद्धा ४, पत्ती ५, कर्मकारक ६, चोर ७, और दैशिक मुख्य ८, और चार प्रकार का बल अर्थात् मौल १, मैत्र २, भृत्य ३, और आटविक ४ है या नहीं। जिसमें वह सेनापतियों के लेजाने पर शत्रुओं का नाश करे। कोई राजा ऐसा नहीं है जो खेती काटने, खेती रखाने और दुर्भिक्ष के समय को छोड़कर और समय में युद्ध करके शत्रु को जीते। तुम्हारी भी यही वृत्ति है या नहीं। तुम्हारे अधिकारी लोग अपने देश की तरह शत्रु के देशों में भी रहकर परस्पर रक्षा और तुम्हारे अर्थ की साधना करते हैं या नहीं? तुम्हारे भक्ष्य, वस्त्र और चन्दन आदि पदार्थों की रक्षा विश्वासी मनुष्य करते हैं या नहीं? तुम्हारे खज़ाना, अन्न के रखने का स्थान, वाहन, हथियार और लाभस्थानों पर ऐसे मनुष्य नियत हैं या नहीं, जो तुम से प्रीति रखते हों और तुम्हारा कल्याण चाहते हों। तुम अपनी रक्षा महल के भीतर और बाहर रहनेवाले मनुष्यों से और उन मनुष्यों की रक्षा अपने पुत्र और मंत्रियों से और पुत्र की रक्षा मंत्री से और मंत्री की पुत्र से करते हो या नहीं। पान, द्यूत, क्रीड़ा और स्त्रियों के लिये जो तुम्हारा खर्च होता है वह तुम्हारे चाकर लोग तो नहीं करते हैं? तुम्हारा खर्च लाभ से आधा चौथाई अथवा तीसरे हिस्से में अच्छे प्रकार से हो जाता है या नहीं। ६२-७१। तुम दरिद्री, स्वजातीय, गुरु, वृद्ध, व्यापारी और शिल्पविद्या जाननेवालों पर धन धान्य देकर कृपा रखते हो या नहीं? आय व्यय अर्थात् जमा, खर्च के रखनेवाले गणक और लेखक अर्थात् हिसाब करनेवाले और मुतसद्दी लोग तुमको समय-समय पर हिसाब समझाते रहते हैं या नहीं? चतुर और हितकारी मनुष्यों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

को निरपराध अपने अधिकार से अलग तो नहीं कर देते हो? उत्तम, मध्यम और नीच पुरुषों के साथ यथायोग्य बर्ताव करते हो या नहीं? तुम्हारे काम करनेको ऐसे मनुष्य तो नियुक्त नहीं हैं, जो लोभी, चोर और तुमसे वैरभाव मानते हों? तुम्हारा देश लोभी और चोर कुमार्गियों अथवा तुमसे पीड़ा तो नहीं पाता? और तुम्हारे किसान दुष्ट तो नहीं हैं? तुम्हारे देश में तड़ाग जल पूर्ण बड़े बड़े और भाग युक्त स्थानों पर हैं या नहीं? तुम्हारे किसानों की आजीविका और बीज को कोई मनुष्य नष्ट तो नहीं करता है? तुम किसानों को अनुग्रह धन अर्थात् तकावी चौथाई बढ़ोतरी पर देते हो या नहीं। तुम्हारी वार्ता अर्थात् खेती १, वाणिज्य २, पशुपालन ३, और लेन देन में ब्याज का व्यवहार ४, अच्छे मनुष्यों के द्वारा रहती है या नहीं; क्योंकि वार्ता के प्रचार से बड़ी वृद्धि होती है। तुम्हारे सम्पूर्ण राज्य में एक एक स्थान पर पाँच पाँच मनुष्य जो शूरवीर और बुद्धिमान् हों क्षेम अर्थात् सुलह रखने के लिये नियत हैं या नहीं। ७२-८१। तुमने नगर की रक्षा के लिये गाँवों को नगर के समान और बस्तियों को गाँवों के समान कर दिया है या नहीं। वहाँ के रहनेवाले तुमको कर देते हैं या नहीं। तुम्हारे राज्य में शूरवीर लोग सेना को लेकर सब देश और नगरों में भ्रमण अर्थात् दौरा करते हैं या नहीं। चोर आदिकों को मारते हैं या नहीं। तुम स्त्रियों से मीठी बोली बोलकर उनकी रक्षा करते हो या नहीं। स्त्रियों की बातपर विश्वास तो नहीं करते हो? और कहीं उनसे गुप्त बात तो नहीं कह देते हो? ऐसा तो नहीं करते हो कि अपने देश में किसी विघ्न को सुनकर उसका विना उपाय किये हुए महल में सो रहते हो? रात्रि को दो पहर सोकर पिछले पहर में उठकर अपने हित की बात को विचार करते हो या नहीं। समय पर मंत्रियों सहित बाहर आकर सब मनुष्यों की फ़रियाद सुनते हो या नहीं। चलते और बैठते समय तुम्हारे चारों ओर रक्तवस्त्र अर्थात् लालवरदी पहिरे हुए और हाथ में नंगी तल-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वार लिये हुए मनुष्य तुम्हारी रक्षा के लिये रहते हैं या नहीं। जो मनुष्य
दंड देने के योग्य हैं, उनको तुम यमराज के समान दंड देते हो या
नहीं। अपने प्यारे कुप्यारे और पूज्यों के साथ यथायोग्य बर्ताव रखते
हो या नहीं। शरीर के दुःख को ओषधियों से और मन की बाधा को वृद्धों
की सेवा से दूर करते हो या नहीं। तुम्हारे वैद्य तुमसे प्रीति रखनेवाले
हितकारी और आठों प्रकार की चिकित्साओं में प्रवीण हैं या नहीं।
८२-६१। तुम अपने सम्मुख आये हुए अर्थी और याचक को प्रीतिपू-
र्वक देखते हो या नहीं। लोभ से आश्रित मनुष्यों की आजीविका का
तो बन्द नहीं कर देते हो और कहीं ऐसा तो नहीं है कि तुम्हारे देश
और पुरवासी तुम्हारे शत्रुओं के अधीन होकर तुमसे विरोध रखते हों
और तुम्हारा कोई शत्रु जो निर्बल और तुम्हारी सेना से पीड़ित होके
अब अच्छी सलाह और बहुत-सी सेना इकट्ठी करके तुमसे बलवान्
तो नहीं हो गया है। तुमसे प्रधान-प्रधान राजाओं से प्रीति है या नहीं।
जो राजा तुम्हारे स्वाधीन हैं वह तुम्हारे काम में अपने प्राण देने को
तय्यार हैं या नहीं। तुम गुणवान्, विद्वान् ब्राह्मण और साधुओं की पूजा
करते हो या नहीं। क्योंकि ये तुम्हारे कल्याण की बातें हैं और अपने पुरु-
षाओं की रीति पर अर्थ, काम और मोक्ष का प्रयत्न करत हो या नहीं। तुम
गुणवान् ब्राह्मणों को सुन्दर, स्वादिष्ठ भोजन कराके दक्षिणा देते हो या
नहीं। एकाग्रचित्त होकर वाजपेय और पुण्डरीक आदि यज्ञों के करने
में तुम्हारी बुद्धि रहती है या नहीं। अपने वृद्ध और बड़े स्वजातीय देवता
और ब्राह्मणों को देखकर नमस्कार करते हो या नहीं। ६२-१०१। तुम
हीन जातियों के शोक और उत्तम पुरुषों के क्रोध को दूर करते हो?
पुरोहित आदि मंगलहस्तजन तुम्हारे पास स्वस्त्ययन पढ़ते रहते हैं
या नहीं। तुम्हारी बुद्धि ऐसे ही कामों के करने में रहती है या नहीं
जो यश, काम, धर्म और अर्थ के देनेवाले होवें; क्योंकि जिस राजा की
ऐसी बुद्धि रहती है, उसके देश में पीड़ा कभी नहीं होती और वह

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

राजा पृथ्वी को जीतकर बड़ी वृद्धि को पाता है। किसी विशुद्धात्मा और श्रेष्ठ पुरुष को जिसका धन चोर ले गये हों, तुम्हारे मंत्री लोभ से मारते तो नहीं। और ऐसा तो नहीं होता है कि कोई चोर जो चोरी करने के कारण से पकड़ा गया हो, धन लेकर छोड़ दिया जाता हो। दुष्ट मनुष्यों के सिखलाने से तुम्हारे मंत्री दरिद्री और धनाढ्य मनुष्यों के अर्थों को मिथ्या उपचार से तो नहीं देखते। चौदह दोषों को छोड़ दिया है या नहीं अर्थात्—नास्तिकता १, झूँठ बोलना २, क्रोध ३, प्रमाद ४, दीर्घसूत्रता ५, स्वजातियों से न मिलना ६, आलस्य ७, क्षिप्त-चित्तता ८, अपने अर्थका अकेलेही अकेले विचार करना ९, ऐसे मनुष्यों के साथ सलाह करना जो अनर्थज्ञ हैं १०, जिस काम के करने का निश्चय कर लिया है उसको न करना ११, सलाह को गुप्त न रखना १२, अमंगल्य बातें करना १३, और विषय में लिप्त रहना १४, क्योंकि इन दोषों के रहने से बड़े बड़े राजा भी नाश हो जाते हैं और तुम्हारे धन वेद स्त्री और शास्त्र सफल हैं या नहीं। १०२-१११।

यह सुनकर युधिष्ठिर बोले—महाराज, स्त्री वेद धन और शास्त्र किस प्रकार से सफल होते हैं? नारदजी बोले—अग्निहोत्र से वेद, दान से धन, रति और पुत्रों से स्त्री और शील स्वभाव से शास्त्र सफल होते हैं। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! यह कहकर नारदजी ने फिर युधिष्ठिर से पूछा—जो व्यापारी लोग नफ़ा उठाने को बहुत दूर दूर से चीजें लाकर तुम्हारे राज्य में बेचते हैं, उनसे तुम कर लेते हो या नहीं। तुम्हारे नगर और देश में व्यापारियों से कर उगहने के लिये जो मनुष्य नियत हैं वह उस कर में से कुछ कपट तो नहीं कर लेते हैं? तुम धर्म और अर्थ के दिखानेवाले वृद्ध पुरुषों की बातें सुना करते हो या नहीं। तुम्हारे राज्य में प्रजालोग खेती में उत्पन्न हुए अन्न गौओं के दुग्ध और घृत में से भाग निकालकर धर्म के लिये ब्राह्मणों को देते हैं या नहीं। शिल्पविद्या जाननेवालों को चातुर्मास में औजार बनवाने के लिये कुछ द्रव्य देते

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हो या नहीं। जो कोई तुम्हारा उपकार करता है उसके उपकार को मानकर तुम सत्पुरुषों में उसका सत्कार करते हो या नहीं। तुमने घोड़ा, हाथी और रथों का विधिपूर्वक सेवन लक्षण और व्यवहार आचार्यों से सीखा है या नहीं। ११२-१२१। तुम्हारे घर में धनुर्वेद सूत्र, यन्त्र सूत्र और नगर सूत्र का अच्छी तरह से अभ्यास होता है या नहीं। तुम उन सब अस्त्र, ब्रह्मदण्ड और विषयोगों को जानते हो या नहीं, जिनसे शत्रुओं का नाश किया जाता है। तुम अपने देश को अग्नि, सर्प, रोग और राक्षसों से रक्षा करते हो या नहीं। अन्धे, गूँगे, लँगड़े, अंगहीन और अबान्धव मनुष्यों का पालन पिता के समान करते हो या नहीं। निद्रा, आलस्य, भय, क्रोध, तंद्रा और दीर्घसूत्रता इन छै दोषों को तुमने छोड़ा है या नहीं। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! युधिष्ठिर नारदजी के उक्त प्रश्नों को सुनकर दण्डवत् करके बड़ी नम्रता से बोले—महाराज, मैं आपके प्रश्नों के अनुसार आज से सब कर्म किया करूँगा। यह कहकर युधिष्ठिर ने वैसा ही बर्ताव किया और इस सागर-रूपी मेखला अर्थात् खाईं रखनेवाली पृथ्वी को विजय किया। इसके पीछे नारदजी ने फिर कहा—हे युधिष्ठिर! जो राजा उक्त रीति से चारों वर्णों की रक्षा करता है, वह इस संसार में बड़ा सुख भोगकर इंद्र की सलोकता को पाता है। १२२-१२६।

छठा अध्याय

युधिष्ठिर का नारदजी से यह पूछना कि आपने और भी कोई ऐसी सभा देखी है? और नारदजी का ब्रह्मा आदि की सभाओं का वर्णन करना

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! राजा युधिष्ठिर नारदजी की आज्ञा पाकर कहने लगे—महाराज, आपने सब बातें धर्म के अनुसार न्याय सहित ठीक ठीक कही हैं, मैं उनको अपनी शक्ति और बुद्धिबल के अनुसार करता हूँ। आपने जो-जो कर्म राजाओं के करने के योग्य

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वर्णन किये हैं, उन सबको भी मैंने किया है। हाँ, हमारे पुरुषा लोगों ने जो-जो कर्म किये हैं और जिस-जिस राह पर वे चले हैं, उन्हीं को हमारी भी करने की इच्छा रहती है। परन्तु वह हमसे हो नहीं सक्ते हैं। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! यह कहकर वह बुद्धिमान् युधिष्ठिर उन लोकचर अमितद्युति और देवर्षि नारदजी को विश्रान्त और स्वस्थता से बैठे हुए देखकर और यह जानकर कि यह मुहूर्त-भर से अधिक नहीं ठहर सक्ते हैं, उनसे पूछने लगे कि महाराज, आप इस विश्व के सब लोकों में जिनको ब्रह्माजी ने मनुष्यों को उत्पन्न करने के पहले निर्माण किया था, मन के वेग के समान घूमा करते हैं। भला यह तो कहिये कि आपने भी किसी लोक में ऐसी या इससे श्रेष्ठ सभा देखी है। यह सुनकर नारदजी अचंभे के साथ मधुर बोली से कहने लगे कि मनुष्य-लोक में ऐसी मणिजटित सभा हमने तो न देखी है, न आजतक सुनी है। परन्तु जो तुम सुनना चाहो, तो हम यमराज, वरुण, इन्द्र, कुबेर और ब्रह्माजी की सभाओं का हाल वर्णन करें। इनमें ब्रह्माजी की सभा तो अविद्या आदि क्लेशों से रहित, विश्वरूपिणी और दिव्य अर्थात् दैवी और अदिव्य अर्थात् मानुषी अभिप्रायों से युक्त है। देवता, पितृगण, साध्य, यज्ञ करनेवाले, शुद्ध अंतःकरणवाले और ऐसे मुनियों से जिन्होंने बड़ी दक्षिणा सहित वेदयज्ञ किये हैं, सेवित हैं। यह सुनकर युधिष्ठिर ने अपने भाइयों सहित नारदजी से हाथ जोड़कर कहा—महाराज, हम उक्त सब सभाओंका वृत्तांत विस्तारपूर्वक सुना चाहते हैं कि वह सभायें किन द्रव्यों से बनी हैं, उनकी लम्बाई चौड़ाई कितनी कितनी है और यह भी वर्णन कीजिये कि उन सभाओं में ब्रह्मा, इन्द्र, वरुण, कुबेर और यमराज की कौन-कौन सभासद् बैठकर सेवा करते हैं। यह सुनकर नारदजी बोले—अच्छा, हम उन सब सभाओं का वर्णन क्रमपूर्वक कहते हैं, आप सुनिये। १-१६।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सातवाँ अध्याय

नारदजी का युधिष्ठिर से इंद्र की सभा का वर्णन करना

नारदजी बोले—हे युधिष्ठिर! इन्द्र की सभा दिव्य, प्रकाशमान और कर्मों से जीती हुई है। उस सभा को विश्वकर्मारूप आप ही इन्द्र ने बनाया है। वह सभा सौ योजन लंबी, डेढ़ सौ योजन चौड़ी, और पाँच योजन ऊँची है और इच्छा के अनुसार जहाँ चाहे वहाँ जा सक्ती है। वहाँ बुढ़ापा, शोक और ग्लानि नहीं व्यापते हैं। वहाँ का स्थान निर्भय शान्त कल्याणकारी और रमणीक है। वहाँ दिव्य वृक्ष लगे हुए हैं। उस सभा में देवेन्द्र इंद्र अपनी शची नाम महेन्द्राणी शोभा और लक्ष्मी के साथ बहुत सुन्दर आसन पर विराजमान हैं। इन्द्र का शरीर लक्ष्मी, कीर्ति और प्रभायुक्त अनिर्देश्य है। वह वहाँ किरीट, मुकुट, लाल, बाजू-बन्द, निर्मल वस्त्र और चित्रमाला धारण किये हुए हैं। उस सभा में मरुत्, सब गृहमेधी, सिद्ध, देवर्षि, साध्यगण, देवगण और मरुद्गण सुंदर प्रकाशमान शरीर धारण किये हुए सुनहरी माला और सुन्दर सुन्दर वस्त्रों से अलंकृत होकर इन्द्र की उपासना करते हैं। १-८। संपूर्ण देवर्षि जो निष्पाप और अग्नि के समान प्रकाशमान हैं। सोम यज्ञ करनेवाले पराशर, पर्वत, सावर्णि, गालव, शंखलिखित, गौरशिरा, दुर्वासा, क्रोधन, श्येन, दीर्घतमा, पवित्रपाणि, सावर्णि, याज्ञवल्क्य, भालुक, उद्दालक, श्वेतकेतु, तांड्य, भांडायनि, हविष्मान्, गरिष्ठ, राजा हरिश्चन्द्र, हृद्य, उदरशांडिल्य, पराशर्य, कृषीबल, वातस्कंध, विशाख, विधाता, काल, करालदंत, त्वष्टा, विश्वकर्मा, तुम्बुरु, ऐसे मुनि जिनका जन्म योनि से हुआ है, वह ऋषि जिनका जन्म योनि से नहीं हुआ है, वायुभक्षी, सहदेव, सुनीथ, वाल्मीक, शमीक, सत्यवाक्, प्रचेता, मेधातिथि, वामदेव, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, मरुत, मरीचि, स्थाणु, गौतम, कक्षीवान्, तार्क्ष्य, वैश्वानर, कालक, वृक्षीय, आश्रव्य, हिरण्मय, संवर्त्त, देवहव्य, विष्वक्सेन, दिव्यजल, दिव्य ओषधी, श्रद्धा, मेधा,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सरस्वती, अर्थ, धर्म, काम, बिजली, जल बरसानेवाले मेघ, वायु, पूर्वदिशायज्ञवाह, सत्ताइसों अग्नि, सोमाग्नि, इन्द्राग्नि, मित्र, सविता, अर्यमा, भग, विश्वेदेवा, साध्यगण, बृहस्पति, शुक्र, विश्वावसु, चित्रसेन, सुमनु, तरुण। ६-२२। सब यज्ञ सब दक्षिणा ग्रहास्तोम और जितने यज्ञवाह मंत्र हैं, सब उस सभा में इन्द्र की उपासना करते हैं। अप्सरा, गन्धर्व, नाचने, गाने, हँसी, स्तुति और अनेक मंगल कर्म कर करके इन्द्र को क्रीड़ा कराया करते हैं। ब्रह्मर्षि, राजर्षि और देवर्षि उसके बल और वृत्रासुर को मारने के पराक्रम को कह कहकर इन्द्र को प्रसन्न किया करते हैं। वहाँपर सब उक्तदेवता और ऋषि अग्नि के समान प्रकाशमान विमानों में बैठ बैठकर माला आदि भूषणों से अलंकृत हो होकर आया जाया करते हैं। बृहस्पति, शुक्र और अन्य बहुत से महात्मा, यतव्रत, भृगुजी जो ब्रह्मा के समान हैं और सप्तऋषि वहाँ बने रहते हैं। चन्द्रमा के समान चमकते हुए विमानों में आते जाते हैं। हे युधिष्ठिर! मैंने इन्द्र की पुष्करमालिनी नाम सभा इस प्रकार की देखी है, अब यमराज की सभा का वर्णन करता हूँ। २३-३०।

आठवाँ अध्याय

नारदजी का युधिष्ठिर से यमराज की सभा का वृत्तान्त कहना

नारदजी बोले हे राजा युधिष्ठिर! अब हम तुमसे सूर्य के पुत्र यमराज की सभा का वर्णन करते हैं। उस सभा को विश्वकर्मा ने बनाया है। वह तेजोमय सौ सौ योजन लम्बी, चौड़ी है। प्रकाश उस सभा का सूर्य के तुल्य है। उसमें न बहुत गर्मी है, न सरदी। वहाँ जाने से मन बहुत प्रसन्न हो जाता है। उसमें रहने से न शोक होता है, न बुढ़ापा व्यापता है, भूख प्यास कुछ नहीं लगती है और वहाँ के रहनेवालों में दीनता, ग्लानि और प्रतिकूलता नहीं होती है। उस सभा में सब दैवी, मानुषी पदार्थ, भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चोष्य और पेय आदि बड़े बड़े स्वा-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दिष्ठ खाने के पदार्थ रहते हैं। ऐसे ऐसे वृक्ष लगे हुए हैं कि जिस फल की इच्छा होवे, वही फल उनमें उत्पन्न हो जाता है। ठंडा गरम दोनों प्रकार का जल वहाँ भरा रहता है। उस सभा में यमराज की उपासना बड़े बड़े ब्रह्मर्षि और राजर्षि किया करते हैं। ययाति, नहुष, पुरु, मान्धाता, राजा सोमक, त्रसद्दस्यु, कृतवीर्य, श्रुतश्रवा, अरिष्टनेमि, कृतवेग, कृतनिमि, प्रतर्दन, शिबि, मत्स्य, पृथुलाच्य, वृहद्रथ, वार्त, मरुत्, कुशिक, सांकाश्य, सांकृति, ध्रुव, चतुरश्व, सदस्योर्मि, कार्तवीर्य, भरत, सुरथ, सुनीथ, निशठ, नल, दिवोदास, सुमना, अंबरीष, भागीरथ, व्यश्वसदश्व, बध्यूश्व, पृथुवेग, पृथुश्रवा ।१-१२।, पृषदश्व, वसुमना, क्षुपरुषद्रु, वृषसेन, पुरुकुत्स, ध्वजीरथी, आर्ष्टिषेण, दिलीप, उशीनर, औशीनरि, पुंडरीक, शर्याति, शरभ, शुचि, अंगुरिष्ट, वेन, दुष्यंत, सृंजय, जय, भांगासुरि, सुनीथ, निषध, वहीनर, करंधम, वाह्लीक, सुद्युम्न, मधु, ऐल, राजा मरुत्, कपोतरोमा, तृणक, सहदेव, अर्जुन, व्यश्व, कृशाश्व, शशिबिंदु, दशरथ के पुत्र रामचन्द्र, लक्ष्मण, प्रतर्दन, अलर्क, कक्षसेन, गय, गौराश्व, जमदग्नि के पुत्र परशुराम, नाभाग, सगर, भूरिद्युम्न, महाश्व, पृथाश्व, जनक, राजा वैन्य, वारिसेन, पुरुजित्, जनमेजय, ब्रह्मदत्त, त्रिगर्त, राजा उपरिचर, इन्द्रद्युम्न, भीमजानु, गौरपृष्ठनल, गयपदम, मुचुकुंद, भूरिद्युम्न, प्रसेनजित्, अरिष्टनेमि, सुद्युम्न, पृथुलाश्व, अष्टक, मत्स्य नाम के सौ राजा, नीप नाम के सौ राजा, हय नाम के सौ राजा, धृतराष्ट्र नाम के सौ राजा, जनमेजय नाम के अस्सी राजा, ब्रह्मदत्त नाम के सौ राजा, इरिण नाम के सौ राजा, भीष्म नाम के दो सौ से अधिक राजा, भीम नाम के सौ राजा, प्रतिविंध्य नाम के सौ राजा, नाग नाम के सौ राजा, हय नाम के सौ राजा, पलाश नाम के सौ और कास और कुश आदि नामों के सौ २ दिव्य मनुष्य और तुम्हारे पिता राजा शांतनु, उषंगव, शतरथ, देवराज, जयद्रथ, वृषदर्भ, शशिबिंदु और अन्य सहस्रों राजा लोग जो अश्वमेध आदिक बड़े बड़े यज्ञ करके वहाँ गये हैं,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सब उसी सभा में यमराज की उपासना किया करते हैं। १३-२७। और अ-अगस्त्य, मतंग, काल, मृत्यु, यज्ञ करनेवाले, सिद्ध और योगी, शास्त्र जाननेवाले, पुण्यवान् राजर्षि लोग, अग्निष्वात्ता, फेनप, उष्माप, बर्हिषद, मूर्तिमान् पितृगण और कालचक्र अग्नि और वे मनुष्य जो पापकर्म करके और दक्षिणायन सूर्य में मरे हैं और काल के नयन में युक्त हैं, शिंशिप, पालाश, काश, कुशा और और सहस्रों सभासद् हैं। जिनके नाम असंख्य होने के कारण से वर्णन नहीं किये जा सक्के हैं। हे युधिष्ठिर! यह सभा भी बड़ी रम्य और चलायमान है। विश्वकर्मा ने बहुत दिनों तक तप करके इसको बनाया है। ज्वाला और प्रकाश उसमें स्वतः है। उस सभा में उग्र तपस्वी सुन्दर व्रती और सत्यवादी शांत संन्यासी पुण्य कर्मों के करनेवाले, शुद्ध मनुष्य दिव्य देह धारण करके उजले उजले वस्त्र, बाजूबन्द, जड़ाऊ माला और ज्वलित कुण्डल आदि से भूषित हो होकर जाते हैं। वहाँ गन्धर्व और अप्सराओं के गण नृत्य गीत हास्य और रहस्य किया करते हैं। सुगन्ध और दिव्यमाला चारों ओर रहती हैं। इस प्रकार से हे युधिष्ठिर! एक कोटि धर्मात्मा लोग यमराज की उपासना उस सभा में किया करते हैं। यह हमने यमराज की सभा का वृत्तान्त कहा अब वरुण की सभा का हाल भी सुनिये। २८-४१।

नवाँ अध्याय

नारदजी का युधिष्ठिर से वरुण की सभा का हाल वर्णन करना

नारदजी बोले—हे राजा युधिष्ठिर! वरुण की सभा बड़ी दिव्य प्रभा-युक्त और प्रमाण में यमराज की सभा के तुल्य है। इसको वरुण ने आप जल के बीच में बनाया है। उसमें अनेक अनेक प्रकार के रत्न जड़े हैं। फल फूल के सदैव देनेवाले वृक्ष लगाये हैं। यह सभा नीले, पीले, काले, सफेद और लाल अवतानों और मंजरी जाल धारी गुल्मों से बद्ध

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

है। उसमें सहस्रों पक्षी मधुर बोली बोलनेवाले और दिव्य स्वरूपधारी जहाँ तहाँ बैठे रहते हैं। उसके स्पर्शमात्र से सुख होता है। उसमें रहने से जाड़ा गरमी कुछ नहीं मालूम होते हैं। उस सभा का वर्ण श्वेत है। उसमें बहुत श्रेष्ठ श्रेष्ठ आसन बिछे हुए हैं। वरुण देवता उसमें माध्वी वरुणानी सहित उत्तम वस्त्र और आभरण पहिरे हुए बैठते हैं। वासुकि, तक्षक, ऐरावत, कृष्ण, लोहित, पद्म, चित्र, केवल, अश्वतर, धृतराष्ट्र, बलाहक, मणिमान, कुंडधार, कर्कोटक, धनंजय, अणिमान, कुण्डधार, प्रह्लाद, मूषिकादु, और जनमेजय आदि सब ध्वजा मण्डल और फन-धारी सर्प और अदिति के सब पुत्र सुन्दर माला और दिव्य सुगन्धित चन्दन लगाये हुए उस सभा में वरुण की उपासना करते हैं। विरोचन का पुत्र राजा बलि, नरक, पृथिवी, जय, संह्लाद, विप्रचित्त, कालखञ्ज नाम के दानव सुहनु, दुर्मुख, शंख, सुनाम, सुमति, घटोदर, महापार्श्व, क्रथनपिठर, विश्वरूप, स्वरूप, विरूप, महाशिरा, दशग्रीव, बाली, मेघ-वासा, दशावर, टिट्टिभ, विटभूत, संह्लाद, इन्द्रतापन और दैत्य जो कुण्डल माला और मुकुट धारण किये हुए हैं और बड़े शूरवीर मृत्यु से मुक्त बड़े व्रती और वरदान पाये हुए उस सभा में वरुण के समीप बैठ-कर उसकी सेवा किया करते हैं। चारों समुद्र और गङ्गा, कालिंदी, विदिशा, वेण्या, नर्मदा, वेगवाहिनी, विपासा, शतद्रू, चन्द्रभागा, सर-स्वती, इरावती, वितस्ता, सिंधु, देवनद, गोदावरी, कृष्णवेगा, कावेरी, किंपुना, विशल्या, वैतरणी, तृतीया, ज्येष्ठला, शोणभद्र, चर्मण्वती, पर्णाशा, महानदी, सरयू, वारवत्या, लांगली, सरिद्वरा, करतोया, आत्रेयी, लौहित्य नाम महानद, लंघती, गोमती, संध्या, त्रिस्रोतसी और और नदियाँ और तीर्थ और तालाब कूप झरना, तड़ाग, दिशा, पृथ्वी सब पहाड़ और सब जलचर जीव अपने अपने दिव्य स्वरूपों को धारण किये हुए वरुण की सभा में बैठकर वरुण की उपासना किया करते हैं। अप्सरा और गन्धर्वों के गण नाचते, गाते और वरुण की स्तुति किया

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

करते हैं। बड़े बड़े रत्न उत्पन्न करनेवाले पहाड़ अपना स्वरूप धारण किये हुए बड़ी मधुर कथा सुनाया करते हैं। और वरुण का सुनाभ नाम मंत्री, जिसका नाम गो और पुष्कर है, अपने पुत्र पौत्रों सहित वहाँ रहकर वरुण की उपासना करता है। हे युधिष्ठिर! हमने वरुण की सभा इस प्रकार की देखी है अब तुम कुबेर की सभा का वृत्तान्त सुनो। १-३०।

दसवाँ अध्याय

नारदजी का युधिष्ठिर से कुबेर की सभा का वृत्तांत वर्णन करना

नारदजी बोले हे राजा युधिष्ठिर! कुबेर की सभा सौ योजन लंबी और सत्तर योजन चौड़ी है। वर्ण उसका श्वेत है। कुबेर ने उस सभा को तपस्या से पाया है। उसकी प्रभा के सामने चन्द्रमा की प्रभा अस्त हो जाती है। उँचाई उस सभा की कैलास के शिखर के समान है। वह सभा गुह्यकों से रुह्यमान है और उसमें ऊँचे ऊँचे सुनहरे महल बने हुए हैं। चारों ओर रत्न जड़े हैं और नाना प्रकार की सुगन्ध वहाँ उड़ा करती है। वह सभा श्वेत बादलों के समान चलती हुई जान पड़ती है। बिजली के समान चमकते हुए दिव्य सुनहरे रंगों से अत्यन्त शोभायमान है। उस सभा में कुबेर दिव्य आभरण और वस्त्रों से अलंकृत होकर कुंडल धारण किये हुए सहस्रों स्त्रियों सहित बड़े दिव्य आसन पर, जिसमें पैर रखने का उपधान भी बना हुआ है, बैठा करते हैं। उस सभा में शीतल और मन को आनन्द देनेवाली वायु मंदार आदि सुगन्ध देनेवाले वनों और अलका नाम नलिनी और नंदन वन की सुगन्ध को लिये हुए चला करती है। वहाँ अप्सरा और गन्धर्वों के गण देवताओं सहित दिव्य तानों से गाया करते हैं। १-६।

मिश्रकेशी, रंभा, चित्रसेना, शुचिस्मिता, चारुनेत्रा, घृताची, मेनका, पुंजिकस्थला, विश्वाची, सहजन्या, प्रम्लोचा, उर्वशी, इरा, वर्गा,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सौरभेयी, समीची, बुद्बुदलता और, और सहस्रों अप्सरा और गंधर्वों के गण जो नाचने, गाने और बजाने में बड़े चतुर हैं वहाँ गाते बजाते रहते हैं। किन्नर, नर, मणिभद्र, श्वेतभद्र, गुह्यक, कशेरक, गंडकंडु, प्रद्योत, कुस्तुंबुरु, पिशाचा, गजकर्ण, विशालक, वराहकर्ण, ताम्रौष्ठ, फलकक्ष, फलोदक, हंसचूड़, शिखावर्त्त, हेमनेत्र, विभीषण, पुष्पानन, पिंगलक, शोणितोद, प्रवालक, वृक्षवास्य, निकेत, चीरवासा और लाखों गंधर्व, लक्ष्मी, नलकूबर, मैं और मुझसे और और पुरुष, ब्रह्मर्षि, देवर्षि और ऋष्यादि सब वहाँ रहकर कुबेर की उपासना किया करते हैं। श्रीउमापति महादेवजी जो उग्र धनुष और शूल के धारण करनेवाले और त्र्यंबक हैं, पार्वती और विकट क्षतजाक्ष, बड़ा शब्द करनेवाले, मेदा मांस के खानेवाले, भयानक और अस्त्र शस्त्र लिये हुए भूतों सहित उस अपने मित्र कुबेर की सभा में उसके समीप रहते हैं। १०-२४। विश्वावसु, हाहा, हूहू, तुंबुरु, पर्वत, शैलूष, चित्रसेन, गीतज्ञ, चित्ररथ और और सैकड़ों गंधर्वों के पति और विद्याधरों का राजा चक्रधर्मा अपने छोटे भाइयों सहित सैकड़ों किन्नर और भगदत्त आदि राजा, किंपुरुषों का ईश्वर, तुम और राक्षसों का राजा, महेन्द्र, गन्धमादन, हिमवान्, पारियात्र, विन्ध्य, कैलास, मंदिर, मलय, दर्दुर, महेन्द्र, गन्धमादन, इन्द्रकील, सुनाभ और सुमेरु आदि सम्पूर्ण पर्वत, यक्ष, गन्धर्व और निशाचरों सहित कुबेर का भाई विभीषण और नंदीश्वर महाकाल और शंकुकर्ण आदि दिव्य पार्षद और काष्ठ, कुटीमुख, दंती, विजया, तपोधिका, श्वेतवृषभ, राक्षस और पिशाच सदा कुबेर की उपासना किया करते हैं। वह कुबेर इन सब उक्त पार्षदों सहित देवदेवेश और त्रैलोक्यभावन महादेवजी के पास नित्य जाकर प्रणाम करता है। उनकी आज्ञा पाकर उनके निकट बैठ जाता है। कभी कभी शिवजी भी सखाभाव से कुबेर की सभा में जा बैठते हैं। और मुख्य मुख्य समुद्र शंख, पद्म आदि सब निधियों को लेकर कुबेर की उपासना किया करते हैं। हे युधिष्ठिर! हमने अन्तरिक्ष में

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कुबेर की इस प्रकार सभा देखी है। अब हम ब्रह्माजी की सभा का वृत्तान्त कहते हैं। २५-४०।

ग्यारहवाँ अध्याय

नारदजी का युधिष्ठिर से ब्रह्माजी की सभा का वृत्तान्त वर्णन करना

नारदजी बोले हे युधिष्ठिर! ब्रह्माजी की सभा का स्वरूप मुझसे वर्णन नहीं हो सकता। पहिले एक समय सतयुग में श्रीसूर्य देवता ब्रह्माजी की सभा को देखने के लिये स्वर्ग से पृथ्वी पर आये थे। उन्होंने उस सभा को मनुष्यरूप धरके पूरा पूरा देखा था। उसी समय मुझसे उसका वृत्तान्त कहा था। उसके दिव्य अप्रमेय और मानसी प्रभाव रखने के कारण से उसका वर्णन नहीं हो सकता। मैंने उस सभा के गुणों को सुन-कर उसके देखने की इच्छा से सूर्य से कहा—महाराज मैं भी ब्रह्माजी की सभा को देखना चाहता हूँ, ऐसा कौन सा तप और कर्म किया जावे जिससे मैं उस सभा को देखसकूँ। जो कोई दिव्य औषधी या और कोई पदार्थ ऐसा होवे जिससे मैं उसी सभा को देख सकूँ तो वह भी कहिए, यह सुनकर सूर्य ने मुझसे कहा—तू सावधान और शुद्ध अन्तःकरण से सहस्र वर्ष तक ब्रह्मव्रत कर। यह सुनकर मैंने उस महाव्रत को हिमालय की पृष्ठि पर आरम्भ किया। उसके समाप्त होने पर सूर्य मुझको आप अपने साथ ब्रह्माजी की सभा में लिवा ले गये। १-१०। मैंने उसको जाकर देखा, परन्तु मेरी सामर्थ्य उसके स्वरूप को वर्णन करने की नहीं है; क्योंकि वह सभा तो क्षण भर में ऐसा दूसरा स्वरूप धारण कर लेती है कि उसका भी वर्णन नहीं हो सकता। मैं उसके परिमाण और स्थान को भी नहीं कह सकता हूँ। मैंने तो ऐसा स्वरूप पहिले कभी नहीं देखा था। उस सभा में जानेवाले का मन सदैव प्रसन्न रहता है, शीत और गरमी वहाँ नहीं सताती है, भूख प्यास और ग्लानि भी नहीं होती है। वह सभा नाना प्रकार की अत्यन्त प्रकाशित मणियों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

की बनी है। उसमें खम्भे आदि कुछ नहीं हैं। वह नित्य है, उसका नाश कभी नहीं होता। वह सभा स्वयं प्रकाशित स्वर्ग के ऊपर है। उसकी प्रभा के सामने सूर्य चन्द्रमा और अग्नि का प्रकाश अस्त हो जाता है। उस सभा में सब सामर्थ्य रखनेवाले और अपनी दैवीमाया से सम्पूर्ण लोकों को धारण करनेवाले ब्रह्माजी बैठा करते हैं। सब प्रजापति अर्थात् दक्ष, प्रचेत, पुलह, मरीचि, कश्यप, भृगु, वशिष्ठ, गौतम, अंगिरा, पुलस्त्य, क्रतु, प्रह्लाद, कर्दम, अथर्वाङ्गिरस, बालखिल्य, मनअंतरिक्ष, विद्या, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, प्रकृति और सृष्टि के कारण अगस्त्य, मार्कण्डेय, जमदग्नि, भरद्वाज, संवर्त्त, च्यवन, दुर्वासा, ऋष्यशृंग, सनत्कुमार, असित, देवल, तत्त्वज्ञाता, जैगीषव्य, ऋषभ, जितशत्रु, महावीर्य, मणि। ११-२४। आयुर्वेद अपने आठों अंगों सहित देह धारण किये हुए, नक्षत्रों सहित चन्द्रमा, सूर्य, उश्वासों वायु, सम्पूर्ण यज्ञ, संकल्प और प्राण मूर्तिमान, अर्थ, धर्म, काम, हर्ष, द्वेष, तप, दम, गन्धर्व और अप्सराओं के गण, सत्ताईस नक्षत्र, लोकपाल इन्द्र, बृहस्पति, बुध, मंगल, शनैश्चर, राहु, और और ग्रह, मंत्र, रथन्तर, हरिमाण, वसुमान, सब देवता, मरुत्, विश्वकर्मा, अष्टवसु, सब पितृगण, सब हविष, ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, सब शास्त्र, इतिहास, उपवेद यथा आयुर्वेद, धनुर्वेद, वेदों के सब अंग, ग्रह, यज्ञ, सोम, सावित्री, दुर्गतरणी, सात प्रकार की वाणी अर्थात् प्रणव जिसमें अकार, उकार, मकार, अर्द्धमात्रा, नाद, बिंदु और शक्ति ये सात प्रकारें हैं, मेधा, धृति, श्रुति, प्रज्ञा, बुद्धि, यश, क्षमा, सामवेद की स्तुतियाँ, सब शास्त्र, नाना प्रकार की गाथा, तर्कयुक्त भाष्य ये सब देह धारण किये हुए नाना प्रकार के नाटक, काव्य और कथा आदिक जो बड़े मनुष्यों की मान्य हैं, क्षण, लव, मुहूर्त्त, दिन, रात्रि, अर्द्धमास, षट्ऋतु। २५-३७। प्रभव आदि साठि संवत्सर, पंचयुग, मानुष, पित्र्य, दैव और ब्राह्म चारों प्रकार के अहोरात्र, कालचक्र, जो

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नित्य अव्यय और अक्षय हैं, धर्मचक्र, अदिति, दिति, दमसुरसा, विनता, इरा, कालिका, सुरभी, सरमा, गोमती, प्राधा, कद्रू, रुद्राणी, लक्ष्मी, भद्रा, षष्ठी, परा, पृथ्वी, गांगता, ह्रीः, स्वाहा, कीर्ति, सुरादेवी, शची, पुष्टि, अरुंधती, संवृत्ति, आशा, नियति, सृष्टिदेवी, रति, बारह सूर्य, आठ वसु, ग्यारह रुद्र, उञ्चास मरुत्, दोनों अश्विनीकुमार, विश्वेदेवा, साध्यगण, मन के तुल्य वेग रखनेवाले पितर, पितरों के सात गण जिनमें चार मूर्तिमान, और तीन विना शरीर के हैं अर्थात् अग्निष्वात्ता, वैराजगार्हपत्य, सोमप, एकशृंग, चतुर्वेद और कला जो चारों वर्णों के मनुष्यों में पूजे जाते हैं, राक्षस, पिशाच, दानव, गुह्यक, नाग, सुपर्ण, पशु, स्थावर जंगम और और महाभूत पुरंदर, वरुण, कुबेर, यमराज, महादेवजी, महासेन, नारायण, देवर्षि, बालखिल्य, योनि से उत्पन्न हुए और विना योनि से उत्पन्न हुए, त्रिलोकी के सब जड़ चैतन्य, अट्ठासी सहस्र उर्ध्वरेता ऋषि, पचास प्रजावान् ऋषि और और सम्पूर्ण देवता आदि जो कुछ तीनों लोक में हैं, सब वहाँ आकर ब्रह्माजी की उपासना करते हैं। ब्रह्माजी को प्रणाम करके चले जाते हैं। ब्रह्माजी उन सब देवता, दैत्य, ब्राह्मण, यक्ष, सुपर्ण, कालेय, गन्धर्व और अप्सराओं से यथायोग्य मिलते हैं और उनको बैठाकर अर्थ संभोगों से युक्त करते हैं। वह सभा उन सब देवता और ब्रह्मर्षियों के बैठने और लक्ष्मी से दीप्यमान होने के कारण से अत्यन्त सुशोभित हो जाती है। हे युधिष्ठिर! हमने उस दुर्लभ सभा को देखा है। मनुष्यों में ऐसी ही दुर्लभ यह तुम्हारी सभा है। देवलोक में उस सभा से उत्तम और मनुष्यलोक में इस तुम्हारी सभा से उत्तम सभा नहीं है। ३८-६२।

बारहवाँ अध्याय

नारदजी का युधिष्ठिर से हरिश्चन्द्र राजा का वृत्तान्त कहना और राजसूय यज्ञ करने का उपदेश करना

उक्त कथा को सुनकर युधिष्ठिर ने कहा—हे नारदजी! आप वक्ताओं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

में सबसे श्रेष्ठ हैं। आपने यमराज की सभा में बहुधा राजा लोगों का रहना; वरुण की सभा में नाग, दैत्येन्द्र, नदियाँ और समुद्रों का होना; कुबेर की सभा में यक्ष, गुह्यक, राक्षस, गंधर्व, अप्सरा और शिवजी का बैठना; ब्रह्माजी की सभा में महर्षि, सब देवता और सब शास्त्रों का उपासना करना और इन्द्र की सभा में देवता, गंधर्व और नाना प्रकार के महर्षियों का सेवा करना वर्णन किया है। परंतु इन्द्र की सभा में राजर्षियों में से केवल एक राजा हरिश्चन्द्र का ही होना कहा है। इससे मैं पूछता हूँ कि उस राजा ने ऐसा क्या कर्म अथवा तप किया था, जिसके कारण से वह इन्द्र की बराबर बैठता है। यह भी कहिए कि आपने वहाँ मेरे पिता राजा पांडु को भी देखा था? या नहीं। यदि उससे आपका मिलाप हुआ हो तो यह कहिए कि आपसे उससे क्योंकर मिलाप हुआ और उसने कुछ कहला तो नहीं भेजा है? यह सुनकर नारदजी बोले—पहिले मैं तुमसे राजा हरिश्चन्द्र का माहात्म्य कहता हूँ। राजा हरिश्चन्द्र बड़ा बलवान् और सब राजाओं का सम्राट् था। सब राजा उसकी आज्ञा में रहते थे। १-११। उसने सुवर्ण से भूषित रथ पर चढ़ के शस्त्र के प्रताप से जंबू, कुश, शाक, क्रौंच, शाल्मलि, गोमेद और पुष्कर आदि सातों द्वीपों को जीता था। इस प्रकार से सब पृथ्वी को पहाड़ और वनों सहित जीतकर उसने राजसूय यज्ञ रचा था। उस यज्ञ में सब राजा लोग धन ले लेकर उसके पास आये थे। और ब्राह्मणों को भोजन कराने पर नियत किये गये थे। राजा हरिश्चन्द्र ने याचकों का उनके माँगने से पाँच पाँच गुणा धन दिया था। और अग्नि के विसर्जन होने पर उसने देश देश से आये हुए ब्राह्मणों को नाना प्रकार के धन दे देकर तृप्त किया था। उन ब्राह्मणों ने राजा के दिये हुए भोजन, द्रव्य और नाना प्रकार के रत्नों से तृप्त होकर राजा को आशीर्वाद दिये थे इस कारण से राजसूय यज्ञ करने पर राजा हरिश्चन्द्र दूसरे राजाओं से अधिक

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तेजस्वी और यशस्वी हो गया था। इसी कारण से वह सहस्रों स्वर्गवासी राजाओं से अधिक पदवी को पहुँचा है। राजसूय यज्ञ करने के पीछे राजा हरिश्चन्द्र ने साम्राज्य पदवी पाई।

इसी प्रकार से जो दूसरा राजा भी राजसूय यज्ञ करेगा, वह भी इन्द्र के साथ आनन्द करेगा और जो मनुष्य संग्राम में भागता नहीं है, वहीं सम्मुख लड़कर मर जाता है, उसको भी वही लोक प्राप्त होता है। जो अपने शरीर का तपस्या करके त्याग करते हैं, उनको भी वही गति मिलती है। १२-२२। हे युधिष्ठिर ! तुम्हारे पिता राजा पांडु भी हमको मिले थे। उन्होंने हमको नरलोक में आते हुए जानकर राजा हरिश्चन्द्र के विभव को देखकर हमसे कहा था कि जो आप नरलोक में जाइए तो हमारे पुत्र युधिष्ठिर से कहना कि वह सब पृथ्वी को जीत सकता है; क्योंकि भाई उसके आज्ञाकारी हैं, इससे वह भी राजसूय यज्ञ करे। उसके राजसूय यज्ञ करने से हमको भी राजा हरिश्चन्द्र के सदृश इन्द्रलोक में रहने को वास मिलेगा। यह सुनकर हमने राजा पांडु से कहा—बहुत श्रेष्ठ ऐसा ही होगा। जब हम नरलोक में जायँगे, तब युधिष्ठिर से राजसूय यज्ञ करने को कहेंगे। इससे हे युधिष्ठिर ! तू अपने पिता के कहने के अनुसार राजसूय यज्ञ कर। उसके करने से तुमको भी इन्द्रलोक मिलेगा और तुम वहाँ अपने पुरुषाओं के साथ रहोगे। यह यज्ञ बहुत बड़ा है। इसमें विघ्न भी बहुत से होते हैं और यज्ञ के नाश करनेवाले ब्रह्मराक्षस यज्ञ में छिद्र ढूँढ़ा करते हैं। क्षत्रीकुल का नाशक और पृथ्वी का क्षय करनेवाला युद्ध होता है। इसमें कोई कोई कारण ऐसा भी हो जाता है जो क्षय का करनेवाला होता है। इससे हे युधिष्ठिर ! तुम चारों वर्णों की रक्षा सावधानी से करते हो। विचारकर जैसा उचित जानो, वैसा करो। मुझको अब आज्ञा दो, मैं द्वारकापुरी जाना चाहता हूँ। परमेश्वर करे तुम ऐश्वर्यवान् हो, वृद्धि पाओ, आनन्द करो और ब्राह्मणों को धन से तृप्त करो। २३-३२। वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय !

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नारदजी पांडवों से बिदा होकर उन ऋषियों सहित जिनके साथ आये थे, चले गये। और युधिष्ठिर अपने भाइयों से राजसूय यज्ञ करने की सलाह करने लगा। ३३-३४।

तेरहवाँ अध्याय

युधिष्ठिर का धर्म से राज्यप्रबन्ध करना और अपने भाई, सम्बन्धी, ऋषि और श्रीकृष्णजी से राजसूय यज्ञ करने की सलाह करना

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय ! नारदजी के चले जाने पर राजा युधिष्ठिर श्वास ले लेकर राजसूय यज्ञ करने का विचार करने लगे। महात्मा राजर्षियों का माहात्म्य और यज्ञ द्वारा उनको अच्छे लोक मिलना, उन सबमें हरिश्चन्द्र का विशेष वैभव होना, सुनकर उसने भी यज्ञ करने की इच्छा की और उसी के विचार में वह बेचैन रहने लगे। इसके पीछे युधिष्ठिर ने अपने सभासद् राजा आदिकों का आदर सत्कार करके और उन सबसे आप भी पूज्यमान होकर राजसूय यज्ञ करने के लिये तैयारी करने का दृढ़ निश्चय किया। धर्म करने की चिंता करने में यह विचार करने लगे कि ऐसा क्या काम किया जावे जिससे सब लोकों का हित होवे। अपनी प्रजा पर अनुग्रह करके उनके हित की बात विचारकर कहने लगे जो वस्तु जिसके योग्य हो देना चाहिए; क्योंकि धर्म सबसे श्रेष्ठ है युधिष्ठिर के इस प्रकार से विचारने पर सब प्रजा उनको पिता के समान मानने लगी और युधिष्ठिर के परिग्रह, भीमसेन के प्रजापालन, अर्जुन के शत्रुनाश करने, सहदेव के धर्मशासन करने और नकुल के नम्रस्वभाव होने से उनका संपूर्ण देश कलहरहित निर्भय और धर्म में निरत हो गया। १-११। वर्षा सब राज्य में इच्छानुसार होने लगी, ब्याज की जीविका, यज्ञों की सामर्थ्य, गो की रक्षा और बनियों के व्यापार ने बड़ी वृद्धि पाई। राज्य का प्रबंध अच्छी तरह से होने लगा, दरिद्रियों से पिछले वर्ष का कर माँगना और

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

प्रजा को पीड़ा देना, प्रजापर कर बढ़ाना बंद कर दियागया। सब प्रजा रोग और अग्नि के भय से विमुक्त होगई। युधिष्ठिर के इस प्रकार से धर्मयुक्त होने पर चोर और ठगों की पीड़ा और परस्पर मृषाकर्म करना फिर सुनने में नहीं आया। राजालोग युधिष्ठिर को प्रसन्न करने उसके पास बैठने वार्षिक कर देने और संधिविग्रह आदि छै गुणों में व्यापारियों के तुल्य होगये। उसके राज्य की बड़ी वृद्धि हुई। राजा युधिष्ठिर जिस-जिस देश का अधिकारी होता था, उस-उस देश के राजाओं में पितृगुण अर्थात् नीति, शिक्षा और मातृगुण अर्थात् वात्सल्यता आदि गुण हो जाते थे। इस कारण से गोपाल से लेकर ब्राह्मणों तक सब प्रजा युधिष्ठिर से बड़ी प्रीति मानने लगी।

वैशंपायनजी बोले हे राजा जनमेजय! इस प्रकार से राज्यप्रबन्ध होने पर युधिष्ठिर ने एक दिन सब मंत्री और भाइयों से राजसूय यज्ञ करने की सलाह पूछी। उनकी बात को सुनकर मंत्रियों ने कहा—जिस प्रकार से राजसूय यज्ञ करके वरुण ने सब जल को जीतकर साम्राज्य पदवी पाई थी, उसी प्रकार से राजा भी सब पृथ्वी को जीतकर सम्राट् होने की इच्छा करता है। सो आपको भी आपके सब सुहृद् सम्राट् होने के योग्य जानकर राजसूय यज्ञ करने के योग्य समझते हैं। १२-२२। क्षत्रियों की सत्रसंपत्ति आपके वश में है। इससे आप उस यज्ञ को कीजिए। जिसमें ब्राह्मणलोग छः अग्नि स्थापन करते हैं। राजा प्रथम दर्वीहोम करके फिर सब यज्ञों को करता है। यज्ञ के अंत में सब को जीतने के कारण से राजा का अभिषेक होता है। आप समर्थ हैं हम सब आपके आज्ञाकारी हैं। आप तो थोड़े ही समय में यज्ञ कर सकेंगे। इसके पीछे सब सुहृदों ने भी युधिष्ठिर से कहा आप राजसूय यज्ञ कीजिए—उन सबकी बात को सुनकर युधिष्ठिर ने उस यज्ञ के करने का निश्चय विचार करने को अपने भाई मन्त्री और ऋत्विजों सहित धौम्य और व्यास आदि ऋषियों को बुलाकर मन्त्र करके उनसे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कहा—मेरी इच्छा सम्राट् के योग्य राजसूय यज्ञ करने की है। इससे आप लोगों से पूछता हूँ, मेरी वह इच्छा कैसे पूरी होवे। यह सुनकर उन सब ऋषियों ने कहा आप राजसूय यज्ञ करने के योग्य हैं, कीजिए। इसपर उसके मन्त्री और भाइयों ने भी सम्मत दिया परंतु युधिष्ठिर लोक के हित करने की इच्छा से अपनी सामर्थ्य, धन का संचय, देश और व्यतीत और आनेवाले काल को विचारने लगे। क्योंकि जो राजा इन बातों का पहिले से विचार करलेता है, उसको दुःख कभी नहीं होता। यह सोचकर कि अपने ही मन्त्र से यज्ञ करना ठीक नहीं है। उस काम के करने का निश्चय करने के लिये उसने श्रीकृष्णजी को सबसे श्रेष्ठ जगत्कर्त्ता जगन्मय जगदीश और योग्य जानकर उनका ध्यान किया। इन्द्रसेन नाम दूत को उनके बुलाने के लिये द्वारकापुरी को भेजा। वह दूत जल्दी चलनेवाले रथ में बैठ कर शीघ्र द्वारकापुरी में पहुँचा। श्रीकृष्णजी को वन्दना करके उन्हें युधिष्ठिर का संदेशा सुना दिया। श्रीकृष्णजी युधिष्ठिर को अपना दर्शनोत्सुक जान कर द्वारका से उस दूत को साथ लिये हुए चलदिये। अनेक देशों को नांघते हुए इन्द्रप्रस्थ में शीघ्र जा पहुँचे। युधिष्ठिर और भीमसेन ने उनका पूजन किया। अर्जुन नकुल और सहदेव ने उनकी उपासना गुरु के तुल्य की। जब वह अपनी फूफी कुन्ती से मिलकर कुछ देर विश्राम करचुके, तब युधिष्ठिर उनके पास जाकर अपना प्रयोजन कहने लगे। २३-४५। हे श्रीकृष्णजी ! मैं राजसूय यज्ञ करना चाहता हूँ, उसके करने के लिये जो-जो बातें होनी चाहिए उन सबको आप जानते हैं। अर्थात् राजसूय यज्ञ वही मनुष्य कर सकता है जो सब राजाओं का स्वामी हो और जिसकी सब जगह मानता हो, हमारे सुहृद्लोग तो हमको राजसूय यज्ञ करने के योग्य बताते हैं, परन्तु मैं अपनी योग्यता और अयोग्यता को आपके मुख से सुना चाहता हूं। क्योंकि ये सब लोग तो कोई संबंध, कोई स्वार्थ, कोई किसी प्रयो-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जन और कोई कोई स्नेह के कारण से दोष को नहीं बताते हैं। जैसे हम कहते हैं वैसा ही सब सम्मत दे देते हैं। आप इन सब बातों और काम क्रोध को छोड़कर जो बात श्रेष्ठ और करने के योग्य हो उसे कहिए। ४६-५१ ॥

चौदहवाँ अध्याय।

श्रीकृष्णजी का युधिष्ठिर से राजसूय यज्ञ करने के लिये पहिले जरासंध राजा के मारने का उपदेश करना

युधिष्ठिर की उक्त बात को सुनकर श्रीकृष्णजी बोले—तुम सब प्रकार से राजसूय यज्ञ करने के योग्य हो। सब बातों को जानते हो, परन्तु मैं कुछ विशेष कहता हूँ। जिस समय परशुरामजी ने क्षत्रियों का नाश किया था, उस समय जो क्षत्री भाग गये थे और परशुरामजी ने नहीं मारे थे, उनसे यह क्षत्रीवंश फिर से हुआ है। उनकी बढ़ोतरी होने पर सबने संकल्प किया था कि हम में से जो क्षत्री सबको जीत लेवे वह सम्राट् होवे। हम जानते हैं कि पुराने लोगों से तुमने भी यह सुना होगा। सब क्षत्री लोग इला और इक्ष्वाकु वंश की प्रकृति को मानते हैं। अर्थात् इला के पुत्र पुरूरवा आदि जिनसे चन्द्रवंश हुआ और इक्ष्वाकु के पुत्र नाभाग आदि जिनसे सूर्यवंश चला है। दोनों की यही प्रकृति थी, कि वे लोग सब राजाओं को जीत जीत कर साम्राज्य पदवी को पहुँचे थे। इन्हीं दोनों वंश के राजा लोग कुलीन गिने जाते हैं। और ययाति वंश में भोज की संतान अपने गुणों से यहाँ तक बढ़ी कि चारों दिशाओं में फैलगई। सब राजा उनकी उपासना करने लगे। परन्तु अब आजकल राजा जरासंध उन सब राजाओं की लक्ष्मी को तिरस्कार करके अपने बल से उन सबको जीतकर उनके मस्तक पर स्थित अर्थात् सम्राट् हो रहा है। वह सब प्रकार से समर्थ है। जगत् उसके वश में हो रहा है। वह सम्राट् होनेवाला है। देखो राजा शिशुपाल

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सब प्रकार से उसके अधीन रहकर उसका सेनापति हो गया है। शिष्य की तरह उसके पास बना रहता है। करूष, करभ और मेघवाहन देशों का राजा दंतवक्र जो मस्तकपर दिव्य मणि धारण करने से अद्भुतमणि भी विख्यात है, बड़ा पराक्रमी, और माया से लड़नेवाला है। हंस और डिंभक नामी दोनों बड़े पराक्रमी राजा जरासंध के अधीन रहते हैं। मुरु नामी यमनों का राजा जो पश्चिम दिशा में वरुण के समान बलवान् है। राजा भगदत्त जो राजा पांडु का मित्र है, हमसे पिता की तुल्य प्रीति मानता है। तथा पश्चिम दिशा में पृथ्वी के दक्षिण देश के अंत तक का राजा है दोनों जरासंध के वश में रहते हैं। तुमसे हित माननेवाला उस दिशा में केवल कुंतिभोज नाम तुम्हारा मामा है और चन्देरी देश का राजा पुरुषोत्तम जो अपनी दुर्बुद्धि से अपने को पुरुषोत्तम मानकर मेरे चिह्न अर्थात् शंख चक्र आदि को धारण करता है। राजा जरासंध का आज्ञाकारी है। मैंने पहले इसको मारते मारते छोड़ दिया था। बंग और पुंड्रदेशों का राजा पौंड्रक, वासुदेव और भोजवंशी राजा भीष्मक जो बड़ा बली और इन्द्र का मित्र है, और जिसने अपनी विद्या के बल से पांड्य, क्रथ और कैशिकदेशों को जय किया था। दोनों जरासंध के भक्त होरहे हैं। राजा भीष्मक का भाई आकृति नामी परशुरामजी के समान शूर-वीर था। अब वह अपने कुल की शूरता को भूलकर जरासंध के वश में हो रहा है। और हम सब अपने संबन्धियों से द्वेषभाव रखकर हमारा बुरा चीता करता है। यद्यपि हम सब सम्बन्धी उसका प्रिय करते रहते हैं। १-२४। राजा भोज के वंश के अठारह कुल जो उत्तर दिशा में राज्य करते थे। जरासन्ध के भय से अब पश्चिम दिशा को भाग गये हैं। शूरसेन, भद्रकार, बोध, शाल्व, पटच्चर, सुस्थल, सुकुट्ट, कुलिंद, कुन्ति, शाल्वायन, कोशल जो पांचाल और कुन्तिदेशों का अधिपति था। मत्स्य और सन्यस्तपाद आदि राजा भी उसीके डरसे उत्तर दिशा को छोड़ छोड़कर दक्षिण दिशा को चले गये हैं। पाचाल देश के सब

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

राजा लोग भी जरासंध के डरसे अपने अपने देशों को छोड़कर जहाँ तहाँ भाग गये हैं। राजा उग्रसेन के कंस नामी पुत्र ने यादवों को जीत कर अपना विवाह जरासन्ध की अस्ति और प्राप्ति नाम दोनों पुत्रियों से किया था। उसके बल से मोहित होकर वह अपने जातिवालों को महादुःख देने लगा था। उस समय उन स्वजातियों ने दुःखी होकर मेरा स्मरण किया और मैंने बलदेवजी को साथ लेकर कंस को उसके साथियों सहित मारकर जातिवालों की रक्षा की।

यह सुनकर जरासन्ध बड़ी भारी सेना लेकर हमारे ऊपर चढ़ आया। उसकी सेना को देखकर हम सब अपने मंत्री पुरोहित आदि से सलाह करने लगे। जो हम इसकी सेना को अस्त्र शस्त्रों से मारना चाहें तो तीनसौ वर्ष में भी न मार सकेंगे, क्योंकि वह हंस और डिम्भक नामी राजाओं से रक्षित है। जो देवताओं के समान बली योद्धा हैं और शस्त्र से अवध्य हैं। यह दोनों और तीसरा जरासन्ध मिल कर तीनों लोकों को जीत सक्ते हैं। यही सलाह और और राजा लोगों ने दी। इसके पीछे जरासन्ध की सेना में एक हंस नामी बड़ा राजा था। वह बलदेवजी के हाथ से मारा गया। उसको देखकर किसी ने डिम्भक से जाकर कह दिया कि हंस मारागया। वह यह सुनकर हंस के बिना अपना जीना व्यर्थ जान कर यमुना में डूबकर मरगया। पीछे यह हाल हंस को मालूम हुआ और वहभी डिम्भक के शोक में यमुना में डूबमरा। जरासंध उन दोनों का मरना सुनकर शून्यचित्त होकर लौट गया। २५-४४। उसके जानेपर हम लोग मथुराजी में सुखपूर्वक रहने लगे। इसके पीछे जरासन्ध की दोनों बेटियाँ अपने पिता के पास गईं और अपना दुःख उससे कहा। तुम हमारे पति के मारनेवाले को मारो। इस पर जरासन्ध बड़ी सेना लेकर हमपर चढ़ आया। सब लोग पहिले की सदृश विचार करके उसके भय के मारे सब भाई बंधु और कुटुम्ब सहित आवश्यक धन लेकर, मथुरा से पश्चिम देशा को चलेगये। वहाँ कुशस्थली नाम पुरी में रहने लगे।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हम लोगों ने वहाँ एक किला बनवालिया था। उस किले के कारण से वृष्णुवंशी योद्धाओं की तो क्या बात है। स्त्रियाँ भी लड़ सकती हैं। वहाँ हम लोग निर्भय होकर रहने लगे। उस पुरी के समीप रैवत नाम पहाड़ को देखकर जहाँ से जरासन्ध को जय करना कुछ बड़ा काम नहीं है। सब मधुपुरीवासी बहुत प्रसन्न हुए। वह पहाड़ इक्कीस योजन लम्बा और एक योजन ऊँचा है और उसमें तीन शिखर हैं। प्रति योजन के अंत में शत द्वार हैं। उन द्वारों पर अष्टादशावर नाम क्षत्री जो युद्ध में बड़े दुर्मद हैं रहकर रक्षा करते हैं। ४५-५५। हमारे कुल में सब भाई अठारह सहस्र हैं, आहुक के सौ पुत्र देवताओं के समान बलवान् हैं। और हम सात रथी हैं अर्थात् १, चारुदेष्ण २, चारुदेष्ण का भाई ३, चक्रदेय ४, सात्यकि ५, बलदेवजी ६, साम्ब ७, में इनके सिवाय कृतवर्मा, अनाधृष्टि, शमीक, समितिंजय, कंकु, शंकु और कुंति ये महारथी हैं। अंधक भोज के दो पुत्र और वृद्धिराजा आदि दश महारथी। जिनके शरीर वज्र के तुल्य बड़े पराक्रमी हैं। मध्यदेश की याद कर करके वृष्णियों में रहते हैं, इससे हे युधिष्ठिर! तुममें यद्यपि साम्राज्य पदवी के गुण मौजूद हैं। और क्षत्रियों के ऊपर सम्राट् होने के योग्य हो। परंतु मेरी मति से जब तक राजा जरासन्ध जीता है। तबतक तुम राजसूय यज्ञ नहीं कर सक्के हो। उसने सब राजाओं को जीतकर पहाड़ की कंदरा में बन्द करके इस प्रकार से रोक रक्खा है, जैसे सिंह बलवान् हाथियों के मार्ग को रोक देता है। उसने महादेवजी का तप करके सब राजाओं को सेना सहित जीत जीत कर बाँध रक्खा है। अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिये अब उन सब राजाओं को बलि देकर महादेवजी की पूजा करना चाहता है। इसी कारण से जरासन्ध के भय से हम भी भागकर द्वारकापुरी में जा बसे हैं। इससे जो तुम राजसूय यज्ञ किया चाहते हो तो पहिले जरासन्ध को मारकर सब राजाओं को छुटाने का यत्न करो। नहीं तो किसी उपाय से तुम राजसूय यज्ञ नहीं कर सकते हो। मेरी बुद्धि

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

में जो कुछ बात आई, सो मैं कहचुका। अब जैसी तुम्हारी सलाह हो वैसा करो। ५६-७०।

पन्द्रहवाँ अध्याय।

युधिष्ठिर भीमसेन और कृष्णचन्द्र का जरासन्ध को मारकर साम्राज्य पदवी पाने का विचार करना

श्रीकृष्णजी की उक्त बात को सुनकर युधिष्ठिर कहने लगे—आपके सिवाय संशय के दूर करनेवाले ऐसे वचन कौन कहे। सब राजा लोग अपने अपने घरों में अपने को श्रेष्ठ जानते हैं। परन्तु साम्राज्य पदवी को पहुँचना बड़ा कठिन है। जो मनुष्य दूसरे के प्रभाव को नहीं जानता है वह अपनी बड़ाई क्योंकर कर सकता है। यह पृथ्वी रत्नों से पूर्ण बहुत लंबी चौड़ी पड़ी हुई है। मनुष्य जब तक दूर नहीं जाता है तब तक उसको घर बैठे अपना कल्याण नहीं दीखता। मेरी समझ में यज्ञ करके पारमेष्ट्य पाना कठिन है। इससे शम अर्थात् इन्द्रियों को रोककर रहना अच्छा है। मेरा कल्याण इसी में होगा। हमारे कुल में उत्पन्न सभासद् मनुष्य यह जानते हैं कि इनमें से कोई न कोई श्रेष्ठ ही होगा। परन्तु अब तो हमको भी जरासन्ध से डर हो गया। क्योंकि हमको तो बड़ा बल भरोसा आपही का था, पर आप भी उसके डरके मारे द्वारकापुरी जा बसे हैं। अब आप यह बताइए कि आप बलदेवजी भीमसेन और अर्जुन के सिवाय और कौन ऐसा है, जो जरासन्ध को मारसके। हमको तो आपही की बात प्रमाण है। यह सुनकर भीमसेन बोले जो राजा विना उद्योग के किसी काम को करता है वह राजा बल्मीकि की तरह दुःख पाता है। उद्योग के साथ काम करनेवाला राजा दुर्बल भी बलवान् शत्रु को जीत लेता है। उद्योग में आलस्य न करके नीतिपूर्वक अपने इष्टकाम को सिद्ध करलेता है। श्रीकृष्णजी नीति में निपुण हैं, मुझमें बल मौजूद है, और अर्जुन जीतने के योग्य

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

है। इससे हम तीनों मिलकर जरासन्ध को इस प्रकार से साधन करेंगे, जैसे तीनों अग्नि यज्ञ की साधना करती हैं। यह सुनकर श्रीकृष्णजी बोले—बालक फल को विना देखे अपने अर्थ का आरंभ करदेता है। इससे बालक और स्वकार्यतत्पर मनुष्य बलवान् शत्रु का कुछ विचार नहीं करते हैं। हमने सुना है कि युवनाश्व का पुत्र राजा मान्धाता शत्रुओं को जीतकर, राजा भागीरथ प्रजा को पालन करके, कार्तवीर्य तप करके, राजा भरत अपने बल से, और मरुत अपनी ऋद्धि से, साम्राज्य पदवी को पहुँचे थे। सो हे युधिष्ठिर! तुममें ये पाँचो गुण विद्यमान हैं। तुमको साम्राज्य पद क्यों नहीं मिल सकता है? जरासन्ध ने सत्पुरुषों में सुकृत साध्य विचार करके धर्म अर्थ और नीति से साम्राज्य पदवी पाई है। उसके सम्मुख एक सौ कुल के राजा नहीं पड़ते हैं। उसने यह पदवी केवल अपने बल से ही पाई है। सब रत्नों के भोगनेवाले राजा लोग उसकी आज्ञा में रहते हैं। परन्तु वह अपनी अज्ञानता और अनीति के कारण से उस पदवी से भी तृप्त नहीं होता है। १-२०। बड़े बड़े मूर्द्धाभिषिक्त राजाओं को वह बल से पकड़कर अपने वश में करलेता है। हमने तो किसी मूर्द्धाभिषिक्त राजा को उससे जीतते नहीं देखा। दुर्बल राजा की किन में गिनती है। उसने बड़े बड़ों को अपने वश में किया है। जैसे बलि करनेवाले मनुष्य की प्रीति बलि के पशु से नहीं होती है। इसी प्रकार से और राजा लोग भी उससे प्रीति नहीं मानते हैं। क्षत्री वही सत्कृत होता है, जो शस्त्र से मारा जाता है। इसी कारण से हम जरासन्ध को मारना चाहते हैं। उसने छियासी राजाओं को पकड़कर कैद कर रक्खा है। जो चौदह और राजा रह गये हैं, उनको भी स्ववश करना चाहता है। उसकी इच्छा क्रूर कर्म करने की है। जो कोई उसके काम में विघ्न कर सकेगा उसको बड़ा यश संसार में मिलेगा। जो मनुष्य उसको जीतलेगा उसके साम्राज्य पदवी पाने में कुछ संशय नहीं है। २१-२६।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सोलहवाँ अध्याय

अर्जुन का जरासन्ध को मारकर साम्राज्य पदवी लेने का मंत्र देना

श्रीकृष्णजी की उक्त बात को सुनकर युधिष्ठिर बोले कि मैं अपने स्वार्थ के लिये तुम लोगों को वहाँ नहीं भेज सकता हूँ। भीमसेन और अर्जुन दोनों मेरे नेत्र हैं, और तुम मेरे मन हो। मन और नेत्रों के विना मनुष्य क्योंकर जी सकता है। राजा जरासन्ध बड़ा बलवान् है। उसको यमराज भी नहीं जीत सकता है। मुझको इस स्वार्थ में अनर्थ दिखाई देता है। इससे मेरे मन में यह विचार आता है कि राजसूययज्ञ करने की इच्छा को त्याग दूँ। क्योंकि यह इच्छा मुझको दुःख दे रही है। वैशंपायनजी बोले—हे राजा जनमेजय ! उसी समय अर्जुन श्रेष्ठ धनुष अक्षय तर्कस धारण किये हुए और कपिध्वज रथ पर सवार सभा में आया और युधिष्ठिर से कहने लगा देखो मुझे यह श्रेष्ठ धनुष आदि प्राप्त हो गये हैं। ये मनवांछित फल के देनेवाले और हरएक को मिलना कठिन है। श्रीकृष्णजी हमारी रक्षा करनेवाले मौजूद हैं। इसके सिवाय सब विद्वान् पुरुष हमारे श्रेष्ठकुल में उत्पन्न होने की सराहना करते हैं। इससे मुझको तो अपने कुल के अनुसार पराक्रम ही करना अच्छा जान पड़ता है। हाँ जो मनुष्य पराक्रमी कुल में उत्पन्न हो, परन्तु आप पराक्रमहीन हो, वह कुछ नहीं कर सकता। परन्तु जब पराक्रमी कुल में पराक्रमी ही होवे तब क्योंकर पराक्रम न करे। क्षत्रिय तो वही है जिसकी बुद्धि सदा शत्रुओं के विजय करने में रहे। ऐसा ही मनुष्य गुणहीन होने पर भी शत्रुओं को जीत सकता है। १-१०। जो मनुष्य सब गुणयुक्त होवे, परन्तु शत्रुओं को विजय करने का उत्साह उसको न होवे, तो उससे क्या हो सकता है? पराक्रम ऐसा पदार्थ है कि सब अवगुण उसमें छिप जाते हैं। निर्बल मनुष्य में दीनता होना और बलवान् में मोह होना दोनों नाशकारक हैं। जो राजा जय चाहे वह ऐसे मनुष्यों का त्याग कर दे। मुझे तो इससे श्रेष्ठ और कुछ नहीं दिखाई

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

देता कि हम यज्ञ के अर्थ जरासन्ध को मारकर सब राजाओं को छुटावें। जो काम करना ही है, उसको न करना बड़ा अवगुण है। आप हम लोगों में निस्संदेह गुण होने पर अपने को असमर्थ क्यों जानते हैं? मुझको युद्ध करके साम्राज्य पदवी लेना ऐसा ही सुलभ दीखता है, जैसा शम चाहनेवाले मुनियों को संन्यास लेना। ११-१७।

सत्रहवाँ अध्याय

श्रीकृष्णजी का युधिष्ठिर से जरासन्ध के उत्पन्न होने की कथा कहना

श्रीकृष्णजी बोले—हे युधिष्ठिर! भरतकुल में उत्पन्न और कुंती के पुत्र की जैसी बुद्धि होनी चाहिए, वैसी बुद्धि अर्जुन की है। हमने विना उमर के पूरी होने के रात या दिन में किसी को मरते नहीं देखा है। न हमने यह सुना है कि देवता लोग युद्ध करने नहीं जाते हैं। हर मनुष्य को इतना विचार तो आवश्यक है। शत्रु पर चढ़ाई विना नीति और अच्छे मंत्र के नहीं होती है। क्योंकि विना नीति और उपाय के युद्ध करने में बड़ी क्षय होती है। कदाचित् दोनों पक्षवाले समान होवें अर्थात् दोनों युद्ध करनेवाले उपाय और नीति से रहित होवें तो उसमें जय न होने का संशय रहता है। भला यह कैसे हो सकता है। हम लोग नीतिपूर्वक शत्रु के पास पहुँचकर उसको नाश न कर सकें। कहीं नदी के किनारे के वृक्ष भी नदी के पास पहुँचने पर बच सकते हैं? क्योंकि हमलोग अपने छिद्रोंको छुपाने और शत्रु के छिद्रों को जान लेनेवाले हैं। बुद्धिमान् मनुष्यों की यह मति है कि प्रबल शत्रु से व्यूहरचित सेना से न लड़ो, वही मति मुझको भी अच्छी जान पड़ती है। हमारी समझ में हम ऐसे स्वरूप से शत्रु के पास चलें जिससे वह हमको जानने न पावे। उसके पास पहुँचने पर अपने कार्य का साधन करें। जो घट घट में व्यापक अंतरात्मा सबमें है, उसकी क्षय कभी नहीं होती। इससे कदाचित् हम लोग जरासंध के हाथ से अपने

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

स्वजातियों के कार्य करने में मारे भी जावेंगे, तो भी हमारा बड़ा यश होगा तथा हमको स्वर्ग मिलेगा। १-१० । यह सुनकर युधिष्ठिर बोले—यह जरासंध कौन है? और इतना पराक्रम इसमें क्योंकर हुआ? जो अग्निसदृश आपको मिलने पर शलभ की समान भस्म नहीं हो गया।

यह सुनकर श्रीकृष्णजी बोले—जरासन्ध का बल और पराक्रम जिस के कारण से वह सबका अप्रिय करता है और सब उससे डरते हैं। इस कारण से है कि मगधदेश में बृहद्रथ नाम एक बड़ा युद्ध दर्पित और तीन अक्षौहिणी सेना रखनेवाला राजा था। वह स्वरूपवान्, श्रीमान्, अतुल पराक्रमी और दूसरे इन्द्र के तुल्य था। उसका तेज सूर्य, क्षमा पृथ्वी, क्रोध यम और धन कुबेर के समान था। ऐसा गुणवान् था कि उसके गुणों की प्रशंसा पृथ्वी पर इस प्रकार से फैल गई थी, जैसे सूर्य की किरणें सब स्थानों में व्याप्त हो जाती हैं। उसका विवाह राजा काशी की दो पुत्रियों से, जो बड़ी स्वरूपवान् और एक साथ उत्पन्न हुई थीं, हुआ था। उन दोनों से उसने यह प्रतिज्ञा की थी कि मैं तुम दोनों को एकसाँ बर्तूंगा। विवाह हो जाने पर वह उन दोनों के साथ प्रतिज्ञापूर्वक रमण करने लगा। उनके साथ इस प्रकार से शोभायमान हुआ, जैसे गंगा यमुना से समुद्र। उसी आनन्द में उस राजा का यौवन व्यतीत हो गया। परंतु पुत्र की कामना से बहुत यज्ञ आदि करने पर भी उसके वंश का चलानेवाला कोई पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ। ११-२१। एक समय काक्षीवत गौतम ऋषि का बड़ा तपस्वी चंडकौशिक नाम पुत्र अपनी इच्छा से उस राजा के नगर में आया और एक वृक्ष के नीचे उसने वास किया। उसके आने का हाल सुनकर राजा अपनी स्त्री सहित उसके पास गया। उसे रत्न आदिक देकर प्रसन्न किया। उस समय उस उत्तम ऋषि ने राजा से कहा मैं तुम्हारी सेवा से प्रसन्न हुआ। जो कुछ तुमको इच्छा हो, वर माँगो। यह सुनकर राजा बृहद्रथ अपनी स्त्री सहित आँखों में आँसू भरकर विनयपूर्वक बोला—महाराज मैं मंदभागी संतानहीन हूँ, आपसे क्या

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वर मागूँ ? मैं तो राज्य छोड़कर तपोवन में जानेवाला हूँ। मुझे वर अथवा राज्य लेकर क्या करना है ! श्रीकृष्णजी बोले हे युधिष्ठिर ! राजा की बात को सुनकर उन मुनीश्वर का चित्त क्षोभित हो गया। वह उसी वृक्ष के नीचे बैठ गये और ध्यान करने लगे। उसी समय उस वृक्ष पर से, जो आम का था, एक आम टूटकर मुनीश्वर की गोदी में आ पड़ा। उन्होंने उस फल को अभिमंत्रित करके राजा को देकर कहा— लो इस फल के प्रभाव से तुम्हारे पुत्र होगा। अब तुम अपने घर को जाओ। यह सुनकर राजा मुनीश्वर को दंडवत् करके घर को चला आया। २२-३१। अपने नियम के अनुसार उस फल को अपनी दोनों स्त्रियों को दे दिया। उन दोनों स्त्रियों ने आधा आधा करके उसे खा लिया और मुनीश्वर के वरदान के प्रभाव से उस फल के खाने पर उन दोनों स्त्रियों को गर्भ रहा। राजा यह देखकर बहुत प्रसन्न हुआ। जब गर्भ का समय पूरा हो गया, तब उन दोनों रानियों के आधे आधे शरीर रखनेवाले दो पुत्र हुए, अर्थात् एक शरीर की दो फाँकें, जिनमें एक नेत्र, एक भुजा, एक पैर और आधा पेट आदि अंग थे, उत्पन्न हुए। रानियाँ उनको देखकर काँपने लगीं। दोनों ने उन दोनों आधे आधे शरीरों को, जो सजीव थे, त्याग दिया। दाइयाँ उनको ढककर महल के बाहर ले गईं और कहीं डालकर चली आईं। इसके पीछे एक जरा नाम राक्षसी, जो मांस और लोहू खाया करती थी, वहाँ आई। उन दोनों आधे आधे शरीरों को उठाकर ले जाने की इच्छा की। दैवयोग से उसने उन दोनों आधे आधे शरीरों को एक में मिला दिया। मिलाते ही वे दोनों आधे आधे शरीर जुड़ गये और वह एक लड़का हो गया। यह देखकर वह राक्षसी अचरज में हुई और प्रसन्नता से उस बालक को उठाने लगी। परंतु वह बालक उससे न उठा। उस समय वह बालक अपने लाल हाथ की मुट्ठी बनाकर मुख में देकर बादल की गरज के समान रोने लगा। उस शब्द को सुनकर राजसभा से सब मनुष्य राजा सहित

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बाहर निकल आये और वे दोनों रानियाँ भी, जो पुत्र की ओर से निराश हो गई थीं जिनकी छातियाँ दूध से भरी हुई थीं, सहसा उठकर वहाँ चली गईं। उसकोदेखकर वह राक्षसी चिंतित हो कहने लगी—मैं इस राजा के राज्य में बसती हूँ और यह राजा पुत्र चाहता है। इससे मुझे यह बालक मारना उचित नहीं है। यह कहकर उस राक्षसी ने अपना स्वरूप स्त्री का रखकर उस बालक को उठा लिया और राजा के पास जाकर बोली—यह तेरा पुत्र है। ब्राह्मण की कृपा से यह तेरी दोनों रानियों के उत्पन्न हुआ था। परन्तु रानियों ने इसको त्याग दिया था। अब मैं इसे तुझे देती हूँ, तू इसको ले। यह सुनकर राजा की दोनों रानियों ने उस बालक को ले लिया और प्रेम सहित रोने लगीं। राजा ने प्रसन्न होकर उस राक्षसी से, जो मनुष्यरूप में थी, पूछा—तू कौन है जो मुझको तैंने यह पुत्र दिया ? मेरी समझ में तो तू कोई देवकन्या है। ३२-५२।

अठारहवाँ अध्याय

राजा बृहद्रथ से जरा नाम राक्षसी का अपना वृत्तान्त कहना और उसके द्वारा पुत्र मिलने के कारण से अपने पुत्र का नाम जरासंध रखना

राजा की उक्त बात को सुनकर वह राक्षसी बोली—मैं जरा नाम राक्षसी हूँ। मैं तेरे महल में बहुत दिनों से वास करती हूँ और सब मनुष्यों के घर में नित्य रहती हूँ। ब्रह्माजी ने मुझे गृहदेवी नाम से उत्पन्न किया है। जो कोई स्त्री पुत्र सहित मेरी मूर्त्ति भीत पर लिखकर भक्ति सहित पूजा करती है, उसके कुल की वृद्धि होती है। जो ऐसा नहीं करती है, उसका कुल क्षय हो जाता है। हे राजन् ! तेरे घर में मेरी पूजा बहुत अच्छी तरह से हुआ की है, मेरे स्वरूप को भीत पर पुत्रोंसहित लिख लिखकर गंध, पुष्प, धूप और नैवेद्य से तेरी रानियाँ पूजा किया करती थीं, इससे तेरा उपकार करने को मुझे नित्य चिंता रहती थी। सो आज तेरे इस पुत्र के शरीर की दोनों फाँकों को यहाँ पड़ा हुआ देखकर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

मैंने उठा लिया और दोनों को मिलाने पर दैवइच्छा से यह लड़का हो गया। मैं तो इसमें केवल हेतुमात्र ही हूँ। मुझे मेरुपर्वत को भक्षण करने की भी सामर्थ्य है। तेरे इस पुत्र को मुझे मारना कितनी बड़ी बात है। परन्तु मैंने तेरी गृहपूजा से प्रसन्न होकर तुझे तेरा पुत्र दिया है। १-८। श्रीकृष्णजी बोले—हे राजा युधिष्ठिर! वह राक्षसी उक्त प्रकार से कहकर वहीं अंतर्द्धान हो गई। राजा उस पुत्र को लेकर अपने घर को आया और उसके जातकर्म आदि संस्कार कराये। अपने देश में उस राक्षसी की पूजा का बड़ा भारी उत्सव आरम्भ कराया और जरा राक्षसी के द्वारा मिलने के कारण से उस पुत्र का नाम जरासंध रक्खा। वह शुक्लपक्ष के चन्द्रमा के समान बढ़कर बड़ा तेजस्वी हुआ। ६-१२।

उन्नीसवाँ अध्याय

चंडकौशिक मुनि का मगधदेश में जाना, राजा बृहद्रथ का उनकी पूजा करना, मुनीश्वर का जरासंध को आशीर्वाद देना और बृहद्रथ का जरासन्ध को राज्य देकर तपस्या को चला जाना

श्रीकृष्णजी बोले कि हे युधिष्ठिर! थोड़े दिनोंमें चंडकौशिक मुनि फिर मगधदेश में आये। उनके आने का हाल सुनकर राजा बृहद्रथ अपने मंत्री, पुत्र और रानियों सहित उनके पास गया, और पाद्य, अर्घ्य आदि से उनका पूजन करके अपना राज्य पुत्र सहित निवेदन किया। वह ऋषि राजा की पूजा को अङ्गीकार करके प्रसन्नतापूर्वक बोले—हमको दिव्य दृष्टि से तुम्हारे पुत्र की सब व्यवस्था मालूम हो गई थी। यह तुम्हारा पुत्र बड़ा पराक्रमी और स्वरूपवान् होगा। इसके घर में लक्ष्मी का बड़ा प्रकाश होगा। इसके पराक्रम के आगे सब राजा लोग इस प्रकार से अस्त हो जायँगे, जैसे गरुड़ के सामने पक्षी हो जाते हैं। इसके सब शत्रु नाश होजायँगे, जैसे नदी का वेग पहाड़ को कुछ पीड़ा नहीं दे सकता। ऐसे ही देवताओं के भी छोड़े हुए अस्त्रों से इसको पीड़ा न होगी।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जितने अभिषेकित राजा लोग हैं, सबका यह मुकुटमणि होगा। उन लोगों का तेज इसके सामने ऐसे अस्त हो जायगा, जैसे सूर्य के उदय होने पर सब तारागण क्षीण पड़ जाते हैं। जैसे शलभ अग्नि में नाश हो जाते हैं, उसी प्रकार अनेक राजा लोग सेना सहित इसके सम्मुख आ आकर नाश हो जायँगे। सब राजाओं की लक्ष्मी ढुल ढुल के इस प्रकार इसके घर में आवेगी, जैसे वर्षाऋतु में सब नदियों का पानी समुद्र में चला जाता है। जैसे पृथ्वी सब खेती और शुभाशुभ को धारण कर रही है, उसी प्रकार से यह चारों वर्ण के मनुष्यों का पालन करेगा। सब राजा लोग इसके वश में इस प्रकार से रहेंगे, जैसे वायु के वश में प्राण रहते हैं और इसको महादेवजी के दर्शन होंगे। १-१५। इस प्रकार से कहकर उन मुनीश्वर ने राजा को बिदा किया। राजा सब साथियों सहित अपने घर को चला आया। थोड़े दिनों पीछे जरासंध को राज्य देकर अपनी दोनों रानियों सहित तपोवन को चला गया।

जरासंध ने राज्याभिषेक पाकर अपने पराक्रम से सब राजाओं को जीतकर अपने वश में कर लिया। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! राजा बृहद्रथ बहुत दिनों पीछे तपोवन में अपनी दोनों रानियों सहित मरकर स्वर्गवासी हुआ। जरासंध ने कौशिक मुनि के कहने के अनुसार सब राज्य का पालन किया। जब कंस श्रीकृष्णजी के हाथ से मारा गया, तब उसका वैर श्रीकृष्णजी के सा। हो गया और उसने अपनी गदा को सौ बार घुमाकर व्रज के ऊपर फेंकी। वह गदा मथुराजी में, जो वहाँ से एक कम सौ योजन पर है, आकर पड़ी। पुरवासियों ने उसको लेकर श्रीकृष्णजी को निवेदन किया और वह स्थान मथुरा के निकट, जहाँ वह गदा आकर पड़ी थी, गदावसान नाम से विख्यात हुआ था। १६-२५। जरासंध के हंस और डिम्भक नाम दो सेनापति, जिनकी मृत्यु शस्त्र से नहीं होती थी, दोनों मंत्र और नीतिशास्त्र के परमज्ञाता थे। उनका हाल मैं पहिले तुमसे कह चुका हूँ। वे दोनों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तीसरे जरासंध सहित तीनों लोकों को जीत सकते थे। इसी बात को जान कर कुकुर, अंधक और वृष्णिवंशी क्षत्रियों ने यह विचार किया था कि जरासंध से नहीं लड़ना चाहिए। २६-२८।

बीसवाँ अध्याय

श्रीकृष्णजी का अर्जुन और भीमसेन को साथ लेकर जरासन्ध को मारने के लिये मगधदेश को जाना

श्रीकृष्णजी बोले—हे राजा युधिष्ठिर ! अब हंस और डिंभक दोनों यमुना में डूबकर मर गये। कंस अपने सब साथियों सहित मारा गया। केवल यह जरासंध रह गया है, सो इसके मरने का भी समय अब आन पहुँचा है। युद्ध में तो इसको सब असुर और देवता भी नहीं जीत सकते हैं। परन्तु इसकी मृत्यु मल्लयुद्ध से होगी, सो हम ऐसाही उपाय करेंगे। हम नीति अच्छी तरह जानते हैं। जैसा भीमसेन बली है, वैसा ही हम दोनों की रक्षा करनेवाला अर्जुन है। हम तीनों मिलकर जरासंध के वध का साधन इस प्रकार से करेंगे, जैसे तीनों अग्नि यज्ञ का साधन करती हैं। अकेले में मिलने पर और युद्ध माँगने पर वह निस्संदेह बल के गर्व से हमको विना सेना के देखकर भीमसेन से मल्लयुद्ध करेगा। भीमसेन उसको इस प्रकार से मार सकता है, जैसे मृत्यु बड़े लोक को नाश कर देती है। इससे हे युधिष्ठिर ! जो तुमको मेरा विश्वास है तो अपने दोनों भाइयों को मेरे साथ कर दो। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय ! श्रीकृष्णजी की उक्त बात को सुनकर युधिष्ठिर ने अर्जुन और भीमसेन को प्रसन्नचित्त देखकर कहा—हे अच्युत ! आप ऐसी बात न कहिए। आप तो पांडवों के नाथ हैं और हम सब आपही के आश्रित हैं। अब आप शीघ्र ऐसा यत्न कीजिए जिससे जरासंध मारा जाय। राजा लोग कारागार से छूटें और हमारा राजसूय यज्ञ सिद्ध होवे। तुम तीनों के विना मुझको अपना जीना रोग जान पड़ता है। १-१३।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जहाँ आप हैं वहाँ अर्जुन है। और जहाँ अर्जुन है वहीं आप हैं। और भीमसेन बड़ा बलवान् है। तुम दोनों के साथ रहकर ऐसा कौन सा काम है जिसको भीमसेन नहीं कर सकता है। हम जानते हैं कि सब उत्तम कार्य बहुत सी आज्ञाकारी सेना से सिद्ध हो जाते हैं। परन्तु कोई चतुर मनुष्य उसको शिक्षा करने को चाहिए क्योंकि सेना को अन्धा और जड़रूप कहते हैं। चतुर मनुष्य उसको इस प्रकार से ले जाकर अपना अर्थ सिद्ध करते हैं जैसे धीमर लोग जल को उसी राह से ले जाते हैं जिधर निचान अथवा छिद्र होता है। इसी प्रकार हे श्रीकृष्णजी! आप नीतिविधान में चतुर हैं। हम लोग आपके पीछे-पीछे उसी प्रकार से चलेंगे जिस प्रकार से आप आज्ञा करेंगे। अपने सब कामों में आप ही को आगे रक्खेंगे। क्योंकि आप नीति, बुद्धि और उपाय के बल से युक्त हैं। सो आगे आगे आप चलिए। आपके पीछे अर्जुन और अर्जुन के पीछे भीमसेन चलेगा। इस प्रकार नीति, जय और बल तीनों के एक जगह होने पर हमारा काम सिद्ध होगा।

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! इस प्रकार से सब भाई सम्मत करके भीमसेन और अर्जुन श्रीकृष्णजी के साथ साथ मगधदेश की ओर चल दिये। तीनों ने ब्राह्मणों के से वस्त्र पहनकर अपना वेष बदल लिया। अपने जातिवालों के काम को विचारकर क्रोध के कारण से तीनों का शरीर सूर्य चन्द्रमा और अग्नि के समान झलकने लगा। १४-२३। मनुष्यों ने उन दोनों एक रूप कृष्ण और अर्जुन को जो धर्म और काम के कार्यों में प्रवृत्त होनेवाले थे, भीमसेन के आगे आगे जाते हुए देखकर जरासन्ध को मरा हुआ समझ लिया। वे तीनों कुरुजांगल देश से चलकर पद्म सरोवर और कालकूट पर्वत और गण्डकी, महाशोण, सदानीरा, एक पर्वत की नदियाँ सरयू, कोशला, मिथिला, माला और चर्मण्वती आदि नदियों पर होते हुए गंगा और शोणभद्र नदियों को उतरकर पूर्व दिशा की ओर चले गये। मगधपुर के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

समीप जा पहुँचे और वहाँ गोरथ पर्वत पर चढ़कर उस नगर को देखने लगे जो बहुत सी गाय और नाना वृक्षों से सुशोभित था। २४–३०।

इक्कीसवाँ अध्याय

श्रीकृष्णजी का अर्जुन और भीमसेन सहित मगधपुर में पहुँचना
और जरासन्ध से प्रश्नोत्तर होना

श्रीकृष्णजी कहने लगे देखो अर्जुन यहाँ से मगधदेश की सेना का रहने का स्थान कैसा प्रकाशित दीख रहा है। यहाँपर जल और पशु सदैव बने रहते हैं। यह देश बैहार, वृषभ, ऋषि और चैत्यक नाम पाँच पहाड़ों से जो एक दूसरे से मिले हुए और ऊँचे ऊँचे शिखर और सुन्दर वृक्षों से शोभित होरहे हैं, घिरा हुआ है। इन पहाड़ों पर पुष्पित और सुगंधित वृक्षों के वन लगे हुए हैं। यहीं पर गौतम ऋषि से एक शूद्रा स्त्री और राजा उशीनर की पुत्री के काक्षीवान् आदि पुत्र उत्पन्न हुए थे। गौतम के अनुग्रह से यहाँ के रहनेवाले क्षत्रिय लोग मनुवंशी कहलाते हैं। पहिले समय में गौतम के घर में अंग और बंग देशों के राजा भी आकर रहे थे। जो ये सामने पिप्पल और लोध्र वृक्षों के वनों की पंक्तियाँ दिखाई देती हैं, वे गौतम ऋषि ही के स्थान के निकट हैं। इसी स्थानपर अर्बुद, शक्रवापी, स्वस्तिक, मणिनाग और कौशिक नागों के रहने के स्थान हैं। वे सदैव यहाँ रक्षा किया करते हैं। मनुजी ने इस देश को ऐसा बनाया है कि यहाँ सब कालों में वर्षा रहती है। १-१०। जरासन्ध ऐसे रचित और रमणीक नगर के पाने ही के कारण से अपने को अर्थ सिद्ध मानता है। सो हम मिलकर उसके इस घमंड को तोड़डालेंगे। वैशंपायनजी बोले हे राजा जनमेजय! इस प्रकार से कहकर श्रीकृष्णजी वहाँ से भीमसेन और अर्जुन के साथ साथ मगधपुर की ओर चलदिये। वहाँ पहुँचकर वहाँ के प्रसन्नचित्त और पुष्ट मनुष्यों को जो उत्सव के कारण से अच्छे अच्छे वसन और आभरण पहिरे हुए थे।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

देखते हुए पहाड़ों के समान ऊँचे नगर के द्वारपर जो बृहद्रथवंशी मनुष्य और पुरवासियों से शोभित होरहा था। पहुँचकर मगधदेश के रुचिर यज्ञस्थान के समीप जा पहुँचे। वहाँ के कँगूरे गिरा दिये। उसी स्थान पर राजा बृहद्रथ ने वृषासुर दैत्य को मारकर उसके चमड़े की तीन भेरियाँ बनवाकर रखवा दी थीं पुष्प आदि से अलंकृत करके बजाई जाती थीं। इन तीनों वीरों ने उनको फोड़ वहाँ से चैत्यप्रकार अर्थात् यज्ञस्थान के परकोटे के द्वार की ओर चल दिये। वहाँ पर जो एक बड़ा मोटा और जरासन्ध से पूजित शिखर था, उसको अपनी भुजाओं के बल से गिरा दिया। जरासन्ध के देखने की इच्छा से उसके नगर में प्रवेश किया। ११-२१। इसी अवसर में ब्राह्मणों ने बहुत से दुष्ट शकुन देखकर राजा जरासन्ध को भी दिखलाये। पुरोहितों ने उसको हाथी पर चढ़ा कर उससे चारों ओर अग्नि फिराकर फेंक दी और राजा ने उन दुष्ट शकुनों की शांति के लिये दीक्षित होकर उपवास किया। उसी समय वे तीनों वीर जरासन्ध के नगर को भक्ष्य माला आदि संपूर्ण पदार्थों से समृद्धिमान् देखकर नगर के बाजार में से माला और सुन्दर भूषण, वसन और कुण्डल, बरजोरी ले कर उनसे अपने को अलंकृत करके, जरासन्ध को मारने की इच्छा से, विना शस्त्र लिये हुए, जरासन्ध की सभा में इस प्रकार से पहुँचे, जैसे हिमालय पहाड़ के सिंह गोशालाओं को ढूँढ़ते हुए जाते हैं। उनकी भुजा जो तालवृक्ष के समान लम्बी और चन्दन अगरु आदि से चर्चित थीं, हाथियों के से ऊँचे कन्धे और चौड़ी छाती को देख देख कर सब मगधपुरवासी मनुष्य आश्चर्य करने लगे और वे तीनों व्यथारहित तीनों कक्षाओं को नांघकर अहंकार सहित जरासन्ध के पास पहुँचे। जरासन्ध ने उन्हें पाद्य अर्घ्य से पूजा और गऊ भेंट करने के योग्य देखकर उनका सत्कार किया। २२-३१। तुम्हारा आना शुभ हो यह कहकर उनसे कुशल प्रश्न पूछी। तब अर्जुन और भीमसेन ने कुछ उत्तर न दिया, किंतु चुपके होरहे। उस

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

समय श्रीकृष्णजी बोले—ये दोनों नियम में स्थित हैं। आधीरात तक किसी से नहीं बोलते हैं। आधीरात के पीछे तुम से बातचीत करेंगे। यह सुनकर जरासन्ध उन तीनों को यज्ञशाला में टिका कर राजमन्दिर को चलागया। आधीरात के बीतने पर उन तीनों वीरों के पास आया और उनके अपूर्व वेष को देखकर उनके पास विस्मित होकर बैठगया। उसका यह नियम था कि स्नातक ब्राह्मणों से आधी-रात को भी मिलता है। यह पृथ्वीपर विख्यात होगया था। वे तीनों वीर राजा जरासन्ध को अपने समीप आया हुआ देखकर बोले—तेरा कल्याण और कुशल हो! यह सुनकर जरासन्ध ने उन तीनों छलवेष-धारियों को बैठने की आज्ञा दी। वे चारों इस प्रकार बैठगये जैसे बड़े यज्ञ में लक्ष्मी सहित तीनों अग्नि स्थापित होती हैं। ३२—४१।

बैठने के पीछे जरासन्ध ने उन तीनों से कहा—तुम कहते हो कि हम स्नातक ब्राह्मण हैं। स्नातक ब्राह्मण विना समावर्तन कर्म किये माला और चन्दन धारण नहीं करते हैं। ऐसी कोई बात संसार में नहीं है जो मैं न जानता हूँ। इससे आप सत्य सत्य कहिए कि आप कौन हैं? आपका वेष ब्राह्मणों का सा है? परन्तु आप क्षत्रियों का सा तेज धारण किये हैं। आपकी भुजाओं पर ज्याघात का चिह्न बना हुआ है और आपने विना समावर्तन कर्म किये चित्र विचित्र वस्त्र माला और चन्दन क्यों धारण किये हैं? राजाओं के सामने सत्य बोलना श्रेष्ठ होता है। इससे हमसे सत्य सत्य कहो। तुम द्वार छोड़ कर चैत्यक पहाड़ की शिखर को तोड़कर राजा के अपराध से निडर होकर दूसरी राह से क्यों आये हो? ब्राह्मणों का वचन बलवान् होता है। कर्म ब्राह्मणों का बलवान् नहीं होता। सो तुम्हारा कर्म भी तुम्हारे वेष के विपरीत है। तुमने हमसे विधिपूर्वक पूजन क्यों नहीं लिया। यह सुनकर श्रीकृष्णजी बोले—हम स्नातक ब्राह्मण हैं। स्नातकव्रत केवल ब्राह्मण ही नहीं करते किन्तु क्षत्रिय और वैश्य भी करते हैं। इनमें से कोई तो विशेष

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नियम और कोई अविशेष नियम को लेनेवाला क्षत्रिय लक्ष्मी पाता है और पुष्प धारण करनेवालों को निश्चय लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। इस कारण से हम भी पुष्पधारी हैं। यह सत्य है कि क्षत्रिय के पास बाहुबल होता है। वचनबल उसके पास नहीं होता। क्षत्रिय का कहा हुआ वचन अप्रगल्भ होता है। धाता ने क्षत्रियों की भुजाओं में अपना बल दिया है। जो उस बल को तुम्हारी देखने की इच्छा होगी तो देखोगे। धीरवान् पुरुष शत्रु के घर में अद्वार से और हितू के घर में द्वार से प्रवेश किया करते हैं। इस कारण से द्वार धर्म को समझकर हमने तुम्हारे पुर में अद्वार से प्रवेश किया था और हम शत्रु के घर में पहुँच कर शत्रु की पूजा को ग्रहण नहीं करते हैं। हमारा यही व्रत है इससे हमने तुम्हारी पूजा ग्रहण नहीं की। ४२-५४

बाईसवाँ अध्याय

श्रीकृष्णजी का जरासन्ध के वध करने का उद्योग करना

श्रीकृष्णजी की उक्त बात को सुनकर जरासन्ध बोला, मुझे याद नहीं कि मेरा आपसे कभी वैर हुआ था या नहीं, और न मुझे तुम्हारा कोई अपकार करने की याद है। आपलोग मुझ अनपराधी को अपना शत्रु क्यों बताते हैं। सत्पुरुषों की यह मर्यादा नहीं है। मैंने आज तक कभी अर्थ और धर्म का उपघात नहीं किया है। न जानें आप किस हेतु से मुझे अपना शत्रु बताते हैं, जो मनुष्य विना बाधा के अपराध लगाता है उसका कल्याण कभी नहीं होता है, और उसको पापियों की सी गति मिलती है। क्षत्रिय के धर्म से शुभकर्म करनेवाले मनुष्यों का कल्याण होता है। धर्म जाननेवाले क्षत्रिय धर्म से परे दूसरे धर्म की प्रशंसा नहीं करते। आप लोग मुझको प्रमाद से ऐसा बताते हैं। मैं जितेन्द्रिय रहकर अपने धर्म में स्थित हूँ और प्रजा का अपराध नहीं करता हूँ, यह सुनकर श्रीकृष्णजी बोले—हम लोग तुम्हारे पास एक

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

ऐसे मनुष्य के कहने से आये हैं जो कुल का पालन और कुल के कार्य का करनेवाला है, जो राजा श्रेष्ठ होता है वह दूसरे साधु राजाओं को नहीं मारता। पर तुमने सब संसार के राजाओं को पकड़कर बाँधा और उनको शिवजी की पूजा में बलि दिया चाहते हो। ऐसा कर्म करने पर भी तुम अपने को अनपराधी जानते हो। जो तुम यह काम करोगे तो हमको भी पाप लगेगा, क्योंकि हम धर्म करनेवाले मनुष्यों के धर्म की रक्षा करने में समर्थ हैं। १-१२।

हमने आजतक मनुष्यों को देवता के अर्थ बलि चढ़ाना कहीं नहीं सुना? न जानें तुम शिवजी को मनुष्यों का बलि क्यों देना चाहते हो? भला तुम्हारी सी खोटी बुद्धि किसकी होगी, जो तुम अपने सवर्ण अर्थात् हम जैसों को पशुसंज्ञा जानकर बलिप्रदान किया चाहते हो, जो मनुष्य जिस-जिस अवस्था में जैसा-जैसा कर्म करता है, उसी अवस्था में वह वैसा ही फल पाता है, हम लोग दुःखी मनुष्यों के दुःख को दूर करनेवाले हैं। इससे हमलोग जाति की वृद्धि करने के लिये तुमको जाति क्षय के अपराध से दूषित जानकर मारने आये हैं। तुम अपने मन में यह जानते हो कि मेरे समान संसार में दूसरा क्षत्रिय नहीं है। यह तुम्हारी बुद्धि की मंदता का कारण है, भला ऐसा कौन क्षत्रिय होगा, जो रण करके स्वर्ग न जाना चाहे और जातिवालों को न छुटाना चाहे, जो क्षत्रिय युद्धरूपी यज्ञ में दीक्षित होता है वह स्वर्ग में रहकर सम्पूर्ण लोकों को अपने वश में करलेता है, वेद पढ़ना, बड़ा यश लेना, तप करना और युद्ध में व्यभिचार रहित मरना स्वर्ग की योनि अर्थात् स्वर्ग देनेवाले हैं। युद्ध में मृत्यु होने से मनुष्य को इन्द्र के भोगने के पदार्थ मिलते हैं, इसीलिए इन्द्र भी असुरों को जीतकर जगत् की रक्षा करता है, स्वर्ग का मार्ग मिलने के लिए तुम्हारे समान वैर करनेवाला और कौन होगा, तुमको अपने बल और सेना के घमण्ड से दूसरे का अपमान करना उचित नहीं है, क्योंकि मनुष्य-मनुष्य का पराक्रम अलग-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अलग होता है, बहुत से इस संसार में तुम्हारे समान और बहुत से तुमसे अधिक बल रखनेवाले होंगे। १३-२२। तुम जबतक इस बात को नहीं जानते हो तभी तक ऐसा समझ रहे हो। अब तुम अपने समान पुरुषों के बीच में मान और गर्व करना छोड़ दो और अपने पुत्र और मन्त्रियों सहित यमलोक को मत जाना चाहो। देखो दम्भोद्भव, कार्तवीर्य, उत्तर और बृहद्रथ आदि राजा लोग अपने कल्याण का अपमान करने के कारण से नाश हो गये। हम लोग तुमसे युद्ध चाहनेवाले ब्राह्मण नहीं हैं, किन्तु क्षत्रिय हैं, मैं इन दोनों के मामा वसुदेवजी का पुत्र हूँ। नाम मेरा कृष्ण है, और ये दोनों अर्जुन और भीमसेन नामी पाण्डुनंदन हैं। इससे हम तुमसे फिर यही कहते हैं कि या तो तुम सब राजाओं को छोड़ दो, नहीं तो हमसे स्थिर होकर युद्ध करके यमलोक को चले जाओ। यह सुनकर जरासंध बोला—हमने किसी राजा को विना जीते नहीं पकड़ा है। बताओ ऐसा कौन सा है जो हमसे हारा हुआ नहीं है। क्षत्रिय का यही धर्म और उपजीवन है कि शत्रु को बल से अपने वश में करके इच्छानुसार कर्म करे, सो मैं क्षत्रियों के धर्म को स्मरण करके देवता के निमित्त किये हुए राजाओं को भय के कारण से नहीं छोड़ सकता हूँ, हाँ, सेना के साथ सेना लेकर अथवा मैं अकेला तुम तीनों से पृथक्-पृथक् अथवा सबसे एक साथ ही लड़ सकता हूँ। २३-३०।

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! राजा जरासंध ने उक्त प्रकार से कहकर अपने पुत्र सहदेव को राज्याभिषेक किये जाने की आज्ञा दी। अपने कौशिक और चित्रसेन नामी सेनापतियों को जो पूर्व जन्म में हंस और डिंभक नामी जरासंध के सेनापति थे, याद किया। उस समय समर्थ और सत्यप्रतिज्ञ श्रीकृष्णजी यह विचारने लगे कि यह पराक्रमी जरासंध यादवों से अवध्य है, क्योंकि जब हमने पहिले युद्ध में इसको मारना चाहा था, उस समय यह आकाशवाणी हुई थी कि

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जरासंध का काल तुम्हारे हाथ से नहीं है। इसको भीमसेन मारेगा, यह आकाशवाणी सुनकर इसे हमने उस समय छोड़ दिया था। ३१-३६।

तेईसवाँ अध्याय

जरासंध और भीमसेन के मल्लयुद्ध होने का वृत्तांत

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय ! श्रीकृष्णजी उक्त रीति से विचार करके युद्ध का निश्चय करने के लिये जरासंध से कहने लगे—तुम हम तीनों में से किसके साथ युद्ध करोगे, जिससे तुम युद्ध करो, वही तुमसे लड़ने को तैयार हो जावे। यह सुनकर वह तेजस्वी जरासंध बोला—मैं भीमसेन से युद्ध करूँगा। इसके पीछे जरासंध ने ब्राह्मणों से स्वस्त्ययन सुनकर क्षत्रियधर्म को स्मरण करके अपना किरीट मुकुट उतार डाला और बालों को बाँधकर समुद्र के समान मर्यादा के साथ खड़ा होकर भीमसेन से बोला—मैं तेरे साथ युद्ध करूँगा; तेरे साथ लड़ने से हारने पर भी मेरा यश होगा। यह कहकर जरासन्ध भीमसेन के सम्मुख जाकर इस प्रकार खड़ा हो गया जैसे बलि नाम असुर इन्द्र के सम्मुख जाकर खड़ा हुआ था। उस समय जरासंध का पुरोहित माला आदि अनेक मांगल्य पदार्थ और दुःख और मूर्च्छा के समय पर सुख और संज्ञा करनेवाली ओषधियों को लेकर जरासंध के समीप जा खड़ा हुआ। इसके पीछे भीमसेन श्रीकृष्णजी से मंत्र करके और स्वस्त्ययन सुनकर जरासंध के सामने युद्ध करने को गया। भुजारूपी शस्त्रों से युद्ध करनेवाले और परस्पर जय चाहनेवाले गुरु को दंडवत् करके दोनों ने आपस में हाथ मिलाये और खंब ठोककर एक दूसरे के कन्धे पर हाथ रख के अंग से अंग मिलाकर लड़ने लगे। दोनों चित्रहस्त अर्थात् मुट्ठी बाँधना, कक्षाबंध, गुलगंडाभिघात और बाहुपाश आदि अनेक मल्लयुद्ध के पेचों को कर करके एक दूसरे के छाती और शिर पर घूसा मारने लगे। १-१४। हाथ मरोड़कर पीड़ित करने लगे। कभी वह उसके

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चपेटा मारता, कभी वह उसको पकड़कर खींच ले जाता, कभी वे दोनों एक दूसरे के हाथ मार मारकर पीड़ित हो जाते, और कभी अपनी भुजाओं से कमर को लपेट लपेट कर एक दूसरे को गिरा देते। दोनों शिक्षा पाने के कारण से अपनी अपनी देह को सकोड़ लेते, और सवारी और कमरपेचा आदि दाँवों को करके उदर के नीचे हाथ डालकर कमर पकड़ लेते, और कंठ और छाती तक उठा उठाकर एक दूसरे को पटक देते। कभी पीठ को पृथ्वी से रगड़ते, कभी उदर में घूसा मारकर एक दूसरे को मूर्च्छित कर देते। इस प्रकार से वे दोनों एक जगह घूसा मारना दिखलाकर उस जगह को छोड़कर दूसरी जगह घूसा मार मारकर और हाथ मरोड़ मरोड़कर युद्ध करने लगे। १५-२०।

उस समय वहाँ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र आदि सहस्रों पुरवासी स्त्री-पुरुष, बालक और वृद्ध आकर युद्ध देखने लगे। उन दोनों के भुजा से भुजा लड़ाने और निग्रह अर्थात् ग्रीवा पकड़कर नीचे को दबा देना और प्रग्रह अर्थात् पट्टे खींचकर चित गिरा देना और अनेक दाँवों के करने से ऐसा भयानक शब्द होने लगा, जैसा पहाड़ पर बिजुली गिरने से होता है। दोनों प्रसन्नचित्त और परस्पर जय करने की इच्छा से लड़ते थे। जिधर वे दोनों लड़ते लड़ते जाते थे, उधर ही के मनुष्य हट जाते थे। उस रणभूमि में उन दोनों का युद्ध इन्द्र और वृत्रासुर के समान होने लगा। कभी आगे, कभी पीछे, कभी तिरछे, कभी सामने, एक दूसरे को खींच ले जाता और एक दूसरे को घुड़क घुड़क कर पत्थर मारने के समान घोंटू आदि से प्रहार करता था। दोनों की भुजाओं के मारने का शब्द ऐसा होता था, जैसे लोहे के परिघाओं को मारने से होता है। उन दोनों का युद्ध कार्तिक बदी प्रतिपदा से प्रारम्भ होकर विना आहार और विश्राम के तेरस तक युद्ध हुआ। चतुर्दशी की रात्रि को जरासन्ध थककर बैठ गया। उस समय श्रीकृष्णजी ने भीमसेन को सम्बोधन किया कि थका हुआ शत्रु पीड़ा नहीं दे सकता और

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सुगमता से मारा जा सकता है। इसलिए अब तुम इस से बराबर युद्ध किये जाओ। यह सुनकर भीमसेन ने जरासन्ध को उस अवस्था में मारना विचारा और क्रोध करके उग्र रूप हो गया। २१-३५।

चौबीसवाँ अध्याय

भीमसेन का जरासन्ध को मार डालना और श्रीकृष्णजी का सब राजाओं का बन्धन से छुटाकर पांडवों सहित इन्द्रप्रस्थ को आना और पांडवों से बिदा होकर द्वारका को चला जाना

वैशंपायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! भीमसेन ने जरासन्ध को मारना विचारकर श्रीकृष्णजी से कहा—महाराज, इस पापी की कमर वस्त्र से दृढ़ बँधी हुई है, इसलिए यह मेरे बल से रुकता नहीं है। यह सुनकर श्रीकृष्णजी जरासन्ध को मरवाने की इच्छा से शीघ्रता से बोले—तुममें जो देवतासम्बन्धी वायु का बल है, उसको अब जरासन्ध पर प्रकट करो। यह सुनकर भीमसेन ने जरासन्ध को पकड़कर उठा लिया और सौ बार घुमाकर पृथ्वी पर पटककर, पीठ में घोंटू अड़ा-कर, उसे रगड़ रगड़कर गर्जता हुआ दोनों हाथों से टाँगों को पकड़-कर चीड़कर बीच में से दो कर डाला। उन दोनों की गर्जना से स्त्रियों के गर्भ गिर पड़े, और मगधपरवासी मनुष्य भयभीत होकर कहने लगे, क्या हुआ। हिमालय पर्वत फटता है या पृथ्वी फट गई है। १-१०। इसके पीछे वे तीनों वीर जरासन्ध के मृतक शरीर को उसके घर के द्वार पर डालकर रात्रि में ही बाहर चले गये। जरासन्ध के पताकाधारी रथ को जोतकर उस पर बैठकर वहाँ गये, जहाँ जरासन्ध ने सब राजाओं को बँधुआ कर रक्खा था। वहाँ जाकर उन्होंने उन राजाओं को क़ैद से छोड़ दिया। उन राजाओं ने श्रीकृष्णचन्द्र को रत्न आदि भेंट दिये। अर्जुन, श्रीकृष्ण और भीमसेन सहित उस सुन्दर और दुर्जय रथ पर बैठ-कर राजाओं को साथ लिये हुए नगर के बाहर आये। यह रथ वही

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

था जिस पर चढ़कर इन्द्र और विष्णु ने तारकासुर युद्ध में दैत्यों को मारा था। उस रथ की प्रभा तपाये हुए सुवर्ण के समान थी, शब्द बादल की गरज के सदृश था, वह रथ शत्रुनाशक और जय का दाता था। इन्द्र ने इसी रथ पर सवार होकर दानवों की निन्यानबे सेनाएँ नाश की थीं। उस रथ को पाकर पांडव और श्रीकृष्णजी बहुत प्रसन्न हुए, और उनको उक्त प्रकार से सब राजाओं सहित देखकर सब मगधदेशवासी चकित हो गये। ११-२०। उस रथ में वायु के समान जल्दी चलनेवाले घोड़े जुते हुए थे। एक ध्वजा देवताओं की बनाई हुई उस पर विना आधार के लगी हुई थी। प्रभा उस ध्वजा की बिजुली के समान थी। इसलिए वह एक योजन से दिखलाई देती थी।

उस समय श्रीकृष्णजी ने गरुड़जी को स्मरण किया। वह उसी क्षण वहाँ पहुँचकर उस ध्वजा पर जिस पर भयानक शब्द करनेवाले जीव बैठे थे, बैठगये। उनके बैठने से वह ध्वजा चैत्य वृक्ष की तरह ऊँची खड़ी होगई। उस समय गरुड़जी का प्रकाश दोपहर के सूर्य के तुल्य था, मनुष्य उनकी ओर कष्ट से देख सकता था। वह ध्वजा न वृक्षों में अटकती थी, न शस्त्र से कटती थी और न मनुष्य उसको अच्छे प्रकार से देखसकते थे। यह रथ राजा वसु को इन्द्र ने दिया था। वसु ने राजा बृहद्रथ को दिया। बृहद्रथ से राजा जरासन्ध ने पाया था। श्रीकृष्णजी उस रथ पर बैठे हुए गिरिव्रजदेश अर्थात् पहाड़ी पृथ्वी से चलकर समान पृथ्वी पर आकर ठहर गये। वहाँ श्रीकृष्णजी के पास ब्राह्मण आदि सब नगरवासी आदर करते हुए गये। २१-३०। उस समय बंधन से छूटे हुए राजाओं ने श्रीकृष्णजी की पूजा की और विनय युक्त बोले—आपने हम लोगों को, जो दुःखरूपी कीच में फँसे हुए थे, धर्म का पालन करके बाहर निकाला है; यह आपकी कुछ आश्चर्य की बात नहीं है। आप इसी योग्य हैं। हम लोगों को मोक्ष करने से आपको संसार में बड़ा यश मिला। अब हम सब आपके अधीन हैं, जो कुछ आप आज्ञा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दें सो ही हम करें। जो कठिनता से भी हो सकेगी तो भी हम लोग आपकी आज्ञा का प्रतिपालन करेंगे। यह सुनकर श्रीकृष्णजी बोले—राजा युधिष्ठिर राजसूय यज्ञ करके साम्राज्य पदवी प्राप्त करना चाहता है, तुम सब लोग उस यज्ञ में राजा युधिष्ठिर की सहायता करो। यह सुनकर उन राजा लोगों ने प्रसन्न होकर कहा कि बहुत अच्छा; हम सब ऐसा ही करेंगे। फिर श्रीकृष्णजी को रत्न आदि भेंट किये। श्रीकृष्णजी ने उन सब राजाओं पर दया करके उनकी दी हुई भेंटों को अंगीकार किया। इसके पीछे जरासंध का बेटा सहदेव बड़े बड़े मोल के रत्न आदि पदार्थों को आगे आगे लेकर अपने मंत्री और पुरोहितों सहित श्रीकृष्णजी के पास नम्रतायुक्त आया। श्रीकृष्णजी ने उसकी दी हुई भेंट को अंगीकार किया, और उसे अभय करके उसी स्थान पर अपनी ओर से उसके राजतिलक कर दिया और वह श्रीकृष्णजी के साथ सखा-भाव मानकर पांडवों से सत्कृत होकर पुरोहित आदि सहित अपने नगर को लौट गया। ३१-४४।

हे राजा जनमेजय! इस प्रकार श्रीकृष्णजी वहाँ से जरासन्ध को मारकर और भेंटों का बहुतसा धन लेकर पांडवों सहित उक्त रथ पर बैठ कर इन्द्रप्रस्थ में पहुँचे। युधिष्ठिर से मिलकर कहने लगे—तुम्हारे भाग्य से भीमसेन ने जरासन्ध को मार डाला और सब राजा लोग बंधन से छुटा दिये गये और तुम्हारे दोनों भाई कुशलपूर्वक लौटकर घर आ गये। यह सुनकर युधिष्ठिर ने श्रीकृष्णजी की विधिपूर्वक पूजा की और अर्जुन और भीमसेन को छाती से लगा लिया, और जरासन्ध से विजय पाकर आनन्द करने लगा। इसके पीछे राजा युधिष्ठिर उन सब आये हुए राजा लोगों से अवस्था के अनुसार यथायोग्य मिले और आदर सत्कार करके सबको बिदा कर दिया। वे राजा लोग युधिष्ठिर से आज्ञा पाकर, छोटी बड़ी सवारियों में बैठ बैठ कर, अपने अपने देश को चले गये। इस प्रकार से हे राजा जनमेजय! श्रीकृष्णजी अपने शत्रु जरा-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सन्ध को पांडवों से मरवाकर युधिष्ठिर, कुन्ती, द्रौपदी, सुभद्रा, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव और धौम्य पुरोहित से यथायोग्य मिले। युधिष्ठिर के दिये हुए उसी रथ में बैठकर, जो मन के समान जल्दी चलनेवाला था, द्वारकापुरी को चले। चलते समय पांडवों ने श्रीकृष्णजी की परिक्रमा की और उनके चले जाने के पीछे युधिष्ठिर ने उस पाये हुए यश को अपने धर्मयुक्त प्रजापालन आदि कर्मों से बढ़ाया और द्रौपदी के साथ स्नेह करने लगे। ४५-६०।

पच्चीसवाँ अध्याय

अर्जुन, भीमसेन, नकुल और सहदेव का चारों दिशाओं के राजाओं को विजय करके बहुतसा द्रव्य लाना

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! इसके पीछे अर्जुन ने एक दिन युधिष्ठिर से कहा—महाराज, मुझको श्रेष्ठ धनुष, शस्त्र, बाण, बल, पक्ष, पृथ्वी और सेना प्राप्त हो गई है, जिनका मिलना दूसरे को दुर्लभ है। इससे अब मेरी यह इच्छा है कि मैं अभिजित् मुहूर्त और अच्छी तिथि में कुबेर से पाली हुई उत्तर दिशा को जाकर विजय करूँ, और सब राजा लोगों से कर लूँ। यह सुनकर युधिष्ठिर बोले—अच्छा अब तुम ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन सुनकर शत्रुओं को दुःख और मित्रों को आनन्द देनेवाली यात्रा करो, तेरी विजय निश्चय होगी। यह सुन कर अर्जुन बड़ी सेना को साथ लेकर अग्नि के दिये हुए दिव्य रथ में बैठकर उत्तर दिशा को चल दिया। इसी प्रकार से युधिष्ठिर से पूजित हो होकर भीमसेन पूर्व दिशा, नकुल पश्चिम दिशा और सहदेव दक्षिण दिशा को बहुत सी सेना साथ ले लेकर चले और जाकर चारों ने चारों दिशाओं को विजय किया। राजा युधिष्ठिर उन चारों के लाये हुए द्रव्य से बड़ा लक्ष्मीवान् हो गया। १-११।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

छब्बीसवाँ अध्याय

अर्जुन का उत्तर दिशा में राजाओं को जीतकर राजा भगदत्त को युद्ध करके जीतना

उस कथा को सुनकर राजा जनमेजय ने वैशम्पायनजी से कहा—महाराज, चारों दिशाओं के विजय करने का वृत्तांत विस्तार सहित वर्णन कीजिए। मेरा चित्त पांडवों के चरित्र को सुनने से तृप्त नहीं होता है। यह सुनकर वैशंपायनजी बोले कि चारों पांडवों ने इस पृथ्वी को एक ही साथ विजय किया था, परन्तु हम पृथक् पृथक् दिशा की विजय का वृत्तांत कहने निमित्त पहले अर्जुन की विजय का हाल कहते हैं। अर्जुन पहिले कलिंग देश में गया और वहाँ के राजा को उसने बड़ी सुगमता से अपने वश में कर लिया। उसने आनर्त्त, कालकूट, कलिंद और सुमंडल देश के राजाओं पर चढ़ाई करके उन सबको सेना सहित जीत लिया। वह उन सब जीते हुए राजाओं सहित शाकद्वीप आदि द्वीपों में गया और वहां के प्रतिविंध्य आदि बड़े धनुर्धारी राजाओं से तुमुल युद्ध करके सबको जीत लिया। फिर उन सबको साथ लिये हुये प्राग्ज्योतिष नाम देश में गया। वहाँ का भगदत्त नामी राजा किरात, चीन, सागर और अनूपवासी योद्धाओं से युक्त होने के कारण बड़ा पराक्रमी था। उससे अर्जुन का आठ दिन तक बड़ा युद्ध हुआ। वह अर्जुन से कहने लगा—हे अर्जुन! तुम इन्द्र के पुत्र हो, इससे तुममें इन्द्र का सा पराक्रम होना योग्य है। मैं भी इन्द्र का मित्र हूँ, परन्तु अब मेरी सामर्थ्य तेरे साथ युद्ध करने की नहीं है। इससे जो कुछ तुम्हारी मनोकामना हो सो कहो। मैं वैसा ही करूँगा। तुम मेरे पुत्र के समान हो।

यह सुनकर अर्जुन बोले कि धर्मज्ञ और सत्यवादी राजा युधिष्ठिर राजसूय यज्ञ में बड़ी दक्षिणा देकर साम्राज्य पदवी प्राप्त करना चाहता है। मैं उसके निमित्त चाहता हूँ कि आप अपना हाथ मुझको दीजिए।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

आप मेरे पिता के सखा हैं और मुझसे भी प्रीति मानते हैं। इससे मैं आपका करदान प्रीतिपूर्वक मांगता हूँ। यह सुनकर भगदत्त बोला कि जैसे तुम हमारे पुत्र के समान हो, उसी प्रकार राजा युधिष्ठिर भी हैं। मैं तुम्हारे कहने के अनुसार सब करूँगा, परन्तु करदान के सिवाय और जो कुछ तुम्हारी इच्छा हो सो हमसे कहो। १-१६।

सत्ताईसवाँ अध्याय

अर्जुन को उत्तर दिशा में आगे जाना और युद्ध करके पहाड़ी राजाओं को विजय करना

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! राजा भगदत्त की बात को सुनकर अर्जुन ने कहा कि आपका करदान देना ही सब कुछ है। इसके पीछे अर्जुन वहां से उत्तर की ओर आगे चला और अन्तर बाहर और उपगिरि आदि देशों के सब पहाड़ी राजाओं को जीतकर, उनसे धन लेकर उलूकवासी राजा बृहंत के देश में गया। उस देश को मृदंगों के शब्द, रथों की झंझनाहट और हाथियों की चिग्घार से कंपित कर दिया। राजा बृहंत उसको सुनकर अपनी चतुरंगिणी सेना लेकर शीघ्र नगर के बाहर आया और अर्जुन से युद्ध करने लगा। पहिले तो उन दोनों में बड़ा युद्ध हुआ, परन्तु अन्त में राजा बृहंत अर्जुन के पराक्रम को न सहकर, उसको अत्यन्त पराक्रमी जानकर, बहुत से रत्न लेकर अर्जुन के समीप चला आया। अर्जुन ने वे रत्न ले लिये और उस राजा को उसके राज्य पर स्थापित करके उलूक सहित आगे को गया। वहाँ राजा सेनाबिन्दु को युद्ध में पराजय किया। १-१०।

उस समय अर्जुन ने मोदापुर, वामदेव, सुदामा, सुशंकुल और उलूक आदि देशों के राजाओं को बुलाया। उनकी सहायता से पंचगण नाम देशों को विजय किया। इसके पीछे उसने राजा सेनाबिन्दु के देवप्रस्थ नगर को जीता और वहाँ से सब राजाओं को साथ लिये

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हुए, राजा विश्वगश्व पौरव के सम्मुख गया। वहाँ युद्ध करके उसके अति रक्षित नगर को जीत लिया। उसको जीतकर अर्जुन ने पर्वत-वासी चोर और उत्सव संकेत नामी गणों को विजय किया। वहाँ से चलकर काश्मीरी वीर क्षत्रिय और दशमंडल सहित लोहित को विजय किया। उनके विजय होने पर त्रिगर्त्त, दार्व और कोकनद आदि देशों के क्षत्रिय भी अर्जुन के साथ हो लिये। फिर अर्जुन ने आगे चलकर बड़ी रमणीक अभिसारी नाम नगरी उरगवासी और रोचामान को विजय किया। वहाँ से सिंहपुर नाम नगर में जाकर, जो चित्र आयुधों से रक्षित था, युद्ध करके वहाँ के राजा को जीत लिया। ११-२०। इसके पीछे अर्जुन सेना सहित कुक्ष और चोल नाम देशों में गया। वहाँ के राजाओं को जीतकर वाह्लीक, काम्बोज और दरद देशों के राजाओं को विजय किया, वहाँ से ईशान दिशा की ओर जाकर उन चोरों को, जो वन में रहा करते थे, मारकर पराजय किया। इसके उपरांत अर्जुन ने लोहपरम, काम्बोज, ऋषिक आदि उत्तर देश के राजाओं को विजय किया। ऋषिक देश के राजा से अर्जुन तारकामय युद्ध के समान युद्ध हुआ। अन्त में ऋषिक देशी राजा हार गये। तब अर्जुन ने उनसे आठ घोड़े, जिनका वर्ण तोते के उदर के समान और बहुत से मोर का सा वर्ण रखनेवाले थे, कर में लिये। इसके पीछे अर्जुन हिमवंत और विष्कुट पर्वतवासी राजाओं को जीतकर श्वेत पर्वत पर गया और वहाँ जाकर ठहर गया। २१-२६।

अट्ठाईसवाँ अध्याय

अर्जुन का संपूर्ण उत्तर दिशा को जीतकर इन्द्रप्रस्थ को आना और युद्ध में लाये हुए पदार्थों को युधिष्ठिर को निवेदन करना

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! अर्जुन श्वेत पर्वत से चल-कर किम्पुरषावास देश को गया। वहाँ द्रुम के पुत्र को बड़ा युद्ध करके

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जीतकर उससे कर लिया। फिर आगे चलकर हाटक नाम देश को, जो गुह्यक से रक्षित था, सत्त्व से जीत लिया। वहाँ से मानसरोवर पर पहुँचा, जहाँ अनेक मुनियों के आश्रम थे। वहाँ से चलकर अर्जुन ने गंधर्वों के देश को विजय किया। गन्धर्वों से तित्तिर, कल्माष और मंडूक नामी घोड़े कर में लिये। वहाँ से भी आगे चला और हरिवर्ष में पहुँचकर उस देश को जीतना चाहा, परंतु उस समय अर्जुन के पास वहाँ के द्वारपालक, जो बड़े पराक्रमी और दीर्घकाय थे, आये और कहने लगे—यह नगर मनुष्यों से किसी प्रकार नहीं जीता जा सकता, तुम अपना कल्याण चाहो तो अब लौट जाओ; क्योंकि इस नगर में जो घुसता है वही मर जाता है। हम तुमसे प्रसन्न हैं, इससे तुम अपनी जीत ही समझो। १-१०।

यह देश उत्तर कुरुदेश कहलाता है। यहाँ युद्ध नहीं होता, क्योंकि इस देश में जाने से कोई पदार्थ दिखलाई नहीं देता जिसे जीतकर लिया जावे। मनुष्य देह से कोई मनुष्य यहाँ के पदार्थों को नहीं देख सकता है। इससे जिस बात की तुमको इच्छा हो सो हमसे कहो। हम तुम्हारी इच्छा को पूरी करेंगे। यह सुनकर अर्जुन बोले—हम राजा युधिष्ठिर का साम्राज्य किया चाहते हैं। हम तुम्हारे कहने के अनुसार इस देश में प्रवेश नहीं करेंगे, परन्तु तुम हमको युधिष्ठिर के लिये कर दो। यह सुनकर उन द्वारपालकों ने अर्जुन को दिव्य वस्त्र, दिव्य आभरण, दिव्य मणि और मृगचर्म आदि दिये। अर्जुन उनको तथा अन्य नाना प्रकार के रत्न और घोड़ों को जो उसने सम्पूर्ण उक्त राजाओं से कर में लिये थे, लेकर सम्पूर्ण उत्तर दिशा को विजय कर और राजाओं को सदैव कर देने के नियम में स्थिर करके इन्द्रप्रस्थ को लौट आया। फिर सब लाये हुए पदार्थों को राजा युधिष्ठिर को दे दिया और युधिष्ठिर से आज्ञा पाकर अपने घर में चला गया। ११-२१।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उन्तीसवाँ अध्याय

भीमसेन का पूर्व दिशा को विजय करना और चंदेरी के
राजा से कर लेकर आगे को जाना

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय ! जिस समय अर्जुन उत्तर दिशा को गया था, उसी समय बलवान् भीमसेन युधिष्ठिर से आज्ञा पाकर अपने साथ हाथी, घोड़े और रथों सहित बड़ी भारी सेना लेकर पूर्व दिशा को गया। उसने पहिले पांचालदेश के राजाओं को अनेक उपायों से वश में किया, फिर गण्डक, विदेह और दशार्ण देशों के राजाओं को विजय किया, दशार्ण देश का राजा सुधर्मा नामी था। उसने विना शस्त्र के भीमसेन से बड़ा युद्ध किया, परन्तु भीमसेन ने उसको विजय किया। उसके बल को देखकर उसे अपना सेनापति बनाया और भीमसेन ने पूर्व दिशा में जाकर अश्वमेध देश के रोचमान नाम राजा को सहायकों सहित विजय किया, उसको जीतने के पीछे भीमसेन ने सम्पूर्ण पूर्व दिशा को बड़ी सुगमता से विजय कर लिया। वहाँ से दक्षिण की ओर जाकर पुलिन्द नामी बड़े नगर को तथा सुमित्र और सुकुमार नामी राजाओं को वश में किया। १-१०।

भीमसेन वहाँ से चलकर युधिष्ठिर की आज्ञा से चंदेरी देश में गया। वहाँ का राजा शिशुपाल उसके आने की खबर पाकर बाहर चला आया। वहाँ आकर भीमसेन से आदरपूर्वक मिला और दोनों ने आपस में क्षेमकुशल पूछकर चंदेरी के राजा ने अपना राज्य भीमसेन को निवेदन किया और पूछा कि तुम दिग्विजय क्यों करते हो ? यह सुनकर भीमसेन ने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ करने का वृत्तान्त कहा, उसको सुनकर राजा शिशुपाल ने भीमसेन को कर दे दिया। वह वहां तेरह दिन रहकर शिशुपाल से सत्कृत हो करके सेना सहित आगे को चला। ११-१६।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तीसवाँ अध्याय

भीमसेन का दिग्विजय करके बहुत सा धन लेकर इन्द्रप्रस्थ को लौटना और सब द्रव्य युधिष्ठिर को निवेदन कर देना

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय ! भीमसेन चंदेरी से चलकर कुमार और कोशला देशों में गया और वहाँ के श्रेणिमन्त और बृहद्-बल नाम राजाओं को जय किया। वहाँ से वह अयोध्या में पहुँचा। वहाँ के दीर्घयज्ञ नामी राजा को सुगमता से जीत लिया। इसके पीछे भीमसेन ने आगे चलकर गोपालकच्छ और उत्तर कोशल देशों को विजय किया। वहाँ मल्लों के स्वामी राजा को भी पराजय किया। फिर भीमसेन हिमालय के पार्श्व में चला गया। वहाँ के सम्पूर्ण जलोद्भव देशों को थोड़े ही काल में अपने वश में किया। इस प्रकार से भीमसेन ने बहुत से देशों को विजय करके शुक्तिमंत नामी पहाड़ को जो भल्लाट के समीप है विजय किया। वहाँ से चलकर उसने काशी के सुबाहु नामी राजा को जो युद्ध से विमुख नहीं होता था, युद्ध करके पराजय किया और सुपार्श्व के समीप रहनेवाले क्रथ नाम बड़े पराक्रमी राजा को जीतकर मत्स, मलद, अनघ, अभय और पशुभूमि आदि देश और मदधार पहाड़ पर रहनेवाले राजाओं को युद्ध कर करके अपने वश में किया। इनको जीतकर भीमसेन उत्तर की ओर चल वहाँ वत्सभूमि, भर्ग, निषाद और मणिमत आदि बहुत से राजाओं को विजय किया। १-११।

वहाँ से चलकर उसने दक्षिण मल्ल और भोगवन्त पर्वत को सुग-मता से विजय करके शर्मक, वर्मक राजाओं को सांत्वनापूर्वक जीतकर आगे को गया। यहाँ जनकवंशी जगतीपति और वैदेहिक राजाओं को जीतकर शक और वर्षकों को थोड़े ही प्रयास से विजय कर लिया। वहाँ से वैदेहदेश में इन्द्रपर्वत के समीप जाकर किरातों के सात राजाओं को अपने वश में किया। इसके पीछे भीमसेन, सुह्य, प्रसुह्य और सपक्षों को जीत-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कर मगध देश को गया। वहाँ के दण्ड और दण्डधार राजाओं को जीतकर गिरिव्रज देश में पहुँच करके राजा सहदेव नामी जरासन्ध के पुत्र से सांत्वनापूर्वक वचन कहकर दण्ड लिया और उसको तथा दंडधार राजाओं को साथ लेकर सेना सहित कर्ण पर चढ़ गया और उसको घोर युद्धपूर्वक जीत के पहाड़ी राजाओं को अपने वश में किया। १२-२०।

इसके पीछे भीमसेन ने मेदागिरि के सब बली राजाओं को बाहुबल से मार डाला और पुंड्र देश के राजा वासुदेव और कौशिकीकच्छ में रहने-वाले राजाओं को, जो बड़े पराक्रमी थे, युद्ध में जीतकर राजा वंग के सम्मुख चला गया। वहाँ समुद्रसेन, चन्द्रसेन, ताम्रलिप्त, कर्वट देश के राजा सुह्य और सागर में रहनेवाले सब म्लेच्छों के गणों को विजय किया। इस प्रकार से भीमसेन बहुत से देशों को जीतकर और वहाँ के राजाओं से दण्ड लेकर लौहित को गया। वहाँ से सागर और अनूप देशों में जाकर वहाँ के म्लेच्छ राजाओं को विजय किया और सबसे कर लिया। उन राजाओं ने भीमसेन को चन्दन, अगरु, वस्त्र, मणि, मोती, कम्बल, दुशाले, सोना, चाँदी और मूँगा आदि कोटिन रत्न दिये। भीमसेन उनको लेकर इन्द्रप्रस्थ को लौट आया और सब धन युधिष्ठिर को अर्पण कर दिया। २१-३०।

इकतीसवाँ अध्याय

सहदेव का संपूर्ण दक्षिण दिशा को विजय करके इन्द्रप्रस्थ लौटकर आना और सब लाये हुए धन को युधिष्ठिर को निवेदन करना

वैशंपायनजी बोले हे राजा जनमेजय! अब हम सहदेव की दिग्विजय का वृत्तांत कहते हैं। जो राजा युधिष्ठिर की आज्ञा से चतुरंगिनी सेना लेकर दक्षिण दिशा को गया था। उसने पहिले शूरसेन और मत्स्य देश के राजाओं को युद्ध करके वश में किया। फिर राजा दंतवक्र को, जो सब राजाओं का अधिपति था जीता। उससे कर देने का निबंध

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

करके फिर उसे राजगद्दी पर बैठा करके सुकुमार, सुमुनि और पटच्चरों सहित मत्स्यों को विजय किया। वहाँ से चलकर सहदेव ने निषाद भूमि, गोशृंग पर्वत और राजा श्रेणिमंत को पराजय किया। नाराष्ट्र देश को जीतकर कुंतिभोज के समीप गया। उसने सहदेव के शासन को अंगीकार किया। फिर वहाँ से चलकर चर्मण्वती नदी के किनारे पहुँचा, जहाँ जंभक का पुत्र, जिसको वासुदेवजी ने पहिले मारते मारते छोड़ दिया था, राजा था। सहदेव उसको युद्ध में जीत उससे कर लेकर दक्षिण दिशा को चल दिया। वहाँ उसने युद्ध करके सेकों और अपर-सेकों से कर लिया और उनको साथ लेकर नर्मदा नदी के समीप पहुँचा। वहाँ उसने अवंति देश के विंद और अनुविंद नाम राजाओं को विजय किया। वहाँ से रत्नादिक लेकर भोजकट नाम नगर को गया। वहाँ के राजाओं से दो दिन बराबर युद्ध करने के बाद उसने राजा भीष्मक, राजा कोशला, राजा वेणुतट, राजा कांतार, पूर्व कोशला देश के राजा लोग, नाटक के राजा, राजा हेरंबक, राजा मारुध, राजा रम्यग्राम, राजा नीच और राजा आनर्बुक आदि को युद्ध में पराजय किया। १-१४।

फिर उसने आटविक नाम राजाओं को जीतकर राजा वाताधिप को अपने वश में किया और राजा पुलिंद को विजय करके दक्षिण ओर को चला गया। वहाँ एक दिन राजा पांडु से युद्ध हुआ। सहदेव उसे जीतकर किष्किन्धा नाम गुफा के समीप पहुँचा। वहाँ पर वानरों के मयन्द और द्विविद नाम राजाओं से सात दिन तक युद्ध हुआ। उन दोनों वानरों के राजाओं ने सहदेव से प्रसन्न होकर कहा—लो ये संपूर्ण रत्न लेकर तुम चले जावो, हमको युधिष्ठिर के यज्ञ में विघ्न करना अभीष्ट नहीं है। १५-२०। यह सुनकर सहदेव रत्न लेकर माहिष्मती पुरी को चला गया, और वहाँ उससे राजा नील से बड़ा भयानक सेना का क्षय करनेवाला और प्राणों को संशय देनेवाला युद्ध हुआ। उस युद्ध में राजा नील की अग्निदेव सहायता करते रहे और युद्ध करते २ एक

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

साथ सहदेव की सेना के रथ, घोड़े और हाथी जलने लगे। सहदेव यह देखकर संभ्रान्तमन हो गया और उसको कुछ न कह सका। २१-२५।

यह सुनकर राजा जनमेजय ने वैशंपायनजी से पूछा—महाराज सहदेव तो अग्नि में ही यज्ञ करने के लिये यत्न कर रहा था, फिर किस कारण से अग्नि ने सहदेव की सेना को जलाया? यह सुनकर वैशंपायनजी बोले कि हमने सुना है—अग्निदेव माहिष्मती पुरी में पहिले से परदाररत थे, अर्थात् राजा नील के एक बड़ी स्वरूपवती कन्या थी। राजा उसको अग्निहोत्र के समय अपने पास लेकर इस कारण से बैठा करता था कि जब तक वह कन्या अपने होठों से फूँक नहीं मारती थी, तब तक पंखे की भी वायु से अग्नि नहीं जलती थी। अग्निदेव उस कन्या के स्वरूप पर कामासक्त हो गए और एक दिन सुन्दर ब्राह्मण का स्वरूप धरकर उस कन्या से रमण करने की इच्छा से कहा—मेरे साथ संग कर, उस कन्या ने अंगीकार किया और अग्निदेव उसके साथ रमण करने लगे। एक दिन राजा ने अग्निदेव को उस कन्या से ब्राह्मणस्वरूप से रमण करते हुए देखलिया और उनको केवल ब्राह्मण जानकर आज्ञा दी कि इसको शास्त्र के अनुसार दण्ड दो। यह देखकर अग्निदेव प्रज्वलित स्वरूप हो गए। राजा उनके स्वरूप को देखकर डरगया और दंडवत् प्रणाम किया फिर समय आने पर उस कन्या का विवाह अग्निदेव के साथ कर दिया। २६-३३।

अग्निदेव उस कन्या को पाकर बहुत प्रसन्न हो राजा नील पर कृपा करके कहने लगे—जो कुछ इच्छा हो सो वरदान माँगो। यह सुनकर राजा नील ने कहा कि महाराज मेरी सेना को किसी का भय न रहे। अग्निदेव ने राजा को वह वरदान देदिया और उस समय से जो कोई राजा विना जाने उस पुरी को जीतने की इच्छा से जाता है, उसको सेना सहित अग्निदेव भस्म कर देते हैं। अग्निदेव ने वहाँ की स्त्रियों को यह वरदान दिया कि यहाँ की सब स्त्रियाँ आज से स्वैरिणी की तरह

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

स्वेच्छाचारिणी रहें। तबसे वहाँ की स्त्रियाँ स्वैरिणी रहती हैं और राजा लोग अग्नि के भय से उस पुरी के विजय करने को नहीं जाते हैं। सो हे जनमेजय! सहदेव अपनी सेना को अग्नि में जलती हुई देखकर कम्पित नहीं हुआ किन्तु शुद्ध होकर आचमन करके अग्नि की स्तुति करने लगा। ३४-४०। हे अग्निदेव! मैं तुमको नमस्कार करता हूँ, मैंने यह विजय करने की इच्छा तुममें ही यज्ञ करने के लिये की है। तुम देवताओं का मुख और यज्ञ हो, तुम्हारा नाम पवित्र होने के कारण से पावक और हव्य को धारण करने से हव्य-वाहन है। तुम्हारे ही अर्थ वेदों के प्रकट होने से तुमको जातवेदस कहते हैं। तुम्हारे नाम चित्रभानु, सुरेश और अनल भी हैं। तुम स्वर्ग के द्वार के देनेवाले, हुत के भोजन करनेवाले और ज्वलनस्वरूप हो। तुम्हीं वैश्वानर, पिंगेश और प्लवंग हो। स्वामिकार्त्तिक को उत्पन्न करनेवाले, रुद्र, गर्भ और सुवर्ण उत्पन्न करनेवाले हो। हे अग्नि-देव! तुम मुझको अपना तेज दो, वायु मुझको प्राण दे। पृथ्वी बल दे। और जल कल्याण देवे। सो हे अग्निदेव! हे जलगर्भ! हे पराक्रमी! हे जातवेदस! हे देवेश! हे अग्नि! मुझको पवित्र करो। तुम ब्राह्मण, देवता, ऋषि और असुरों के यज्ञ का कारण हो। तुम धूमकेतु, शिखि, पापनाशक, सब प्राणियों में स्थित और वायु से प्रकट होनेवाले हो। मुझको अपने सत्य से पवित्र करो। हे महाराज! मैं प्रीति-पूर्वक आपकी स्तुति करता हूँ। आप मुझे बुद्धि, प्रीति, ज्ञान और सुख दीजिए। वैशम्पायनजी बोले कि हे राजा जनमेजय! सहदेव ने इस आग्नेय मन्त्राष्टक से अग्नि की स्तुति की जो मनुष्य जितेन्द्रिय होकर इन मन्त्रों से अग्नि में हवन करता है, उसके सब पाप दूर हो जाते हैं। ४१-५०।

स्तुति करने के पीछे सहदेव अग्निदेव से बोला—आपको यज्ञ में विघ्न करना योग्य नहीं है और फिर सेना के मुख पर कुश का आसन

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बिछाकर विधिपूर्वक बैठ गया। यह देखकर अग्नि आगे को इस प्रकार से नहीं बढ़ी जैसे समुद्र अपनी मर्यादा से आगे को नहीं बढ़ता है। फिर अग्निदेव ने उसके पास आकर सांत्वनापूर्वक धीरे से कहा—हे सहदेव! उठ खड़ा हो, मैं तेरे और युधिष्ठिर के अभिप्राय को जानता हूँ, परन्तु इस पुरी की रक्षा करना मुझको उस समय तक अवश्य है। जब तक राजा नील का यहाँ वंश रहेगा। तू उठ, मैं तेरी मनोकामना को पूरा करूँगा। यह सुनकर सहदेव प्रसन्न हुआ और हाथ जोड़कर नम्रता से उसने अग्नि का पूजन किया। इस पर अग्नि निवृत्त हो गई। और अग्निदेव की आज्ञा से राजा नील सहदेव के पास आया और सत्कार सहित उसकी पूजा की। इसके पीछे सहदेव उससे कर लेकर दक्षिण दिशा को चल दिया। त्रैपुर, पौरवेश्वर और प्राकृत कौशिकाचार्य को अपने वश में किया। ५१-६१। इसके पीछे सहदेव ने सुराष्ट्र देश के राजा को जीता और उस देश में भोजकटपुर के राजा रुक्म और राजा भीष्मक के पास जो इन्द्र का मित्र था, अपना दूत भेजा। उन दोनों ने श्रीकृष्णजी के प्रभाव को समझकर उसके शासन को अंगीकार किया। इसके पीछे सहदेव ने शूर्पारक, तालाकटक, दंडक, सागर द्वीपवासी राजा जो म्लेच्छयोनि से उत्पन्न निषाद, पुरुषाद, कर्ण, प्रावरण, कालमुख जिनकी उत्पत्ति नर और राक्षस से है, कोलगिरि, सुरभीपट्टन, ताम्राह्वयद्वीप, रामाकपर्वत, तिमिंगिल, एकपादपुरुष, केरलवनवासी, संजयंती नगरी, पाषंड, करहाटक, पांड्य, द्राविड़, उड्र, अंध्र, तालवन, कलिंग, उष्ट्रिकर्णिक, आटवी नाम रम्य पुरी और यवनों के नगर आदि देशों के राजाओं को विजय किया। सबसे दंड लेकर कच्छदेश को चला गया। वहाँ से पुलस्त्यवंशी राजा विभीषण के पास अपना दूत भेजा। विभीषण ने बात को होनहार जानकर उसके शासन को प्रीतिपूर्वक अंगीकार किया। इसके पीछे सहदेव, विभीषण के भेजे हुए नाना प्रकार के रत्न, चन्दन, अगर, दिव्य आभरण, बड़े मोलवाले

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वस्त्र और मणि आदि लेकर सब राजाओं को कर देने के नियम में स्थापित करके वहां से लौटकर इन्द्रप्रस्थ को आया और सब धन युधिष्ठिर को निवेदन करके सुखपूर्वक रहने लगा। ६२-७८।

बत्तीसवाँ अध्याय

नकुल का पश्चिम दिशा को विजय करना और वहां से लाये हुए धन को युधिष्ठिर को दे देना

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! अब नकुल के पश्चिम दिशा के विजय करने का वृत्तान्त सुनो। इस दिशा को मिथ्या वासुदेव ने भी विजय किया था। नकुल राजा युधिष्ठिर से बिदा होकर अपने साथ बड़ी भारी सेना लिये हुए पश्चिम दिशा को चल दिया। उसकी सेना में योद्धाओं की गर्ज और रथों की झंझनाहट से बड़ा भयानक शब्द होता था। पहिले वह रोहीतक पर्वत पर जो धनयुक्त रमणीक गौओं से शोभित और कार्त्तिकेयजी का प्रिय स्थान था, पहुँचा। वहां उससे मत्तमयूर नाम शूरवीरों से बड़ा युद्ध हुआ। अन्त में उसने उन दोनों को और मरुभूमि, शैरीषक और महेत्थ पहाड़ों के राजाओं को जीतकर वश में किया। इसके पीछे नकुल ने बड़ा युद्ध करके आक्रोश नाम राजऋषि को वश में किया। और दशार्ण नाम देशों के राजाओं को विजय करके वह आगे चला गया। वहां शिवी, त्रिगर्त, अम्बष्ठ, मालव, पंचकर्पट, मध्यमकेय, वाटवधान और द्विजों को जीतकर उसने पुष्करवनवासियों को अपने वश में किया। वहां से चलकर उसने उत्सव संकेत नाम गण समुद्र के किनारे बसनेवाले, ग्रामणीय अभीर गण जो सरस्वती के किनारे पर बसते थे और मत्स्यदेश के राजाओं की आज्ञा में रहते थे और सब पर्वतवासी राजाओं को विजय किया। १-१०।

वहां से आगे बढ़कर पंचनद अर्थात् पंजाब देश, अमर पर्वत और उत्तर ज्योतिष देश और कटपुर के राजाओं को वश में किया और रामठ,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

द्वारपाल, हारहूण आदि पश्चिमदेशी राजाओं को जीतकर वासुदेवजी के पास अपना दूत भेजा। उन्होंने नकुल के शासन को अंगीकार किया। फिर वहां से चलकर शाकल मद्र देशों की राजधानी पुरभेदन नाम नगर में पहुँचा और प्रीतिपूर्वक अपने मामा राजा शल्यको वश में किया। वहांसे सादर सत्कार पाकर शल्य के दिये हुये रत्नों को लेकर समुद्र की ओर मुड़ पड़ा। वहां के रहनेवाले म्लेच्छ, पल्हव, वर्वर, किरात, यवन और शकों को विजय करके दश सहस्र ऊंटों पर रत्न आदि पदार्थों को लादकर इन्द्रप्रस्थ को लौट आया और सब धन युधिष्ठिर को निवेदन कर दिया। हे राजा जनमेय ! इस प्रकार नकुल वासुदेव से निर्जित पश्चिम दिशा को विजय करके अपने घर लौट आया। ११-२०।

तेंतीसवाँ अध्याय

युधिष्ठिर का यज्ञ की सब सामग्री मँगाकर यज्ञ करने को दीक्षित होना और सब राजा और ब्राह्मण आदि को निमन्त्रण भेजना

वैशंपायनजी बोले हे राजा जनमेजय ! युधिष्ठिर के प्रजापालन सत्य और शत्रुओं के नाश करने से सब प्रजा अपने-अपने कर्मों को करने लगी। धर्म के अनुसार शासन करने और कर लेने से मनमानती वर्षा होने लगी। उसके कारण से राज्य में बड़ी वृद्धि हुई। लोग गौओं की रक्षा, खेती और व्यापार को अच्छे प्रकार करने लगे। उसके राज्य में चोरठग और राजवल्लभ अर्थात् मंत्री आदि का परस्पर मिथ्या उपचार सुनने में नहीं आया। वर्षा न होना अथवा अत्यन्त वर्षा होना और आग लगना आदि उपद्रव स्वप्न हो गये। राजा लोग युधिष्ठिर के पास कर देने अथवा उसका प्रिय काम करने या पास बैठने को आया जाया करते थे। कभी कोई राजा युद्ध आदि की इच्छा से नहीं आता था। धर्म से लाये हुए धन से युधिष्ठिर का खजाना इतना बढ़ गया कि सैकड़ों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वर्षों में भी वह खर्च नहीं हो सक्ता था। जब युधिष्ठिर ने अपने कोष को धनधान्य और वस्त्र से इतना बढ़ा हुआ देखा, तब उसने यज्ञ करने का विचार किया और उसके सब सुहृदों ने भी उसे यही सम्मत दिया कि अब तुम्हारे यज्ञ करने का समय है। उसी समय वहां श्रीकृष्णजी भी जो ऋषि पुराण और वेदों के आत्मा, जगत्कारण, जगन्मय जगदीश, अव्यय, केशी दैत्य के मारनेवाले, यादवों की रक्षा करनेवाले, आपत्ति में अभय करनेवाले, पुरुषोत्तम सब राजकाज वसुदेवजी को सौंपकर रथ में बैठकर अपने साथ बहुतसी सेना और असंख्य धन लेकर इन्द्रप्रस्थ में आ पहुँचे। और सब धन युधिष्ठिर को दे दिया।

उसका सब प्रकार से भरा हुआ खजाना उस समुद्ररूपी धन के आने से परिपूर्ण हो गया कि जिसके देखने से पांडवों के शत्रुओं के मन में शोक उत्पन्न हो गया। पुरवासी श्रीकृष्णजी को आया हुआ देखकर इस प्रकार उत्पन्न हुये जैसे सूर्य और वायुरहित स्थान से निकले हुये को सूर्य के दर्शन और वायु के स्पर्श से सुख होता है। युधिष्ठिर ने श्रीकृष्णजी से आदर सहित मिलकर और यथायोग्य सत्कार करके कुशलक्षेम पूछी। बैठने पर व्यासजी और धौम्य आदि ऋत्विज यथा भीम और अर्जुन आदि भाइयों सहित उनसे कहने लगे---हे श्रीकृष्णजी ! आपकी कृपा से सब पृथ्वी मेरे वश में है, धन भी बहुतसा इकट्ठा हो गया है, अब मेरी इच्छा उस सब धन को विधि के अनुसार ब्राह्मणों और अग्नि के निमित्त देने की है। इस कारण मैं आपको और अपने छोटे भाइयों को साथ लेकर यज्ञ किया चाहता हूँ। आप मुझको आज्ञा दीजिये और अपने को दीक्षित कीजिए। आपके यज्ञ करने से मेरे सब पाप दूर हो जायँगे और जो आपकी इच्छा न हो तो मुझे छोटे भाइयों सहित यज्ञ करने की आज्ञा दीजिए। मैं ही यज्ञ करूँगा। १-२२। यह सुनकर श्रीकृष्णजी युधिष्ठिर की प्रशंसा करने लगे—इस साम्राज्यपद के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

देनेवाले राजसूययज्ञ को करना तुम्हीं को उचित है। तुम्हारे यज्ञ करने से हम भी कृतकृत्य हो जायँगे। हम तुम्हारा कल्याण चाहनेवाले हैं। इससे हम तुम्हारे पास स्थित हैं। तुम अपनी इच्छा के अनुसार यज्ञ करो। और हमको भी कोई काम बताओ। हम तुम्हारी आज्ञा के अनुसार तुम्हारा काम करेंगे। यह सुनकर युधिष्ठिर बोले मुझको आपके आने से निश्चय विश्वास हो गया कि मेरा संकल्प सुफल और यज्ञ सिद्ध होगा। वैशंपायनजी बोले हे राजा जनमेजय ! इसके पीछे श्रीकृष्णजी से आज्ञा पाकर राजा युधिष्ठिर यज्ञ की सब चीजें इकट्ठा करने लगे—सहदेव को मंत्रियों सहित यज्ञ की सामग्री संचय करने की आज्ञा देकर कहा—तुम जो जो सामग्री धौम्यऋषि कहें सो सो ले आओ इन्द्रसेन विशोक और पुरु नाम सारथी इनको आज्ञा दी कि तुम सब अन्न, रस और गंधमय चारों प्रकार के भोजन जो ब्राह्मणों को अच्छे लगते हैं इकट्ठा करो। २३-३१।

उस समय सहदेव ने आकर युधिष्ठिर से कहा कि यज्ञ की सब सामग्री आ गई। तब व्यासजी ने मूर्तिमान् वेदों के तुल्य ब्राह्मण और ऋत्विजों को बुला लिया। उस यज्ञ में व्यासजी आप ब्रह्मा, धनंजय-गोत्री सुसामा ऋषि सामवेदी, याज्ञवल्क्यजी अध्वर्यु, वसु का बेटा पैल, धौम्यऋषि, होता, इन सबके पुत्र और शिष्य होत्रिक हुए। उन सबों ने तब वेदविधि के अनुसार पुण्याहवाचन पढ़ा और ऋत्विजों ने उस यज्ञस्थान में शिल्पविद्या जाननेवालों से अर्थात् संगतराशों से विधि के अनुसार कुण्ड और वेदी और देवताओं के स्थानों के सदृश सुगंधित स्थान बनवाये। इसके पीछे युधिष्ठिर ने सहदेव को बुलाकर आज्ञा दी कि तुम जल्दी चलनेवाले दूतों को भेजकर न्योता भेज दो। सहदेव ने यह आज्ञा पाकर दूतों को बुलाया और कहा—तुम सब देशों में जा जाकर ब्राह्मण, राजा लोग, वैश्य और मान्यशूद्रों को निमन्त्रण देकर सबको बुलावा दे आवो। ३२-४१। वैशम्पायनजी बोले हे राजा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जनमेजय ! वे दूत आज्ञा पाकर तुरन्त चल दिये और थोड़ेही काल में न्योता देकर लौट आये। इसके पीछे समय के आने पर ब्राह्मणों ने राजा युधिष्ठिर को यज्ञ करने के लिये दीक्षा दी। वह दीक्षित होकर सहस्रों ब्राह्मण, अपने सब भाई, जातिवाले, सुहृद्, मंत्री और नानादेशों से आये हुए क्षत्रिय और राजाओं सहित यज्ञशाला को गया। सब विद्याओं में परिपूर्ण और वेदांगों के जाननेवाले, ब्राह्मण लोग वहां अनेक अनेक देशों से आकर इकट्ठे हुए। शिल्पियों ने उनके लिये राजा की आज्ञा से पृथक् पृथक् ऐसे स्थान बना दिये जिनमें सब ऋतुओं में सुख रहे। उन सब स्थानों में अन्न और वस्त्र आदि सब आवश्यक पदार्थ रखवा दिये गये। ब्राह्मण लोग उन स्थानों में अनेक कथा कहते और नट आदि नाचनेवालों के कृत्य अर्थात् तमाशा देखते हुए रहने लगे। ब्राह्मणों के खाने, बोलने और प्रसन्न होने में बड़ा भारी शब्द होने लगा। जहाँ देखो तहाँ यही सुनाई देता था, इनको दो, उनको दो, भोजन करो, राजा युधिष्ठिर ने उस यज्ञ में गोशयन और सुवर्ण की स्त्रियां एक लाख पृथक् पृथक् दान कीं और वह यज्ञ इस पृथ्वी पर ऐसा हुआ जैसा इन्द्र का यज्ञ स्वर्ग में हुआ था। इसके पीछे युधिष्ठिर ने नकुल को भीष्म, द्रोणाचार्य, धृतराष्ट्र, विदुर, कृपाचार्य और सब भाइयों को हस्तिनापुर जाकर लाने की आज्ञा दी। ४२-५५।

चौंतीसवाँ अध्याय

निमंत्रण पाने पर युधिष्ठिर के यज्ञ में सहस्रों ब्राह्मणों और राजाओं का आना और राजा युधिष्ठिर का उनको सुंदर घरों में टिकाकर सत्कार करना

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय ! युधिष्ठिर की आज्ञा पाकर नकुल हस्तिनापुर को गया। वहाँ भीष्म और धृतराष्ट्र आदि को निमंत्रण दिया। तब वहां से द्रोणाचार्य आदि सब लोग ब्राह्मणों को आगे करके यज्ञशाला को चल दिये। सैकड़ों मनुष्य यज्ञ की खबर पा पाकर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

प्रसन्नतापूर्वक इन्द्रप्रस्थ में चले आये। बहुत से क्षत्रियलोग युधिष्ठिर और उसकी सभा को देखने के लिये वहां पर आये। राजा धृतराष्ट्र, भीष्म, विदुर, दुर्योधन आदि सब भाई सुबल, शकुनि, अचल, वृषक, कर्ण, शल्य, वाह्लीक, कौरव, सोमदत्त, भूरिभूरिश्रवा, शल, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य, राजा जयद्रथ, यज्ञसेन, राजा शाल्व अपने पुत्र सहित, राजा भगदत्त, पहाड़ी सब राजा जिनके साथ सागर और अनूपवासी म्लेच्छ भी थे, राजा बृहद्बल, पौंड्रक, वासुदेव, वंगदेश का राजा, कलिंगदेश का राजा आकर्ष, कुंतल, मालवदेश के राजा लोग, आंध्रक-द्राविड़, सिंहल, राजा काश्मीर का, राजा कुंतिभोज, राजा गौरवाहन, वाह्लीकदेश के राजा लोग, दोनों पुत्रों सहित राजा विराट, मावेल्ल, नाना देश के राजा लोग और राजपुत्र, पुत्र सहित राजा शिशुपाल, बलदेवजी, अनिरुद्ध, सारण, कंक, गद, प्रद्युम्न, साम्ब, चारुदेष्ण, उल्मुक, मिषठ, आगावह, वृष्णिवंशी और मध्यदेशवासी राजा लोग अनेक प्रकार के रत्न ले लेकर उस युधिष्ठिर के यज्ञ में आये। राजा युधिष्ठिर ने उन सबका सत्कार यथायोग्य किया और उन सबको पृथक् पृथक् घर रहने को बता दिये। जिनमें कुयें खुदे हुए, वृक्ष लगे हुए और अनेक प्रकार के भोजनों की सामग्री रक्खी हुई थी। राजा लोग युधिष्ठिर से सत्कार पाकर उन घरों में जा टिके। ये घर कैलास के शिखर के समान इतने ऊंचे थे कि चार कोस से अच्छे प्रकार से दिखाई देते थे। सुडौल बने हुये द्रव्य से भूषित और सुवर्ण के जालों से अंकित थे। पृथ्वी अर्थात् फर्श उन घरों का मणिजटित था। ऊपर चढ़ने को सुन्दर सीढ़ियां बनी हुई थीं। बड़े बड़े बिछौने को आसन, फूलमाला और अगर आदि सुगंधित पदार्थ वहां स्थापित थे। रंग उन घरों का हंस और चन्द्रमा के समान श्वेत था। सब अंग उनके अनेक अनेक धातुओं से जटित थे मनुष्यों को वहां रहने से किसी बात की पीड़ा नहीं होती थी। राजा लोग उन घरों में विश्राम करके राजा युधिष्ठिर को जो बहुत से सदस्यों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सहित यज्ञशाला में बैठा हुआ था, देखने को गये। वह सभा उन सब राजा, महर्षि और ब्राह्मणों से ऐसी शोभायमान हो गई जैसे स्वर्ग देवताओं से सुशोभित होता है। १२-२५।

पैंतीसवाँ अध्याय

युधिष्ठिर का पृथक् पृथक् कामों पर पृथक् पृथक् मनुष्यों को नियत करके यज्ञ करना

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! सब ब्राह्मण और राजा लोगों के जुड़ने पर युधिष्ठिर अपने बाबा भीष्म और गुरु द्रोणाचार्य के पास गया। दंडवत् करके उनसे और कृपाचार्य, दुर्योधन और विविंशति से कहा—आप लोग मेरे ऊपर अनुग्रह करके ऐसा काम कीजिए जिससे मेरा कल्याण होवे। यह कहकर युधिष्ठिर ने उन सबको पृथक् पृथक् अधिकारों पर नियुक्त किया। अर्थात् खाने पीने के प्रबन्ध के लिये दुःशासन को, ब्राह्मणों के परिग्रह के निमित्त अश्वत्थामा को, राजाओं का सत्कार करने के लिये संजय को, विना तैयार पदार्थों को देखने के लिये भीष्मजी को, द्रोणाचार्य को रत्न, सुवर्ण आदि देखने को, दक्षिणा बांटने पर कृपाचार्य को और अन्य कामों पर और और मनुष्यों को नियत किया। वाह्लीक, धृतराष्ट्र, सोमदत्त और जयद्रथ जिनको नकुल आप जाकर लाया था, वहां पर स्वामी अर्थात् मालिक की तरह रहने लगे। उस यज्ञ में सब खर्च विदुरजी करते थे। जो भेंटें राजा लोग लाते थे, उनको दुर्योधन लेता था। उत्तम फल पाने की इच्छा से श्रीकृष्णजी ब्राह्मणों के चरण धोते थे। १-१०।

युधिष्ठिर को किसी राजा ने उस यज्ञ में एक सहस्र से कम भेंट नहीं दी। यह विचार करके कि किसी प्रकार हमारा यह कौरवकुल का राजा रत्नों को दान देकर राजसूययज्ञ करे। सबों ने रत्न दे देकर युधिष्ठिर के रत्नों की वृद्धि की और जो राजा लोग ईर्षी थे उन्होंने भी धन भेंट किया।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उस समय युधिष्ठिर की सभा उन भवनों से जो रत्नरूपी ऋद्धि, ब्राह्मण और बड़े बड़े लक्ष्मीवान् और प्रतापवान् राजाओं से भरे हुए थे और उनके ऊपर इन्द्र आदि लोकपालों के विमान छा रहे थे, अत्यन्त सुशोभित हो गई। तब युधिष्ठिर ने जिसकी ऋद्धि वरुण के समान थी, उस यज्ञ में स्थापित की हुई छः अग्नियों में हवन किया। तथा सब मनुष्यों को उनकी कामना के अनुसार तृप्त किया। उस यज्ञ में इड़ा आज्य नाम होम की आहुतियों के मंत्रों को जाननेवाले महर्षियों के द्वारा सब देवता, दक्षिणा अन्न, बहुत धन के दानों से ब्राह्मण लोग और अन्य अन्य वर्ण के मनुष्य तृप्त हो गये। ११-१६।

छत्तीसवाँ अध्याय

राजा युधिष्ठिर का यज्ञस्नान करना और भीष्मजी के कहने से श्रीकृष्णजी को अर्घ देना

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! अभिषेक अर्थात् यज्ञस्नान के दिन सत्कार के योग्य ब्राह्मण और राजा लोग जो महाऋषि थे अन्तरवेदी के भीतर गये। उस समय नारदादिक ऋषि लोग उन राजऋषियों के समीप अन्तरवेदी में बैठे हुए ऐसे मालूम होते थे, मानो ब्रह्माजी के भवन में देवता और देवऋषि बैठे हुये हैं। जब यज्ञस्नान हो चुका तब ब्राह्मण लोग आपस में शास्त्र का विचार करने लगे। उन में बहुत से ब्राह्मण जो वितण्डावादी थे कहने लगे—यह ऐसेही है, तुम कहते हो वैसे नहीं है, दूसरे बोले—यह अन्यथा नहीं हो सकता जैसे हम कहते हैं, वैसेही है। बहुत से ब्राह्मणों ने अनेक हेतु दिखाकर और शास्त्र का प्रमाण दे देकर प्रबल अर्थ को दुर्बल और दुर्बल को प्रबल कर दिखाया। बहुत से पण्डितों ने अनेक अर्थ अनुमान से ऐसे खैंच लिये जैसे आकाश में श्येन पक्षी मांस खैंचकर ले जाता है। इस प्रकार वे ब्राह्मण लोग जिनमें कोई कोई धर्म के अर्थों के और कोई कोई

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

भाष्य आदि के जाननेवाले थे, शास्त्रविनोद करते रहे । वह वेदी उन सबसे और महर्षियों से ऐसी प्रकाशमान होगई जैसे आकाश तारागणों के निकलने से होजाता है । उस वेदी के पास युधिष्ठिर के बैठने पर कोई शूद्र या अव्रती मनुष्य नहीं जाने पाया । नारदजी युधिष्ठिर की लक्ष्मी और यज्ञको देखकर प्रसन्न हुये । १-१० ।

उस समय नारदजी को क्षत्रियों का समागम देखकर वह बात याद आई, जो पहिले ब्रह्माजी की सभा में सब देवताओं के पृथ्वी पर अपने अपने अंश से अवतार लेने के विषय में हुई थी । विचार करने लगे—श्रीहरि भगवान् जो असुरों को नाश करनेवाले और समर्थ हैं, उन्होंने क्षत्रियों के कुल में जन्म लिया है । उन्होंने देवताओं से कहा था, तुम सब जन्म लेकर परस्पर मारकर फिर स्वर्ग में चले आना । सो उस जगदीश्वर ने देवताओं से उक्त रीति से कहकर आप यदुकुल में जन्म लिया है, उस वंश में इस प्रकार से लक्ष्मी सहित शोभायमान हैं जैसे नक्षत्रों से चन्द्रमा सुशोभित होता है । जिस देवता को इन्द्रादिक सब देवता उपासना करते हैं, वही विष्णुभगवान् अब इस क्षत्रियकुल में प्रकट होकर सब क्षत्रियों को अपने रूप में लय करना चाहते हैं । यह बड़ा आश्चर्य है, यह समझ कर युधिष्ठिर के समीप बैठे हुये नारदजी उस यज्ञशाला में चिन्ता करने लगे । ११-२१ । इसी अवसर में भीष्मजी राजा युधिष्ठिर से बोले—तुमको सब आये हुये राजाओं की यथा-योग्य पूजा करनी उचित है, क्योंकि आचार्य, ऋत्विज्, श्वशुर आदि सम्बन्धी स्नातक, ब्रह्मचारी, मित्र और राजा इन छः को अर्घ देना और इनकी पूजा करना जो वर्ष दिन पीछे अपने पास आवे तो उचित है । सो ये लोग तो हमारे पास बहुत दिनों में आये हैं इन प्रत्येक को तुम्हें अर्घ देना उचित है । इनमें जो श्रेष्ठ और समर्थ हैं उनको पहले अर्घ देना चाहिए । यह सुनकर युधिष्ठिर बोला—बहुत श्रेष्ठ है परन्तु अब आप यह बताइए कि इनमें से हम पहले अर्घ किसको दें । आप किस

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

को सबमें श्रेष्ठ जानते हैं। यह सुनकर भीष्मजी बोले—हमारी समझ में श्रीकृष्णजी सबसे श्रेष्ठ हैं। पहिले उनका पूजन होना उचित है, क्योंकि इन सब के बीच में श्रीकृष्णजी अपने तेज और पराक्रम से इस प्रकार प्रकाश कर रहे हैं जैसे ज्योतियों में सूर्य प्रकाश करता है और यह हमारी सभा उनके यहाँ होने से ऐसी प्रकाशित और प्रसन्न है जैसे सूर्य और वायु रहित स्थान में रहनेवाला मनुष्य, सूर्य के प्रकाश और वायु के स्पर्श से प्रसन्न होता है। इसके पीछे भीष्मजी की आज्ञा से सहदेवने उठकर श्रीकृष्णजी को विधिपूर्वक अर्घ दिया। श्रीकृष्णजीने उसको अंगीकार किया, परन्तु इस बातको चन्देरी का राजा शिशुपाल न सहसका। वह युधिष्ठिर और भीष्म पितामह के पास आकर श्रीकृष्णजी की निन्दा करने लगा। २२-३२।

सैंतीसवाँ अध्याय

राजा शिशुपालका श्रीकृष्णचन्द्रजी की पूजा होना देखकर युधिष्ठिर भीष्म और श्रीकृष्णजी की निन्दा करना

शिशुपाल बोला हे युधिष्ठिर! तुमको इस वृष्णिवंशी कृष्णकी पूजा महात्मा राजाओं को छोड़कर राजाओं के समान करना उचित न था। तुम राजा पांडु के पुत्र हो, तुम्हारा यह आचार तुम्हारे योग्य न था। तुम सब अभी बालक अर्थात् अज्ञानी हो, धर्मकी गति बड़ी सूक्ष्म है। इस गंगापुत्र भीष्म को वृद्धावस्था के कारण शास्त्रका सिद्धांत स्मरण नहीं रहाहै। भीष्म से अधर्मी मनुष्य की (जो अपनी इच्छापूर्वक काम करता है) कौन ऐसा होगा जो निन्दा न करेगा। वृष्णिवंशियों में कोई राजा नहीं होता, उसी वंश का यह कृष्ण भी है। फिर राजाओं में उसकी पूजा राजाओं की तरह होना क्योंकर योग्य है। जो तुमने कृष्ण की पूजा वृद्ध जानके की है तो उसके पिता वसुदेव के यहाँ होने पर उसकी पूजा होना उचित न था। जो कृष्ण को तुमने अपना प्रिय

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

करनेवाला समझ कर पूजा है तो भी उसकी पूजा होना न चाहिए क्योंकि राजा द्रुपद तुम्हारे सम्बन्धी मौजूद हैं। यदि कहो कि श्रीकृष्ण आचार्य हैं तो द्रोणाचार्य के होते हुए उसकी पूजा करना क्योंकर ठीक है। यदि श्रीकृष्ण को तुमने ऋत्विज् जानकर पूजा है तो व्यासजी के होते हुए ऐसा करना तुमको कब उचित था। १-६।

हे युधिष्ठिर! श्रीकृष्ण न ऋत्विज् है, न आचार्य है, न राजा है फिर किस कारण और प्रयोजन से तुमने भीष्म, अश्वत्थामा जो सब शास्त्रों में पण्डित है दुर्योधन, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य, राजा भीष्मक, राजा रुक्म, राजा एकलव्य, मद्रदेश के राजा शल्य और कर्ण को जो परशुरामजी का शिष्य है और जिसने अपने पराक्रम से सब राजाओं को जीता है छोड़कर इसकी पूजा की है। जो तुमको कृष्णही की पूजा करनी थी, तो हम सब को बुलाना क्या आवश्यक था? हमने तुमको 'कर' कुछ तुम्हारे भय, लोभ या तुमसे साम अर्थात् सुलह रखने के लिये नहीं दिया था। केवल तुम्हारी प्रीति से और तुमको धर्ममार्ग में प्रवृत्त जान कर दिया था। सो तुमने हम सबमें से एकको भी न मानकर कृष्ण की पूजा की। १०-२०। भला इस अपमान से बढ़कर और क्या होगा। सब तिलकधारी राजाओं को तिरस्कार करके एक ऐसे मनुष्य की पूजा उन्हीं राजाओं में की जो राजचिह्नों से अत्यन्त हीन था। हे युधिष्ठिर! संसार में तुम्हारा यश तो यह हो रहा है कि युधिष्ठिर बड़ा धर्मात्मा है, परन्तु अब वह धर्म तुम्हारा कहाँ गया। भला ऐसा कौन धर्मी होगा जो इसकी पूजा करेगा। जिसने वृष्णिवंश में उत्पन्न हो अपने राजा को मारा और जरासन्ध को अन्याय से मरवाया। इससे हे युधिष्ठिर! हम जानते हैं कि अब तुम्हारी धर्मात्मता जाती रही और तुम को कृपणता ने घेर लिया है। सिवाय इसके जो तपस्वी पांडवों ने भय और कृपणता के कारण से ऐसा भी किया तो हे कृष्ण! तुमको यह समझना उचित था कि मैं इस पूजा के योग्य हूं या नहीं। तुमने पूजा के अयोग्य

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

होने पर इन कृपण पांडवों से अपनी पूजा क्यों कराई है? तुम्हारा ऐसा अयोग्य करना ऐसा है जैसे निर्जन स्थान में हविष् को कुत्ते का निडर होकर खाना। इससे तुम यह न समझना कि राजाओं का अपमान हुआ है। पांडवों ने पूजा के बहाने से यह तुम्हारी हँसी की है। यह तुम्हारी पूजा होना इस प्रकार से है जैसे नपुंसक का विवाह करना, अंधे को कुछ दिखाना और जो राजा नहीं है उसको राजा के समान पूजना हम युधिष्ठिर भीष्म और तुम तीनों को देख चुके। ये तीनों जैसे हैं तैसे हैं यह कहकर शिशुपाल उस सभा में से उठकर अपने पक्षके राजाओं सहित बाहर चलागया। २१-३१।

अरतीसवाँ अध्याय

राजा युधिष्ठिर का शिशुपाल को समझाना और भीष्मजी का श्रीकृष्णजी की महिमा कहकर उनका पूजन होना योग्य बताना

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! शिशुपाल के चले जाने पर राजा युधिष्ठिर उसके पास गया और सांत्वना के साथ कहने लगा—हे शिशुपाल! तुमको ऐसा कहना उचित नहीं है। परुष वचन बोलना बड़ा अधर्म और निरर्थक है। तुम कहते हो कि भीष्मजी धर्म नहीं जानते हैं, यह बात कदापि नहीं है। तुमको ऐसा अयोग्य अपमान करना उचित नहीं है। देखो तुमसे बड़े बड़े वृद्ध राजा लोग यहाँ बैठे हुए हैं जैसे वे श्रीकृष्णजी की पूजा में तर्क नहीं करते हैं ऐसेही तुम भी मत करो। भीष्मजी श्रीकृष्णजी को तत्त्वपूर्वक जानते हैं। तुम उनको उस प्रकार से नहीं समझते हो। इतने में भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठिर! यह सांत्वना वचन कहने के योग्य नहीं है, क्योंकि यह श्रीकृष्ण की पूजा को जो लोक के वृद्धतम हैं नहीं देख सकता है, जो क्षत्रिय युद्ध में क्षत्रिय को जीत कर छोड़ देता है वह हारे हुए का गुरु अर्थात् बड़ा होता है सो मैं इन सब बैठे हुए राजाओं में से एक को भी ऐसा नहीं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

देखता हूँ जिसको कृष्ण न जीत सकें। ये श्रीकृष्ण अच्युत हैं। इनका पूजन करना केवल हमको ही उचित नहीं है, किन्तु ये तीनों लोक के पूज्य हैं। श्रीकृष्णजी ने बहुत से श्रेष्ठ क्षत्रियों को रण में जीता है और सम्पूर्ण जगत् इन्हीं के शरीर में व्याप्त है। १-१०।

इसी कारण हमने इनको सबसे श्रेष्ठ जानकर पूजा की है। तुमको ऐसा कहना तुम्हारी बुद्धि के योग्य नहीं है। हमने बहुत से ज्ञानियों का सत्संग किया है और उन सबसे श्रीकृष्णजी के बालपन से लेकर आज तक के चरित्र सुने हैं। उन चरित्रों को बहुत से श्रेष्ठ पुरुष मानते हैं। सो जैसा तुम कहते हो हमने उनकी पूजा किसी कामना के कारण नहीं की है। यह पूजा किसी प्रकार सम्बन्ध अथवा उपकार को समझ कर नहीं हुई है। केवल श्रीकृष्णजी के यश, शूरता और जय को मानकर हमने की है। इन सब राजाओं में कोई ऐसा बालक भी नहीं है, जिसकी परीक्षा हमने न कर ली हो, सो हमने इनको पूज्यतम वृद्धों को छोड़कर इनके गुणों के कारण से माना है। ब्राह्मणों में अधिक ज्ञानी, क्षत्रियों में अधिक बलवान्, वैश्यों में अधिक धनी, और शूद्रों में अधिक आयु रखनेवाला पूजन योग्य होता है। श्रीकृष्णजी को हमने दो गुणों के कारण से पूज्य माना है। एक तो श्रीकृष्णजी सबसे बलवान् हैं, दूसरे सब वेद और वेद के अंगों को जानते हैं। इनसे बड़ा मनुष्य संसार में कौन है। इनमें धन, चतुराई, शास्त्र, शूरता, लज्जा, कीर्ति, उत्तम बुद्धि, नम्रता, लक्ष्मी, धृति, पुष्टि और तुष्टि आदि सब गुण मौजूद हैं। ११-२०।

इससे चाहे तुम इनको गुरु समझो, चाहे आचार्य, और पिता ये सब प्रकार से पूजन के योग्य हैं। तुमको इनके पूजन में शंका करना उचित नहीं है। ऋत्विज्, गुरु, स्नातक, ब्रह्मचारी, राजा और मित्र सबकी सम्भावना इनमें हो सकती है। इसी से इनकी पूजा प्रथम की गई है। ये श्रीकृष्ण जगत् की उत्पत्ति का कारण, अविनाशी, चराचरमय,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अव्यय, सनातन और सब से परे हैं। बुद्धि, मन, वायु, तेज, जल, आकाश और पृथ्वी और चारों प्रकार के जीव और सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र, ग्रह, दिशा और विदिशा सब इन्हीं की शक्ति से स्थित हैं। वेदों में अग्निहोत्र, वेदके छन्दों में गायत्री, मनुष्यों में राजा, नदियों में समुद्र, नक्षत्रों में चन्द्रमा, तेजों में सूर्य, पर्वतों में मेरु, पक्षियों में गरुड़ तथा जगत् की ऊँची नीची और तिरछी गति, देवताओं और लोकों में श्रीकृष्णजी प्रधान हैं। सो यह शिशुपाल अपने अज्ञान के कारण ऐसा कहता है। यह नहीं जानता है कि श्रीकृष्ण सर्वव्यापी हैं। २१-३०। इसकी बुद्धि की गति धर्म के देखने में उतनी नहीं है, जितनी बुद्धिमान् और धर्म को जाननेवाले की होती है। भला महात्मा राजाओं में चाहे बालक हो, चाहे वृद्ध, ऐसा कौन होगा जो श्रीकृष्ण के पूजन को योग्य न बतावेगा। अथवा उनकी पूजा न करेगा, और जो यह शिशुपाल उनकी पूजा होने को खोटा काम बताता है तो इस पापका जो फल है वह इसको शीघ्र मिलेगा। ३१-३३।

उन्तालीसवाँ अध्याय

श्रीकृष्णजी की पूजा होने पर सब राजाओं का क्रोध करके यज्ञ विध्वंस करने को सलाह करना और युद्ध के लिये उपस्थित होना

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! भीष्मजी उक्त रीति से कहकर जब चुप हो रहे, तब सहदेव क्रोध करके बोला—हमसे पूज्यमान कृष्ण की पूजा को जो राजा न सह सकेगा उसके शिरपर हम लात रक्खेंगे, जिस किसी को हमारी इस बात का उत्तर देना हो वह देवे, हम उसी को मार डालेंगे। हमने श्रीकृष्णजी की पूजा पितर, गुरु, आचार्य और सब प्रकार से बड़ा जानकर की है। यह सुनकर सब मानी और बलवान् राजा चुपके बैठ रहे। किसी ने कुछ उत्तर नहीं दिया। तब सहदेव के ऊपर आकाश से फूलों की वर्षा हुई और साधु-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

साधु कहकर आकाशवाणी अन्तरिक्ष में गूँजने लगी। उस समय नारदजी ने जो संशय के दूरकर्ता और सब लोकों के जाननेवाले थे कहा—जो मनुष्य कमलनयन कृष्ण की पूजा नहीं करता है, वह मृतक के समान है। और उस से बात करना योग्य नहीं है। वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय ! इस के पीछे सहदेव ने सब पूजायोग्य ब्राह्मण और क्षत्रियों की पूजा करके उस कर्म को समाप्त किया। उस समय श्रीकृष्णजी की पूजा होना देखकर राजा शिशुपाल क्रोध से लाल लाल आँखें करके राजाओं से कहने लगा—कहो तुम सब लोगों की क्या इच्छा है, मेरी समझ में हम सब मिलकर पांडव और यादवों से युद्ध करें और इनके यज्ञ को विध्वंस करदें। यह सुनकर सब राजा क्रोध से विवर्ण होगये और शिशुपाल के पास जाकर कहने लगे कि ऐसा करो जिसमें युधिष्ठिर का अभिषेक और कृष्ण की पूजा न होने पावे। ऐसा निश्चय करके वह सब क्रोध से मूर्च्छित हो गये और उनका शरीर ऐसा दीखने लगा, जैसे मांस से हटाये हुये सिंह गर्जते हैं। उस समय श्रीकृष्णजी को यह हाल मालूम हुआ कि समुद्र के समान सब राजाओं के समूह सेना सहित युद्ध करने के लिये उपस्थित हुये हैं। १-१८।

चालीसवाँ अध्याय

युधिष्ठिर का सब राजाओं को युद्ध के लिये तय्यार देखकर भीष्मजी से उपाय पूछना और भीष्मजी का श्रीकृष्ण की महिमा कहकर युधिष्ठिर का भय दूर करना

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय ! राजा युधिष्ठिर उस क्रोध भरे हुए सागररूपी राजमंडल को युद्ध के लिये प्रतिज्ञा करते हुए देख कर अपने कुलके वृद्धपितामह भीष्मजी से, इस प्रकार पूछने लगा मानो इन्द्र बृहस्पति से पूछता है कि हमको अब इस समय क्या करना

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उचित है, जिससे हमारा यज्ञ विध्वंस न हो और सब प्रजा का हित होवे। १-४। यह सुन भीष्मजी बोले—तुम किसी बात का भय मत करो, कहीं कुत्ते भी सिंह को मार सकते हैं। मैंने तुम्हारे कल्याण की राह पहले ही से विचार रक्खी है। ये सब श्वानरूपी राजा तबतक भूक रहे हैं, जबतक सिंहरूपी कृष्ण सोरहे हैं, जिस समय श्रीकृष्ण जागेंगे उस समय ये सब राजा कुत्तों की तरह यहाँ से भागेंगे। मेरी समझ में शिशुपाल इन सब राजाओं को यमलोक को पहुँचाना चाहता है, और श्रीकृष्णजी इस शिशुपाल के शरीर के तेज को खींचना चाहते हैं। शिशुपाल सहित इन सब राजाओं की बुद्धि का नाश होना और कुछ नहीं है, केवल इन श्रीकृष्णजी की वैष्णवी माया है, जिस जिस मनुष्य को ये अपने में लय करना चाहते हैं, उसकी बुद्धि ऐसे ही हो जाती है जैसी शिशुपाल की बुद्धि इस समय हो गई है। हे युधिष्ठिर! तुम भय मत करो। इस संसार में चारों प्रकार के जीवों के उत्पन्न और नाशकर्ता श्रीकृष्णजी हैं। ५-१५।

एकतालीसवाँ अध्याय

राजा शिशुपाल का भीष्मजी के प्रति की निंदा करना

बोला हे भीष्म! तुम कुल के नाश करनेवाले हो, तुमको वृद्ध होकर राजा लोगों को बहुत से डर दिखानेवाली बातें कहते हुए लज्जा नहीं आती है, तुम तो कौरवों में सब से उत्तम हो। इस तीसरेपन में तुमको ऐसी अधर्म की बात कहना उचित नहीं है। तुमको आगे करके इस कौरव कुल की गति ऐसी है जैसे नाव; नावके पीछे और अंधा अंधे के पीछे चले अर्थात् तुम अज्ञानी हो और तुम्हारे पीछे चलनेवाले सब कौरव भी ऐसे ही हैं। तुमने इस श्रीकृष्ण के पूतनावध आदि जो कर्म कहे उनमें क्या ऐसा है जिससे यह ब्रह्म समझा जावे। बड़े दुःख की बात है कि कृष्ण के गुणों को ब्रह्म के समान कहने पर तुम्हारी जीभ के सौ टुकड़े नहीं होते हैं। १-५।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जिस कृष्ण की निंदा बालकों को भी करना उचित है, उसकी प्रशंसा तुम वृद्ध और ज्ञानी होकर कहते हो। इसने जो बालकपन में बकासुर, केशी और वृषासुर दैत्यों को जो युद्ध करना नहीं जानते थे, मारा है, उसमें क्या आश्चर्य की बात है। और जो इसने अपने पाँव से शकट को जो जड़ पदार्थ है, गिरा दिया उसमें क्या अद्भुत बात इसने की। इसने जो वाल्मीकि के समान पहाड़ को उठाकर सात दिन तक अपने हाथ पर धारण किया है, उसमें तुमको क्या विचित्र बात जान पड़ती है। और जो इसने बालकपन में गोवर्धन पहाड़ पर बहुत सा अन्न खाया है उसमें कौनसी बात आश्चर्य की है। ९-१०। जिसके अन्न को खाकर यह बलवान् हुआ था उसी कंस को इसने मार डाला, इस निंदित कर्म के करने में भी कोई अद्भुत बात नहीं है। हे भीष्म! तुम अधर्मी और अपने कुल में अधम हो। तुमने अभी संतों का मत नहीं सुना है। उसको हम कहते हैं—मनुष्य को स्त्री, गौ, ब्राह्मण, अन्नदाता और जिसके पास रहे इन पाँचों पर शस्त्र चलाना उचित नहीं है। संतलोग सबको यही शिक्षा करते हैं, परन्तु तुम्हारा आचरण हमको इस धर्म के विपरीत देख पड़ता है। तुम कौरवों में नीच हो, बार-बार कृष्ण को वृद्ध और ज्ञानवृद्ध कहते हो, मानों मैं कृष्ण को जानता ही नहीं हूँ। हे भीष्म! यह कृष्ण गौ अर्थात् वृषासुर और स्त्री अर्थात् पूतना का मारनेवाला है। इसकी तुमने पूजा की है, ऐसे खोटे काम करने पर यह पूजा के योग्य क्योंकर हो सक्ता है। तुम्हारी प्रकृति नीच और बुद्धि अशुद्ध है। तुम्हारे ही सत्संग से पांडवों की भी बुद्धि पाप करनेवाली होगई है। भला जिन पांडवों के तुमसे उपदेशक और कृष्ण से पूज्य होवें, वे पांडव सत्पुरुषों के मार्ग से भ्रष्ट क्योंकर न होवें। ११-२०।

ऐसा कौन ज्ञानी होगा जो अपने को धर्म का अधिकारी जान कर ऐसा काम करे, जैसा तुमने धर्मदर्शी होने पर किया है। तुम कहते हो कि हम धर्म को जानते हैं, और हमारा बहुत कुछ जाना हुआ है, तो तुम

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

राजा काशी की अंबा नाम कन्या को जो दूसरे राजा से अपनी प्रीति रखती थी, उसे क्यों हरकर ले आये थे। विचित्रवीर्य सत्पुरुषों के मार्ग पर चलनेवाला था, जिसने उस तुम्हारी लाई हुई कन्या को अंगीकार नहीं किया, तुम्हारे देखते-देखते उसकी स्त्रियों के दूसरे मनुष्यों से संतान उत्पन्न हुई, तुम्हारा धर्म कुछ नहीं है और ब्रह्मचर्य भी तुम्हारा वृथा है। क्योंकि इस ब्रह्मचर्य व्रत को तुमने क्लीब और मोह होने के कारण से धारण कर रक्खा है। मुझको तुममें धर्म का लेशमात्र भी होना नहीं दिखाई देता। तुम्हारे इस प्रकार से धर्म के कहने से जान पड़ता है कि तुमने वृद्धों की सेवा नहीं की है। मनुष्य कहते हैं कि यज्ञ करना, दान देना, वेद पढ़ना और ऐसा यज्ञ करना जिसमें बहुतसी दक्षिणा खर्च हो, पुत्र के होने के सोलहवें भाग की भी बराबर नहीं होते हैं। यह भी उन लोगों का मत है कि बहुत से व्रत और उपवासों के करने का फल संतानहीन मनुष्यों को नहीं मिलता है। इसलिए हमको ऐसा जान पड़ता है कि अब तुम संतानहीन और वृद्ध होकर अधर्म पर चलने के कारण हंस की तरह हम सबके हाथों से मारे जाओगे। हमने सब इतिहास पहले ज्ञानियों से सुना था, तुमसे भी अब उसको कहते हैं। २१-३०।

पहले समय में समुद्र के किनारे पर एक धर्म का उपदेश करनेवाला हंस रहता था। वह पक्षियों को तो उपदेश किया करता था, परन्तु आप उसके विपरीत चलता था। उसके मुख से पक्षी सदैव यह सुना करते थे कि धर्म करो, अधर्म मत करो। वे पक्षी उसको धर्म के कारण से भक्ष्य और भोजन ला लाकर दिया करते थे। एक समय ऐसा हुआ कि वे सब पक्षी अपने अंडों को उस हंस के पास छोड़ कर चले गये और चलते फिरते समुद्र में डूब गये। तब वह पापी हंस उन पक्षियों के अंडों को खा गया। इसी प्रकार वह हंस जब पक्षी चले जाते या नष्ट हो जाते थे तब उनके अंडों को खा लिया करता था। जब बहुत अंडे क्षय होने लगे,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तब उन पक्षियों में से एक ज्ञानी पक्षी को संदेह हुआ और उसने एक दिन छिपकर उस हंस के खोटे कर्म को देख करके दूसरे पक्षियों से कहा, जब उन्होंने भी उसके मिथ्या चलन को देख लिया तब सबने मिल-कर उस हंस को मार डाला। इसी प्रकार से हंस की तरह तुम भी सब जातिवालों के हाथ से मारे जाओगे। हे भीष्म ! हम तुमसे अब पुराणों को जाननेवाले मनुष्यों के मत को भी कहते हैं। ३१-४०। वह यह है कि काम और क्रोध आदि से अंतरात्मा के अभिहत होने पर तुमको धर्म की बातें कहना ऐसी हैं जैसे वह हंस मलिन अंतःकरण होने पर धर्म का उपदेश करता था। सो हंस की तरह तुम्हारा अंडों को खा लेने का कर्म अर्थात् धर्म का उपदेश तो कर देना, परंतु उसके अनुसार आप न करना तुम्हारे कहने के विपरीत है। ४१।

बयालीसवाँ अध्याय

शिशुपाल के रूखे वचनों को सुनकर भीमसेन का क्रोध करना और भीष्म का उसके क्रोध को शांत करना

शिशपाल बोला कि राजा जरासंध जो बड़ा पराक्रमी और ज्ञानी था, कृष्ण से यही जानकर उसने युद्ध नहीं किया था कि यह दास है। परन्तु उसने भीमसेन और अर्जुन को साथ ले जाकर जरासंध के मारने के लिये जो कर्म किया उसको कौन अच्छा मानता है। जो कृष्ण छल से ब्राह्मणरूप धरकर जिधर राह न थी, उस राह से न जाते तो कदापि जरासंध के प्रभाव को न देख सकते और यही कारण था कि उसने इस दुरात्मा कृष्ण को पाद्य अर्घ नहीं दिया। केवल इसको भीमसेन और अर्जुन के साथ भोजन करने के निमित्त ही पूछा था, परन्तु इसने वैर के कारण से भोजन करना अंगीकार नहीं किया। तुम अपनी मूर्खता से जो यह कहते हो कि कृष्ण जगत् का कर्ता है तो इसने छल करके ब्राह्मण स्वरूप क्यों धारण किया। अपने स्वरूप से जरासंध के पास

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

क्यों नहीं गया ? हमको बड़ा आश्चर्य है कि तुमने पांडवों को धर्म मार्ग से हटा दिया है और वे अभीतक उसी को अच्छा जानते हैं, परन्तु ऐसा होना भी कुछ बड़ा अद्भुत नहीं है, क्योंकि उनके शिक्षक तो तुम हो जिनका शरीर वृद्ध और धर्म स्त्रियों के समान है। १-८। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय ! भीमसेन शिशुपाल के उक्त रूखे वचनों को सुनकर अत्यन्त क्रोधित हो गया। कमल के समान उसकी दोनों आँखें लाल लाल हो गईं और भृकुटी के टेढ़े होने से उसके ललाट पर तीन रेखाएँ ऐसी पड़ गईं जैसे त्रिकूट पहाड़ पर गंगाजी तीन धारा होकर बहती हैं। उस समय भीमसेन क्रोध से अपने दाँतों को पीसने लगा और उसका मुख ऐसा सबको दिखाई दिया, मानों प्रलयकारक काल है, इस प्रकार से भीमसेन क्रोधित होकर शिशुपाल के मारने को दौड़ा, परन्तु उसको भीष्म ने जल्दी से इस प्रकार पकड़ लिया जैसे देवताओं का ईश्वर महासेन को पकड़े और नाना प्रकार की बातें कहकर उसके क्रोध को शान्त किया। वह भी यद्यपि शिशुपाल के मारने को उठा था, परन्तु उसने अपने बड़े की आज्ञा को इस प्रकार से उल्लंघन नहीं किया जैसे समुद्र अपनी मर्यादा से नहीं हटता है। भीमसेन के क्रोध को देखकर शिशुपाल जरा भी न डरा और उसको अति क्रोध से बार-बार उछलते हुए देखकर हँसकर कहने लगा—हे भीष्म ! तुम इसको छोड़ दो, आने दो, अभी सब राजाओं के देखते-देखते यह मेरे प्रभाव से इस प्रकार से भस्म हो जायगा जैसे अग्नि में पतङ्ग जल मरता है, यह सुनकर भीष्मजी भीमसेन से कहने लगे। ९-२०।

तेंतालीसवाँ अध्याय

भीष्मजी का भीमसेन से शिशुपाल की उत्पत्ति और श्रीकृष्णजी से वरदान पाने का वृत्तान्त कहना

भीष्मजी बोले—हे भीमसेन ! यह शिशुपाल राजा चंदेरी के वंश में

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जब उत्पन्न हुआ था, तब इसके चार भुजाएँ और तीन आँखें थीं। उत्पन्न होते ही यह गधे के समान रेंकने और गर्जने लगा। यह देख-कर इसके मा, बाप और भाई-बन्धु डर गये और उन्होंने इसे त्याग करने का विचार किया, परन्तु उसी समय यह आकाशवाणी हुई कि तुम लोग डरो मत, यह राजा ही का पुत्र है। यह बड़ा बलवान् और श्रीमान् होगा, तुम इसका पालन करो। इसकी मृत्यु और काल नहीं है। इसका मारनेवाला केवल महाकाल है। वह संसार में प्रकट होचुका है। इसपर इसकी मां ने हाथ जोड़कर विनय की, जिसने मेरे इस पुत्र के विषय में उक्त बातें कही हैं, वह कृपा करके मुझको यह भी बतावे कि देवता आदि किसके हाथसे इसकी मृत्यु होगी? यह सुनकर फिर आकाश-वाणी हुई, जिसकी गोद में जाने से इसकी दो भुजाएँ गिर पड़ें और ललाट का तीसरा नेत्र बैठ जाय उसी के हाथ से इसकी मृत्यु होगी। १-१०।

यह खबर देश-देश में पहुँची कि राजा चंदेरी के एक पुत्र ऐसा हुआ है जिसके चार भुजा और तीन नेत्र हैं, और उसने उत्पन्न होते ही गधे के समान शब्द किया था। यह सुन सुन कर सब देशों के सहस्रों राजा लोग इसे देखने को आये। इसके बाप ने उन सबका आदर सत्कार करके इसे प्रत्येक की गोद में बैठाया, परन्तु किसी की गोद में बैठने से इसकी न भुजा गिरी, न नेत्र बैठा, इसके पीछे इस वृत्तान्त को सुनकर बलदेवजी और श्रीकृष्णचन्द्रजी अपनी फूफी अर्थात् इसकी मां को देखने को आये और विधिपूर्वक अपने फूफा अर्थात् इसके बाप को दंडवत् करके बैठ गये। उस समय इसकी मां ने उन दोनों अपने भतीजों का विशेष आदर सत्कार करके श्रीकृष्णजी की गोद में शिशुपाल को दे दिया। गोद में बैठाते ही इसकी चार भुजाओं में से दो भुजा गिर पड़ीं और वह तीसरा नेत्र भी बैठ गया। तब इसकी मांने भयभीत होकर श्रीकृष्णजी से कहा—हे श्रीकृष्ण! तुम भय से डरे हुए मनुष्यों को अभय और आसरा देनेवाले हो, मैं भी भय से दुःखी हूँ। इससे मुझको जो मैं वर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

माँगूँ वह दो, यह सुनकर श्रीकृष्णजी बोले—हे फूफी! तू डरे मत। मुझसे तुझको किसी प्रकार का भय नहीं पहुँच सकता। जो तू कहे वही वर मैं तुझको दूँ। जो काम करने के योग्य भी न होगा, तो भी मैं करूँगा। यह सुनकर इसकी मां ने कहा कि तुम मेरे इस पुत्र के अपराधों को क्षमा करना, यही वर मैं तुमसे माँगती हूँ। तब श्रीकृष्ण ने कहा—हे फूफी! अब तू शोच करना छोड़ दे, मैं इसके सौ अपराध (यदि ऐसे भी होंगे कि जिनके कारण से इसका वध करना उचित समझा जावे) तो भी क्षमा करूँगा। हे भीमसेन! यही कारण है कि यह मंदबुद्धि शिशुपाल श्रीकृष्ण के वरदान से गर्वित होकर तुझको युद्ध करने के लिये बुलाता है। ११-२५।

चवालीसवाँ अध्याय

शिशुपाल का भीष्म की और कृष्ण की निंदा करना और शिशुपाल, भीष्म और सब राजाओं का आपस में विवाद होना

भीष्मजी बोले कि हे भीमसेन! शिशुपाल यह अच्छा नहीं करता, जो जगन्नाथ श्रीकृष्णजी की निंदा करता है। ऐसा कौन सा राजा पृथ्वी पर होगा, जो काल के वश में होकर मेरी निंदा इस प्रकार से करे जैसे यह कुलकलंक शिशुपाल करता है। परंतु कारण इसका यह है कि यह श्रीकृष्णजी का अंश है और श्रीकृष्णजी अपने अंश को अपने में लय करना चाहते हैं, इसी कारण से यह दुर्बुद्धि हम सबकी निंदा निर्भय होकर कर रहा है। १-४।

वैशंपायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! शिशुपाल भीष्मजी की उक्त बात को सुनकर सह न सका और अत्यन्त क्रोध करके कहने लगा—हे भीष्म! जिस कृष्ण की स्तुति तुम बंदीजनों की तरह करते हो, उसका जो कुछ प्रभाव हो वह मुझ द्वेष करनेवाले पर प्रकट होवे, मेरा क्या कर सकता है। जो तुमको दूसरे की स्तुति ही करना अच्छा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लगता है, तो तुम इस कृष्ण को छोड़कर अन्य राजाओं की स्तुति करो। राजा दरद, राजा वाह्लीक जिसके उत्पन्न होने पर पृथ्वी फट गई थी और राजा कर्ण जो इन्द्र के समान बलवान् और कुण्डल कवच सहित उत्पन्न हुआ था, जिसने मल्लयुद्ध करके जरासंध को प्रसन्न किया था, स्तुति करने के योग्य हैं। इनके सिवाय ये दोनों उत्तम और महारथी द्रोणाचार्य तथा अश्वत्थामा कि जो सब संसार का चर और अचर जीवों सहित नाश कर सकते हैं। जिनके समान कोई राजा पृथ्वीतल पर बलवान् नहीं है, स्तुति क्यों नहीं करते हो? राजा दुर्योधन को जिसके समान इस पृथ्वी पर दूसरा नहीं है, राजा जयद्रथ को जो अस्त्र शस्त्रों का परम वेत्ता है, और द्रुम को जो कि पुरुषों का आचार्य है, छोड़कर इस कृष्ण की क्या स्तुति करते हो। ५-१६।

कृपाचार्य जो भरतवंशियों के आचार्य हैं, राजा रुक्म, राजा भीष्मक, राजा दंतवक्र, राजा भगदत्त, राजा यूपकेतु, राजा जयत्सेन, राजा विराट, राजा द्रुपद, शकुनि, राजा वृहद्बल, अवंतिदेश के राजा बिंदु और अनुबिंदु, राजा पांड्य, राजा श्वेत, राजा उत्तम, राजा वृषसेन, राजा विक्रांत, राजा एकलव्य, कलिंगदेश का राजा, राजा शल्य और बहुत से महाबली तथा महारथी राजा लोग जो यहाँ बैठे हुए हैं उनको छोड़कर इस कृष्ण की जो राजा नहीं है, क्यों प्रशंसा करते हो? यदि कहो धर्मवादी और वृद्धों की शिक्षा नहीं सुनी, सो हमने तुम्हीं से सुना है कि अपनी अथवा पराई निन्दा और स्तुति करना अच्छे मनुष्यों का काम नहीं है, फिर यह कृष्ण तो किसी प्रकार से स्तुति करने के योग्य नहीं है और जो तुम इसकी प्रशंसा अपने मोह या भक्ति से करते हो, उसको कोई अच्छा नहीं कह सकता है। १७-२५। सब यादव राजा भोज की प्रजा हैं, फिर इस यादव कृष्ण को जो राजा कंस की गौओं का पालनेवाला है, जगत् की उत्पत्ति का कारण कैसे बताते हो। तुम्हारी बुद्धि पृथ्वी के बिल में सोनेवाले भूलिंग पक्षी के समान डामाडोल है।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कहते कुछ हो और करते कुछ हो यह पत्ती हिमालय पहाड़ के पार्श्व में रहता है और सदैव यह कहा करता है कि विना विचारे कोई काम मत करो, परन्तु आप विना विचारे ही साहस करने लगता है। अर्थात् सिंह की डाढ़ में लगे हुए मांस को खाने की इच्छा करता है। सो हे भीष्म ! जैसे वह पत्ती दूसरों को तो साहस न करने का उपदेश करता रहता है और आप सिंह की डाढ़ में से भी मांस निकालने का साहस करता है, वैसे ही तुम्हारे भी वचन हैं। तुम अब केवल इन राजाओं की ही इच्छा से जीते हुए बैठे हो। तुम्हारी बराबर दुष्ट कर्म करनेवाला इस संसार में कोई नहीं है। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय ! भीष्मजी शिशुपाल के उक्त कडुवे वचनों को सुनकर कहने लगे, जिन राजाओं की इच्छा से तुम हमको जीता हुआ बताते हो उन सबको हम तृणवत् समझते हैं। २६-३४।

यह सुनकर सब राजा क्रोधित हो गये। उनमें से कोई कोई तो हँसने लगे, कोई भीष्म की निन्दा करने लगे, और कोई कोई यह कहने लगे कि यह वृद्ध भीष्म विषयों में लिप्त हो रहा है, क्षमा करने के योग्य नहीं है। इसको हम सब मिलकर पशु की तरह मारें और अग्नि में जला दें। यह सुनकर भीष्मजी बोले कि मुझको यहाँ प्रश्न करने और उत्तर देने का अंत नहीं दीखता है। इससे तुम सब अब कहना सुनना तो छोड़ दो और जैसा कहते हो उसी प्रकार सम्मुख आकर मेरा वध अग्नि में जलाकर या पशु की तरह मारकर करो। मैं तुम सबके शिर पर लात रखता हूं और ये श्रीकृष्णचन्द्र हमारे और सब जगत् के पूज्य बैठे हुए हैं। जिसका काल निकट आ गया हो वह इन चक्र और गदाधारी को युद्ध के लिये बुलावे। हम जानते हैं कि जब तक ये श्रीकृष्ण इस शिशुपाल को मारकर इसके तेज को अपने में लय नहीं करेंगे तब तक ये राजा लोग नहीं मानेंगे। ३५-४२।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पैंतालीसवाँ अध्याय

श्रीकृष्णजी का शिशुपाल को सौ अपराध पूरा होने पर मार डालना, यज्ञ का पूरा होना, सब राजाओं का अपने-अपने घर को चला जाना और सभा में दुर्योधन और शकुनि का रह जाना

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! राजा शिशुपाल भीष्म के उक्त वचनों को सुनकर कृष्णचन्द्र से लड़ने की इच्छा से बोला—हे कृष्ण! आओ, मुझसे युद्ध करो, अभी तुमको पांडवों सहित मारता हूँ। तुम्हारे कारण ये सब पांडव भी वध करने के योग्य हैं। क्योंकि इन्होंने सब राजाओं को छोड़कर राजा न होने पर तुम्हारी पूजा की है। मेरी मति में जो मनुष्य तुमसे दास, अराजा, दुष्टबुद्धि और पूजन के अयोग्य मनुष्य की पूजा करे, वह मार डालने के योग्य है। यह कहकर शिशुपाल गर्जने लगा और श्रीकृष्णजी उसकी बात को सुनकर सब राजाओं से मृदुता के साथ कहने लगे—यह शिशुपाल यद्यपि यादवकुल की माता से उत्पन्न है, परन्तु यादवों से द्वेष रखता है और हिंसक है। इसने भानजा होने पर हम सबके प्राग्ज्योतिष नगर को चले जाने पर द्वारका में आग लगा दी, और रैवत पहाड़ पर क्रीड़ा करते हुए भोजराज को यह साथियों सहित मार बाँधकर ले गया। इसके पीछे यह हमारे पिता का अश्वमेध यज्ञ विध्वंस करने के अर्थ रक्षकों को मारकर घोड़ा हरकर ले गया। और तपस्वी बभ्रु की स्त्री को जो सौवीर देशों को जाती थी, अधर्म से हरण किया। फिर इसने अपने मामा की पोती भद्रा नाम को जो राजा विशालापुर की बेटी थी और राजा करूष के पास जाती थी, करूष का रूप धरकर हर लिया। सो ये बातें तो इसने हमारे पीठ पीछे की थीं। आज तुम सब लोगों के सामने जो जो इसने कहा है सो सब तुम लोगों ने सुना ही है। अब तक मैंने यह सब कष्ट अपनी फूफी अर्थात् इसकी मां के कारण से सहा है, परन्तु अब इसका अपराध हमसे क्षमा नहीं हो सकता, इस दुष्ट का अब काल आ पहुँचा है। इसने

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पहले रुक्मिणी से अपना विवाह करना चाहा था, परन्तु उसको इसने इस प्रकार से नहीं पाया जैसे शूद्र वेद की श्रुतियों को नहीं पा सकता है। १-१५।

वैशम्पायनजी बोले कि जब कृष्णचन्द्र ने उक्त रीति से बहुत सी बातें कहीं, तब सब राजा शिशुपाल की निन्दा करने लगे और शिशुपाल उसको सुनकर खिलखिलाकर हँस उठा और कहने लगा—हे कृष्ण! तुम मुझको रुक्मिणी का पहिला पति बतलाते हो, तुमको ऐसी बात कहते लज्जा नहीं आती, ऐसी सभा में तुम्हारे सिवाय कौन ऐसा निर्लज्ज होगा, जो दूसरे मनुष्य को अपनी स्त्री का पहिला पति बतावे। तुम जो फूफी अर्थात् हमारी मां का हाल कहते हो सो हमको उसकी कुछ परवाह नहीं है। तुम चाहे क्षमा करो, चाहे क्रोध, तुम्हारे क्षमा और क्रोध करने से मेरा कुछ भला या बुरा नहीं हो सकता है। यह सुनकर कृष्णचन्द्र ने अपने चक्र को याद किया और उसके हाथ में आने पर सब राजाओं से पुकार कर कहा—मैंने इसकी मां को यह वरदान दिया था कि मैं तेरे पुत्र के सौ अपराध तक क्षमा करूँगा, सो अब वह सब अपराध पूरे हो गये, अब मैं इसको मारता हूँ। यह कहकर श्रीकृष्णजी ने क्रोध से चक्र को छोड़ दिया और उससे शिशुपाल का शिर कटकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। १६-२५।

उस राजा का शरीर इस प्रकार से पृथ्वी पर गिर पड़ा जैसे बिजली के गिरने से पहाड़ गिरे, और उसके शरीर में से सूर्य के समान चमकता हुआ तेज निकलकर कृष्णचन्द्र को वंदना करके उन्हीं के शरीर में लय हो गया। यह देखकर सब राजा लोग आश्चर्य करने लगे। उस समय आकाश में से विना बादल के वर्षा होने लगी, बिजली भी पृथ्वी पर गिरी, और पृथ्वी काँपने लगी। उस समय बहुत से राजा लोग तो चुप होकर बैठे हुए कृष्ण को देखते रहे। बहुत से क्रोध के कारण हाथ से हाथ मलने लगे और बहुत से अपने दाँत पीसने लगे।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उनमें से किसी ने कृष्णचन्द्र की प्रशंसा की, किसी ने क्रोध किया और कोई कोई मध्यस्थ होगये। इसके पीछे महर्षि और महात्मा लोग ब्राह्मण और राजाओं सहित श्रीकृष्णजी के पास स्तुति करते हुए गये और उनकी प्रशंसा करने लगे। फिर युधिष्ठिर की आज्ञा से उसके छोटे भाइयों ने विधिपूर्वक शिशुपाल के शरीर का संस्कार किया। युधिष्ठिर ने शिशुपाल के बेटे को सब राजाओं सहित चंदेरीदेश की गद्दी का राजतिलक दिया। २६-३५। इस प्रकार से युधिष्ठिर का वह यज्ञ जिसका प्रारम्भ सुखपूर्वक हुआ था, निर्विघ्न ऋद्धि और धनधान्य से युक्त समाप्त हुआ। श्रीकृष्णजी उस यज्ञ की रक्षा, समाप्त होने तक करते रहे। इसके पीछे युधिष्ठिर के अवभृथ नाम यज्ञस्नान करने पर सब राजा लोग उसके पास आये और कहने लगे कि तुमने प्रारब्ध से साम्राज्य पद पाकर अजमीढ़वंशी राजाओं के यश को बढ़ाया। तुमने यह बड़ा भारी धर्म किया है। और हम सबका भी अच्छी तरह से आदर सत्कार किया। अब हम सब अपने अपने देशों को जाना चाहते हैं, सो आप हमको जाने की आज्ञा दीजिये। यह सुनकर युधिष्ठिर ने सब राजाओं की यथायोग्य पूजा करके अपने भाइयों से कहा कि ये सब राजा लोग हमारी प्रीति के कारण यहाँ आये थे। अब ये सब जाना चाहते हैं। तुम इनके साथ जाकर अपने राज्य की सीमा तक इनको पहुँचा आओ। यह सुनकर वे सब प्रत्येक राजा के साथ अपने राज्य की सीमा तक पहुँचाने को गये। धृष्टद्युम्न राजा विराट के साथ, अर्जुन राजा द्रुपद के साथ, भीष्म और धृतराष्ट्र के साथ भीमसेन, सहदेव, द्रोणाचार्य और अश्वत्थामा के साथ नकुल, राजा सुबल और उसके पुत्र के साथ द्रौपदी, सुभद्रा के पुत्र पहाड़ी राजाओं के साथ, और क्षत्रिय लोग दूसरे क्षत्रियों के साथ जा जाकर सबको राज्य की सीमातक पहुँचा आये। इसी प्रकार सहस्रों ब्राह्मणलोग जो अनेक देशों से आये थे, चले गये। उनके चले जाने पर श्रीकृष्णजी ने युधिष्ठिर से कहा। ३६-५०।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कि प्रारब्ध से तुम्हारा राजसूय यज्ञ अब समाप्त हुआ, मैं भी अब द्वारका को जाना चाहता हूँ। यह सुनकर युधिष्ठिर बोले—आपकी कृपा से मेरा यज्ञ समाप्त हुआ और आपही की कृपा से सब क्षत्रियों ने मेरे वश में होकर मुझको कर दिया है, परन्तु मैं आपको जाने के लिये क्योंकर कहूँ। आपके विना मुझे आनन्द नहीं रहता और यह भी मैं जानता हूँ कि आपको द्वारकापुरी को भी जाना अवश्य ही है। यह सुनकर कृष्णचन्द्र प्रसन्नतापूर्वक युधिष्ठिर के साथ-साथ कुन्ती के पास गये और कहने लगे कि हे फूफी! तेरे बेटे साम्राज्यपदवी को पाकर सिद्ध-मनोरथ और धनवान् हुए, अब तू प्रसन्न रह और मुझे द्वारका जाने की आज्ञा दे। ५१-५७।

इसी प्रकार द्रौपदी और सुभद्रा से मिले। फिर युधिष्ठिर के साथ महल के बाहर आकर स्नान करके और ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन सुनके दारुकि सारथी के लाये हुए रथ पर जिसमें गरुड़ के चिह्न की ध्वजा लगी हुई थी, प्रदक्षिणा करके चढ़े और द्वारका की ओर चले। युधिष्ठिर आदि सब भाई उनके साथ साथ पैदल हो लिये। यह देखकर कृष्णचन्द्र ने अपने रथ को रोक लिया और युधिष्ठिर से कहने लगे कि तुम सावधान रहकर प्रजा की रक्षा करते रहना और आपस में सब भाई प्रीतिपूर्वक इस प्रकार से रहना जैसे देवता इन्द्र के समीप रहते हैं। यह कहकर श्रीकृष्ण और पांडव परस्पर एक दूसरे से मिलकर अपने स्थान को चले आये और श्रीकृष्णजी द्वारका को चले गये। उनके चले जाने पर उस युधिष्ठिर की सभा में केवल एक दुर्योधन और सुबल का बेटा शकुनि रह गये। ५८-६७।

छियालीसवाँ अध्याय

व्यासजी का युधिष्ठिर से उत्पातों का फल कहकर चला जाना और युधिष्ठिर का शोच करना

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! उस दुर्लभ राजसूय यज्ञ

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

के समाप्त होने पर युधिष्ठिर के पास व्यासजी अपने शिष्यों सहित आये। युधिष्ठिर उनको देखकर भाइयों सहित खड़े होकर विधिपूर्वक उनकी पूजा करके उन्हें बैठने को सुन्दर आसन दिया। व्यासजी उस सुवर्ण के आसन पर बैठ गये और युधिष्ठिर आदि को बैठने की आज्ञा देकर युधिष्ठिर से कहने लगे—तुमने प्रारब्ध से दुर्लभ साम्राज्य पदवी पाई और तुम्हारे कारण से कौरवों की बढ़ोतरी हुई। अब मैं जाना चाहता हूँ, मुझे जाने की आज्ञा दो। यह सुनकर युधिष्ठिर ने व्यासजी को उठकर दंडवत् की और फिर पास बैठकर कहा—महाराज, मुझे बड़ा भारी संदेह हो गया है, आपके सिवाय मेरे उस संदेह को और कोई दूर नहीं कर सकता है। मैंने नारदजी से सुना है कि तीन उत्पात बड़े भारी होते हैं। एक दिव्य अर्थात् वज्रपात आदि, दूसरा अन्तरिक्ष अर्थात् धूमकेतु आदि, और तीसरा पार्थिव अर्थात् भूकंप आदि सो ये उत्पात शिशुपाल के मारे जाने पर हुए थे, उनके होने का क्या कारण है। यह सुनकर व्यासजी बोले। १-१०। उन उत्पातों का फल यह है कि आज से तेरह वर्ष के बीतने पर सब क्षत्रियों के कुल का नाश होगा और तुमको कारण बनाकर दुर्योधन के अपराध से सब राजा लोग इकट्ठे होकर भीमसेन अर्जुन के बल से मारे जायँगे। और आज रात को तुम को स्वप्न में नीलकंठ शिवजी के दर्शन जो भव, स्थाणु, कपाली, त्रिपुरान्तक, उग्र, रुद्र, पशुपति, महादेव, उमापति, शर्व, वृष, शूली, पिनाकी और कृत्यवास आदि नामों से विख्यात हैं, नन्दी पर सवार दक्षिण की ओर देखते हुए होंगे सो तुम इस बात का कुछ संदेह मत करो, क्योंकि इस संसार में काल का उल्लंघन कोई नहीं कर सकता, अब तुम सावधान रहकर पृथ्वी का पालन करो और मुझको जाने की आज्ञा दो। मैं कैलास पर्वत पर जाना चाहता हूँ। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! व्यासजी उक्त रीति से कहकर शिष्यों सहित कैलास को चले गये। उनके जाने पर युधिष्ठिर शोक और चिंता में

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

मग्न होकर बारबार गरम गरम श्वास ले लेकर विचारने लगा कि यह भावी अर्थात् होनहार किसी प्रकार मनुष्य के उपाय से नहीं रुक सकती, व्यासजी का कहना अवश्य होगा। ११-२०।

ऐसा विचारकर युधिष्ठिर ने अपने भाइयों से कहा—जो व्यासजी ने मुझसे कहा था तुमने भी सुना है। मेरे मन में अब यह आता है कि मैं अपने प्राण छोड़ दूँ, क्योंकि काल ने मुझको क्षत्रियकुल के नाश होने का हेतु निर्माण किया है। मेरा अब जीना व्यर्थ है। यह सुनकर अर्जुन बोला—आप शोच को छोड़कर जो करना उचित है वह कीजिए, क्योंकि शोच करने से बुद्धि जाती रहती है। यह सुनकर युधिष्ठिर व्यासजी की बात को याद करके कहने लगे—मेरे जीने से अब कोई अर्थ नहीं है, इससे आज से मैं यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि तेरह वर्ष तक कभी अपने भाई या दूसरे राजाओं से कठोर वचन नहीं कहूँगा और अपने स्वजातियों की आज्ञा मानकर उनकी सेवा करूँगा। ऐसा करने से हम सबमें आपस में फूट न होगी, फूट ही लड़ाई का घर है। जब मैं लड़ाई के पास न जाऊँगा और ऐसे काम करूँगा जो सबको अच्छे मालूम हों, तब लोक में कोई मेरी निंदा न करेगा। यह सुनकर युधिष्ठिर के सब भाई भी उक्त बात पर बर्ताव करने लगे। २१-३०।

इस प्रकार युधिष्ठिर अपने भाइयों सहित सम्मति करके मंगल स्नान और देवता तथा पितरों को तृप्त करके प्रसन्नतापूर्वक सब राजाओं को बिदा करके अपने भाई पुरोहित और मंत्रियों सहित अपने नगर के भीतर गये और दुर्योधन तथा शकुनि उसी सभा में निवास करते रहे। ३१-३३।

सैंतालीसवाँ अध्याय

दुर्योधन का पांडवों की सभा देखना और धोखे से कई बार गिर-गिर पड़ने के कारण से भीमसेन आदि का उसकी हँसी करना और पांडवों के वैभव को देखकर दुर्योधन को बड़ी डाह होना और सब वृत्तान्त शकुनि से कहना।

वैशंपायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! युधिष्ठिर की सभा में रहने

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पर दुर्योधन और शकुनि धीरे धीरे सभा को घूमकर देखने लगे। उन्होंने उसमें ऐसी ऐसी दिव्य चीज़ें देखीं, जिनको उन्होंने पहले कभी हस्तिनापुर में नहीं देखा था। फिर एक स्थान पर स्फटिक के स्थल को देखकर दुर्योधन को यह जान पड़ा कि यहाँ जल है, ऐसा जानकर वह उस स्थल में कपड़े उतार कर गया और वहाँ जल न देखकर लज्जित होकर आगे बढ़ा। दूसरी जगह फिर स्थल को जल जानकर स्थल पर गिर पड़ा और आगे बढ़कर एक स्फटिक की बावड़ी को जिसमें स्फटिक के समान कमल लगे हुए थे और जल से भरी थी स्थल समझकर उसमें चला गया और वस्त्रों सहित उसके जल में भीग गया। भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव अपने नौकरों सहित दुर्योधन की यह दशा देखकर हँस पड़े। यह देखकर दुर्योधन उनकी हँसी को न सह सका और अत्यंत मलिनचित्त हो गया। युधिष्ठिर की आज्ञा से दुर्योधन को और सुन्दर वस्त्र पहिरने को दिये गये। तब दुर्योधन उन वस्त्रों को पहिर कर उन हँसनेवालों की ओर न देखकर आगे चला, और स्फटिक स्थल को जल जानकर उसके पार जाने की इच्छा से वस्त्र उठाकर चलने लगा और जल समझकर उसमें कूद पड़ा और स्थल पर जा पड़ा। यह देखकर सब लोग फिर हँस पड़े। तब दुर्योधन फिर लज्जित होकर वहाँ से आगे चला। एक स्फटिक के द्वार में जो बन्द था, परंतु खुला हुआ दिखाई देता था, घुसने लगा और टक्कर लगने के कारण घूर्मित हो गया। आगे चलकर एक ऐसे दरवाजे में घुसने लगा, जो खुला हुआ था, परन्तु बन्द दिखाई देता था, घुसने के समय भ्रम से वह दोनों हाथों से दरवाजा खोलने लगा, परन्तु वहाँ कुछ आधार न होने के कारण गिर पड़ा और वहाँ से आगे को गया। फिर एक द्वार को कपाट लगा हुआ देखकर वहाँ खड़ा रहा, भ्रम के कारण से खोल न सका। इस प्रकार अनेक स्थलों में भ्रम खा खाकर दुर्योधन राजा युधिष्ठिर से बिदा हो-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कर अप्रसन्न मन हस्तिनापुर को चल दिया। युधिष्ठिर की लक्ष्मी और वैभव को देखकर पापबुद्धि विचारने लगा। पांडवों को प्रसन्नमन और यह जानकर कि सब राजा पांडवों के वश में हैं, पांडवपुत्र परिवार और बड़ी लक्ष्मीयुक्त हैं, विवर्ण हो गया और पांडवों का वैभव तथा लक्ष्मी और सभा को बार बार विचारकर व्याकुल होने लगा। यह देखकर शकुनि उससे बार बार पूछने लगा, तू उदास क्यों है? परन्तु दुर्योधन ने कुछ उत्तर नहीं दिया। तब शकुनि ने कहा—मुझसे तो बता—तेरे इस दुःख का कारण क्या है और तू श्वास ले लेकर क्यों विमन होता है। १-२०।

यह सुनकर दुर्योधन कहने लगा—मैं सब पृथ्वी को अर्जुन के शस्त्र के प्रताप से युधिष्ठिर के वश में और देवताओं के बीच में जैसे इन्द्र यज्ञ करे, उसी प्रकार से युधिष्ठिर को राजसूय यज्ञ करते देखकर अप्रसन्न हुआ हूँ। क्रोध और ईर्षा दिन रात मुझको जलाते हैं, उनके कारण मैं इस प्रकार से सूखता जाता हूँ जैसे गरमी में जल दिन दिन सूखता चला जाता है। देखो, श्रीकृष्ण ने शिशुपाल को मार डाला। सब राजा उसको देखते रहे, परन्तु किसीने पाण्डवों के भय से उसका प्रतीकार नहीं किया। भला ऐसा कौन होगा, जिससे ऐसी बातें सही जायँगी। श्रीकृष्ण का यह महा अयोग्य कर्म पाण्डवों के प्रताप से सिद्ध हो गया। सब राजाओं ने पाण्डवों को बनियों के समान रत्न ला लाकर भेंट किये। ये सब बातें देखकर मेरे हृदय में ऐसा क्रोध व्याप्त हुआ है कि उसके कारण मेरा शरीर दिन रात जला करता है। सो हे मामा शकुनि! अब मैं इस दुःख को सह नहीं सकता हूँ, या तो जल में डूब मरूँगा या अग्नि में जल मरूँगा, नहीं तो विष खाकर सो रहूँगा। २१-३०। क्योंकि न मैं स्त्री हूँ, जो पराधीन होकर रहूँ, न अस्त्रज्ञ हूँ, जो शत्रु को जीतूँ, न पुरुष हूँ, जो शत्रु के अस्त्रों को सह सकूँ, और न नपुंसक हूँ जो शत्रु की लक्ष्मी को देखकर ईर्षा न करूँ।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

भला ऐसा कौन होगा जो पाण्डवों का ईश्वरत्व धन और यज्ञ को देखकर दुःखी न होवे। सो मैं अपनी सामर्थ्य ऐसी लक्ष्मी को इकट्ठा करने को न देखकर मरना चाहता हूँ। युधिष्ठिर की लक्ष्मी को देखकर मैंने यह ही निश्चय कर लिया है कि पौरुष अर्थात् उपाय निष्फल है। दैव अर्थात् प्रारब्ध श्रेष्ठ है, क्योंकि मैंने पाण्डवों के नाश करने के लिये अनेक उपाय किये, परन्तु कोई नहीं चला। उसके बदले में वे ऐसे बढ़ गये जैसे जल में कमल बढ़ता है। हम लोग दिन दिन कम होते जाते हैं और पाण्डवों की दिन प्रति बढ़ोतरी होती है। इससे और क्या समझा जावे। सिवाय इसके कि प्रारब्ध पौरुष से प्रबल है इसके सिवाय पाण्डवों की सभा में रक्षकों ने मेरी हँसी की वह हँसी मुझको दिन रात अग्नि के समान जलाती है, सो हे मामा! अब तुम हमारे पिता धृतराष्ट्र से कह दो कि मैं क्रोध के कारण अपने प्राण छोड़ना चाहता हूँ और तुम मुझको मरने की आज्ञा दो। २१-३६।

अड़तालीसवाँ अध्याय

शकुनि का दुर्योधन को युधिष्ठिर पर क्रोध न करने का उपदेश करना और उसके न मानने पर उसे युधिष्ठिर से जुआ खेलने की सलाह देना।

दुर्योधन की उक्त बात को सुनकर शकुनि बोला—हे दुर्योधन! तुझको युधिष्ठिर पर क्रोध करना उचित नहीं है, क्योंकि पाण्डव केवल अपने भाग्य ही से उत्तम भोग भोग रहे हैं। देखो पहले तुमने उनके मारने को अनेक उपाय किये, परन्तु कोई उपाय न चला। वे अपने प्रारब्ध से जीते रहे और जितने फंदे तुमने डाले सबमें से निकल गये। अपने प्रारब्ध ही से उनको द्रौपदी सी स्त्री, द्रुपद सा श्वशुर, धृष्टद्युम्न सा साला, और कृष्ण से बलवान् सहायक मिले हैं। उनके पिता के अंश में जो श्री थी, उसी के तेज से उनकी इतनी बढ़ोतरी हुई है, इसमें तुमको रोना क्या है। अर्जुन ने अग्निदेव को प्रसन्न किया और उन

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

से गांडीव धनुष और दो ऐसे तर्कस जिनके बाण कभी कम नहीं होते हैं, पाये हैं। उसने उनके और अपने बाहुबल के प्रताप से राजाओं को जीतकर अपने वश में किया है। तुमको उसे देखकर खेद करना क्योंकर उचित है। अर्जुन ने मयदानव को अग्नि में जलने से बचाया था। उस उपकार के बदले में उसने सभा बनाई है। जिसको किंकर नाम राक्षस उसकी आज्ञा से रक्षा करते हैं, और जहाँ चाहें वहाँ ले जा सकते हैं। तुमको उसके विषय में रोना झीखना क्या है। तेरी यह बात मिथ्या है कि मेरा कोई सहायक नहीं है। ये सब तेरे भाई तेरी आज्ञा के प्रतिकूल नहीं हैं। १-१०।

इनके सिवाय द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, कर्ण, राजा सोमदत्त और अपने भाइयों सहित मैं तेरी सहायता करने को मौजूद हूँ। इन सबको साथ लेकर तू सम्पूर्ण पृथ्वी को जीत सकता है। यह सुनकर दुर्योधन बोला—जो तुम्हारी सलाह हो तो मेरी यह इच्छा है कि मैं इन सब उक्त सहायकों को साथ लेकर पाण्डवों को विजय करूँ, क्योंकि इनको जीत लेने पर सब पृथ्वी अशेष राजा और सम्पूर्ण धनाढय लोग आप से आप मेरे वश में हो जायँगे। यह सुनकर शकुनि ने उत्तर दिया कि जिस समय श्रीकृष्ण, अर्जुन, भीमसेन, युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव, राजा द्रुपद और द्रुपद के धृष्टद्युम्न आदि पुत्र युद्ध करने को आवेंगे; उस समय उनको तेरी तो क्या सामर्थ्य है देवता भी नहीं जीत सकेंगे, क्योंकि ये सबके सब बड़े धनुर्धारी और अस्त्रज्ञ हैं, परन्तु युधिष्ठिर को सहज में जीतने का उपाय मैं जानता हूँ। उसको सुनो और उसी के अनुसार करो। यह सुनकर दुर्योधन बोला—हे मामा! जो ऐसा कोई उपाय निकल आवे कि हमारी सेना और सुहृदों में से कोई न मरे और पाण्डव हमारे अधीन हो जायँ तो क्या ही बात है। आप ऐसे उपाय को मुझसे अवश्य कहिए। शकुनि बोला—युधिष्ठिर को जुआ खेलने का बड़ा व्यसन अर्थात् शौक़ है। उसको जुआ खेलना तो आता नहीं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

है, परन्तु जो कोई उसको जुआ खेलने को बुलाता है, उससे वह अवश्य खेलता है और खेल से निवृत्त नहीं होता, और मैं जुआ खेलना बहुत अच्छी तरह से जानता हूँ । इस खेल का जाननेवाला मेरी बराबर तीनों लोक में नहीं है। इससे तुम युधिष्ठिर को जुआ खेलने को धृतराष्ट्र से कहकर बुलवाओ। उनकी आज्ञा से मैं युधिष्ठिर से जुआ खेलकर तेरे लिये उसका सब राज्य और लक्ष्मी जीत लूँगा। यह सुनकर दुर्योधन बोला कि आपही इस बात को हमारे पिता (धृतराष्ट्र) से कहिए मेरी सामर्थ्य कहने की नहीं है। ११-२३।

उञ्चासवाँ अध्याय

दुर्योधन का सन्ताप करना और शकुनि से सलाह करके पाण्डवों की लक्ष्मी को छल के पाँसों से जीतने के लिये युधिष्ठिर को बुलवाना।

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! शकुनि युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ से लौटकर, दुर्योधन की प्रीति के कारण उक्त अध्याय में कही हुई रीति से दुर्योधन से सलाह करके राजा धृतराष्ट्र के समीप जो अन्धा और ज्ञानी था गया। और कहने लगा—महाराज, दुर्योधन अत्यन्त दुर्बल और पीला पड़ गया है, न जाने उसको क्या चिंता है, और किस शत्रु के प्रकट होने के कारण से वह ऐसा दुःखी है। आप का वह ज्येष्ठ पुत्र है, आप भी उसके मन की चिंता को नहीं पूछते हैं। यह सुनकर धृतराष्ट्र ने दुर्योधन को बुलाकर कहा—हे पुत्र! तू अत्यन्त दुःखी है, इसका कारण क्या है? जो मेरे आगे कहने योग्य हो तो मुझसे भी कह, आज मुझको शकुनि से मालूम हुआ है कि तू बहुत दुर्बल और पीला पड़ गया है, परन्तु मुझे ऐसी कोई बात नहीं देख पड़ती, जिसके कारण मैं तेरे दुःख का अनुमान करूँ, क्योंकि तेरे पास बड़ा भारी ऐश्वर्य है और तेरे सब भाई आज्ञाकारी हैं। इसके सिवाय पहरने को उत्तमवस्त्र, खाने को मांसमय अन्न, चढ़ने को सुन्दर सुन्दर घोड़े, सोने

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

को उत्तम शयन, विहार को मनोरमा स्त्रियाँ, रहने को दिव्य मकान और क्रीड़ा करने को अनेक क्रीड़ा के स्थान मौजूद हैं और देवताओं की तरह तेरी बात का भी कोई उल्लंघन नहीं करता, फिर क्या कारण है जो तू इतना शोच करता है और लटकर पीला पड़ गया है। १-१०।

यह सुनकर दुर्योधन बोला—हाँ मैं कुपुरुष की भाँति भोजन तो कर लेता हूँ और वस्त्र भी पहर लेता हूँ, परन्तु मुझको ऐसा भयानक क्रोध हो रहा है कि उसके कारण अब केवल अपने समय को ही पूरा कर रहा हूँ। संसार में वही मनुष्य पुरुष कहा जाता है, जो शत्रु के वश में होने पर भी शत्रु से निडर होकर अपनी प्रजा को उस भय से छुड़ाने का प्रयत्न करे, जो मनुष्य संतोष, दया, गर्व और भय करता है, उसको लक्ष्मी प्राप्त नहीं होती है। मैं नित्य सुन्दर पदार्थों को भोगता हूँ, परन्तु युधिष्ठिर के वैभव के डाह से वह भोग मुझको गुण नहीं करते। शत्रुओं की वृद्धि और अपने को हीन देख देखकर दिन प्रति दिन दुबला होकर पीला पड़ता जाता हूँ। देखो युधिष्ठिर अट्ठासी सहस्र स्नातक ब्राह्मणों को पालन करता है और उन प्रत्येक की सेवा के लिये तीस तीस दासी नियत कर दी हैं और सोने के पात्रों में दश सहस्र ब्राह्मण नित्य भोजन किया करते हैं। राजा काम्बोज ने युधिष्ठिर के पास कदलीवन के मृगों के चित्र विचित्र साबर बड़े मोल के कम्बल तीन सौ ऊंट और खच्चर भेजे हैं और सब राजाओं ने उसके स्थानपर आ आकर अनेक रत्न भेंट किये हैं। ११-२१। मैं ने तो ऐसा धन का आगम आज तक न देखा, न सुना सो उस बड़े धन को देखकर मेरा चित्त आनन्दरहित रहता है। देखो खेती करनेवाले ब्राह्मण, गोपालक वैश्य, सैकड़ों और मनुष्य उस यज्ञ में तीन खर्ब धन भेंट के लिये देने को हाथों में सुवर्ण के कलश लिये हुए द्वार पर खड़े रहे, परन्तु इतनी भेंट लाने पर भी भीतर न जाने पाये। वरुण देवता ने सहस्र रुक्म की काँवर में अमृतरूपी जल से भरा हुआ। कांसे का पात्र जो बहुत से रत्नों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

से भूषित था, रखवाकर युधिष्ठिर को भेंट करने के लिये भेज दिया। उसमें वह अमृतरूपी जल युधिष्ठिर के लिये इस प्रकार भरा हुआ था जैसे इन्द्रके लिये सम्पूर्ण ओषधी अमृतरूपी रस धारण किये रहती हैं। उन रत्नों में से श्रीकृष्णचन्द्र ने श्रेष्ठ शंख ले लिया और उससे वह जल भर भर के युधिष्ठिर का अभिषेक किया। उसी वक्त काँवर में पूर्व, पश्चिम और दक्षिण के समुद्रों का जल मँगवाया गया और उत्तर के समुद्र का जल भी जिसको सिवाय देवताओं के और कोई नहीं ला सकता उसी काँवर में युधिष्ठिर के लिये लाया गया। इन सब बातों को देखकर मेरे शरीर में शोकरूपी ज्वर हो आया। इसके सिवाय अर्जुन उत्तर दिशा को विजय करके बहुत सा धन लाया और यह एक बड़ी अद्भुत बात थी कि उस यज्ञ में एक लक्ष ब्राह्मण परोसनेवाले थे। उनकी संख्या शंखध्वनि से मालूम हो जाती थी। २२-३१। उन शंखों के शब्दों को सुन सुनकर मेरे रोयें खड़े हो जाते थे। जैसे निर्मल आकाश तारा-गणों के निकलने से सुशोभित हो जाता है, उसी प्रकार यज्ञशाला के निकट के स्थान देश देश के राजाओं से शोभित हो गये थे। सब के सब राजा भेंट दे देकर ब्राह्मणों को भोजन परोस रहे थे। मेरी समझ में तो ऐसा वैभव इन्द्र, यम, वरुण और कुबेर का भी नहीं है। उसी वैभव को देखकर मेरे हृदय में ऐसी आग लग गई कि वह शान्त नहीं होती। यह सुनकर शकुनि कहने लगा—इस लक्ष्मी की प्राप्ति के लिये एक उपाय तो मैं जानता हूँ। मुझको जुआ खेलना बहुत अच्छी तरह आता है। मेरी बराबर इस काम में तीनों लोक में कोई नहीं है। मुझे पाँसों को बनाकर फेंकना, उनके अनुसार दाँव लगाना, और देशकाल के अनुसार चाल को चलना, बहुत अच्छी तरह से आता है। और युधिष्ठिर को जुए का व्यसन अर्थात् शौक़ है, परन्तु उसे खेलना नहीं आता। जिस समय तुम उसको जुआ खेलने या रण करने को बुलाओगे, उसी समय वह चला आवेगा। सो

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तुम उसको बुलवावो, मैं छल के पाँसों से उसकी सब लक्ष्मी को खींच लूंगा। ३२-४०।

यह सुनकर दुर्योधन जल्दी से धृतराष्ट्र से बोला--महाराज, मामाजी युधिष्ठिर के सब धन को पाँसों से ही जीत देने कहते हैं। आप पांडवों को जुआ खेलने को बुलवाइए। यह सुनकर धृतराष्ट्र बोला-हम अभी कुछ नहीं कह सकते हैं। पहले हम अपने धर्मदर्शी और बुद्धिमान् मन्त्री विदुर से सलाह कर लें, तब कुछ कहेंगे। क्योंकि विदुरजी दोनों ओर के कल्याण होनेवाली बात करने की सलाह देंगे। यह सुनकर दुर्योधन बोला--जो आप विदुर जी से सलाह लीजियेगा तो वह जुआ खेलने की आपको कभी सलाह न देंगे और आपके निषेध करने पर मैं अपने प्राण छोड़ दूंगा। मेरे मरने पर आप विदुरजी के साथ अच्छी तरह आनन्द और पृथ्वी का राज्य कीजिएगा।

वैशम्पायनजी बोले-हे राजा जनमेजय! धृतराष्ट्र ने दुर्योधन की उक्त पीड़ायुक्त और नम्र बात को सुनकर उसके दुःख को दूर करने के लिये, दूतों और कारीगरों को बुलाकर आज्ञा दी कि तुम लोग बहुत जल्दी एक रमणीक सभा जिसमें सहस्र खम्भे और सौ द्वार हों बनाओ। उसे रत्नजटित करके तय्यार होने पर हमसे खबर करो। यह आज्ञा देकर धृतराष्ट्र ने दूत भेजकर विदुरजी को बुलवाया। ४१-५०। क्योंकि विदुरजी से विना सलाह लिये वह कोई काम नहीं करता था और यद्यपि जुआ खेलने के दोषों को आप अच्छी तरह जानता था, परन्तु पुत्र का स्नेह उसकी बुद्धिपर प्रबल होगया था। विदुरजी उस कलह और विनाश के मूल को सुनकर धृतराष्ट्र के पास गये और धृतराष्ट्र को दंडवत् करके कहने लगे-आपको जुआ खिलाने का निश्चय मेरा प्रिय नहीं है। आपको वह बात करना उचित है, जिससे पुत्रों में आपस में फूट न होवे। धृतराष्ट्र बोला कि दैव कृपा करेगा तो पुत्रों में फूट न होगी, परन्तु शुभ या अशुभ हित या अन-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हित कैसा ही हो हमको जुआ खिलाना दैव के योग से आवश्यक है। सो तुम किसी बात की चिन्ता मत करो। हमारे तुम्हारे और भीष्म तथा द्रोणाचार्य के बैठने पर कोई अनीति दैव की रची हुई भी न होने पावेगी। अब तुम जल्दी चलनेवाले घोड़ों को रथ में जोत कर इन्द्रप्रस्थ को चले जाओ और युधिष्ठिर को लिवा लाओ। वहां उन लोगों से इस मंत्र का प्रकाश मत करना, जिस दैव की प्रेरणा से मेरे हृदय में यह बात समाई है, वही जो कुछ चाहेगा सो ही होगा। यह सुनकर विदुरजी चिंता करने लगे और भीष्मजी के पास गये। ५१-६०।

पचासवाँ अध्याय

राजा धृतराष्ट्र का दुर्योधन से दुःख का कारण पूछना और दुर्योधन का युधिष्ठिर के वैभव और भीमसेन आदि की हँसी से दुःख पाने का वृत्तान्त कहना।

उक्त कथा को सुनकर जनमेजय पूछने लगा—हे वैशम्पायनजी! वह भाई बंधों का नाश करनेवाला जुआ जिसमें मेरे पुरुषा पांडवों ने अत्यन्त दुःख पाया था कैसे हुआ था। उस समय सभा में कौन-कौन राजा लोग थे, उनमें से किस-किस ने जुआ खेलना अंगीकार और किसने निषेध किया था। मैं इस जुए के सम्पूर्ण वृत्तान्त को विस्तारपूर्वक सुना चाहता हूं। मेरी समझ में यह जुआ ही पृथ्वी के नाश होने का मूल था। १-३। यह सुनकर वैशम्पायनजी बोले कि हम इस कथा को विस्तारसहित कहते हैं सुनो, विदुर जी के चले जाने पर धृतराष्ट्र यह जानकर कि जुआ खेलने में विदुर की सम्मति नहीं है, दुर्योधन से एकान्त में कहने लगा—हे पुत्र! तू जुआ मत खेले, विदुरजी इस कर्म को अच्छा नहीं बताते हैं। वह बड़े बुद्धिमान् हैं और हमारे अहित की बात कभी न कहेंगे। विदुर को वह सब शास्त्र अच्छी तरह आता है, जिसमें बृहस्पतिजी ने इन्द्र को उपदेश किया है। इससे मैं विदुर के कहने को अपना परमहित मानता हूं। तुझे भी उसके प्रतिकूल करना

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उचित नहीं है। ४-६। विदुरजी सब शास्त्रों के मत को जानने के कारण बड़े बुद्धिमान् और कौरवों में श्रेष्ठ हैं। उसी प्रकार उद्धव भी अपनी बुद्धि के कारण वृष्णिवंशियों में पूजित रहता है और सब उसकी सलाह के अनुसार काम करते हैं। मुझे जुआ खेलने में सिवाय वैर के और कुछ नहीं दीखता है। इससे तू इस कर्म की इच्छा को अब छोड़ दे। माता और पिता को पुत्र के लिये जो जो काम करना कहे हैं, वे सब हम कर चुके हैं। अर्थात् इस लोक और परलोक की कामनाओं को देने-वाले सब शास्त्र तुझे पढ़ाये गये और बालकपन से घर में बड़े लाड़ से रक्खा गया और अपने सब भाइयों में बड़ा होने के कारण राज्य भी तुझको मिला और उत्तम वस्त्र पहिरने को, उत्तम भोजन खाने को और संसार में ऐसे अलभ्य पदार्थ जिनका मिलना दूसरे को दुर्लभ है तेरे लिये भोगने को मौजूद हैं। अब तुझे शोच करना निरर्थक है। अब तो तुझे चाहिए कि राज्य पाकर प्रसन्नता से रहे और अपने राज्य के बढ़ाने का प्रयत्न करे, जैसे इन्द्र स्वर्ग में रहकर शासन करता है, उसी प्रकार तू भी अपने राज्य पर शासन करे। ऐसी अवस्था में तेरे हृदय में इस दुःख की मूल के जमने का क्या कारण है। १०-१६। यह सुनकर दुर्योधन बोला—आप का कहना सत्य है। मेरे लिये भोजन, वस्त्र आदि सुंदर सुंदर भोग मौजूद हैं, परन्तु जो पुरुष दूसरे की लक्ष्मी को देखकर सहमता है, वह अधम गिना जाता है। इससे मैं अपनी साधारण लक्ष्मी के सामने युधिष्ठिर के परम वैभव को देखकर अत्यन्त दुःख पाता हूं कि हाय युधिष्ठिर ने सब पृथ्वी को अपने वश में कर लिया और मैं पत्थर की तरह बैठा हुआ देख रहा हूं। युधिष्ठिर की सभा में नीपु, चित्रक, कौंकुर, कारस्कट और लोहजंघ नाम राजा दासों की तरह टहल करते हैं। हिमालय, समुद्र और अनूप देश के राजा लोग अनेक रत्न ले लेकर द्वार पर आते थे पर हटा दिये जाते थे। युधिष्ठिर ने मुझे ज्येष्ठ और श्रेष्ठ जानकर भेंट लेने के काम पर नियुक्त

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

किया था। सो मैं असंख्य रत्न लेते लेते थक गया, परन्तु उनका पार नहीं पाया। अन्त को थक कर जब मैं खड़ा हो रहा तब राजा लोग जो दूर दूर से रत्न लाये थे मेरे बैठने की प्रतीक्षा करने लगे। १७-२४।

इस धन का तो डाह मुझे हो ही रहा था कि उसमें दानव की बनाई हुई सभा में स्फटिक की बनी हुई नलिनी को जो पानी से भरी हुई दीखती थी, देखने लगा। मैंने वहाँ पानी समझ कर अपने वस्त्र ऊंचे को उठा लिये, परन्तु वहाँ जल न था। मेरी उस भ्रान्ति को देखकर भीमसेन हँसने लगा। उस समय मेरा चित्त एक तो अपने को रत्नसहित और शत्रु की बड़ी लक्ष्मी को देखने से व्याकुल हो ही रहा था, दूसरे भीमसेन की हँसी को देखकर और हृदय जलने लगा। मैंने भीमसेन के मारने का भी विचार किया, परन्तु अपने को असमर्थ देखकर और यह जान कर कि कहीं मेरी भी गति शिशुपाल की सी न हो मैं चुपका हो रहा। इसके पीछे उसी सभा में मैं एक बावली के पास जिसमें कमल लगे हुए थे, गया। उसे देखकर मुझको यह भ्रांति हुई कि यहाँ जल नहीं है; स्थल है, और मैं उसमें गिर पड़ा। मेरे सब कपड़े भीग गये। इस बात को देखकर अर्जुन और श्रीकृष्ण ठट्ठा मारकर हँस पड़े। द्रौपदी भी अपने साथ की स्त्रियों सहित हँसी। उस हँसी को देखकर मैं परम दुःखी हो गया। उसी समय युधिष्ठिर की आज्ञा से नौकरों ने मुझे सूखे वस्त्र लाकर पहिरने को दिये। उनको लेकर मैं और भी पीड़ावान् हो गया। इसके पीछे मैं एक स्थान के भीतर घुसने लगा, उस स्थान में कोई द्वार न था, परन्तु ऐसा जान पड़ता था कि द्वार है। द्वार न होने के कारण घुसते में मेरे माथे में स्फटिक की शिला की ठोकर लगी। नकुल और सहदेव इस बात को देखकर दौड़े और मुझे पकड़ कर सहदेव आश्चर्य से कहने लगा—हे राजा! द्वार इधर है, इधर से चलो। उसी समय भीमसेन ने मुझे यह कहकर पुकारा—हे राजा! हे धृतराष्ट्र के पुत्र! और खिलखिला के हँस

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

के बोला कि द्वार इधर है। इसके सिवाय मैंने उस सभा में वे रत्न देखे जिनके नाम भी नहीं सुने थे। सो हे पिता ! इन सब कारणों से मैं अत्यन्त दुःखी हो रहा हूं। २५-३६।

इक्यावनवाँ अध्याय

दुर्योधन का धृतराष्ट्र से युधिष्ठिर के यज्ञ में अनेक देशों से आये हुए धन का वृत्तांत कहना

दुर्योधन बोले हे पिता ! अब मैं आपसे पांडवों के धन का हाल कहता हूं कि कहाँ कहाँ से और कौन कौन लाया था। यद्यपि मुझको यह अच्छी तरह मालूम नहीं है कि किस किस देश से कितना कितना धन आया था। राजा काम्बोज ने ये चीज़ें राजा युधिष्ठिर को भेंट की थीं, बिडाल और मेष के रोम से बुने हुए वस्त्र जिन पर सुनहरा काम हो रहा था। मृगचर्म, तीन सौ घोड़े जो तीतर के समान विचित्र थे, रंग जिनका तोते की नाक के समान था। तीन सौ खच्चर जो पीलू, छोंकर और इंगुद वृक्षों के पत्तों को खाने के कारण पुष्ट हो रहे थे। मैंने यह भी देखा कि युधिष्ठिर के द्वार पर खेती करनेवाले ब्राह्मण और बहुत से शूद्र जो दास करने के योग्य थे, तीन वर्ष के माल के धन को युधिष्ठिर को भेंट देने के लिये खड़े रहे, परन्तु उनको भीतर जाने की आज्ञा नहीं मिली। दूसरे किसान और गौ पालनेवाले ब्राह्मण सुनहरे कमंडलों में घृत आदि लिये हुए आये, परन्तु भीतर वे भी नहीं जाने पाये, सब भेंट को लिये हुए बाहर ही खड़े रहे। मरुकच्छ देश के रहनेवालों ने कर्पासिक देश की रहनेवाली एक लक्ष दासी जो श्याम वर्ण सूक्ष्म अंग अर्थात् पतली देह, बड़े बड़े बाल और सोने के आभरणों से भूषित थीं तथा राकव नाम मृगों के चरसे जो ब्राह्मणों से लेकर शूद्रों तक के काम के थे और कंधार देश के घोड़े भेंट किये। १-१०।

समुद्र के निष्कुट और पार बसनेवाले मनुष्य जो उन धान्यों को

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

खाकर रहते हैं, जो नदी के जल अथवा वर्षा में स्वतः ही उत्पन्न होते हैं, अपने साथ वैराम, पारद, आभीर और कितव देशों के मनुष्यों को लिये हुए नाना प्रकार के रत्न, भेड़, बकरी, सुवर्ण, खच्चर, ऊंट, मधु और अनेक प्रकार के कम्बलों को ले लेकर भेंट देने को आये थे, द्वार पर रोके हुए खड़े रहे। इनके सिवाय प्राग्ज्योतिष का राजा भगदत्त जो म्लेच्छों का अधिपति और महारथी है, यवनों को साथ लिये हुए आजानेय जाति के बड़े शीघ्र चलनेवाले घोड़े आदि अनेक प्रकार की भेंटें ले लेकर आया था, परन्तु द्वार पर रोक दिया गया, फिर पीछे से हीरा और पद्मराग मणियों से जड़े हुए वस्त्र और शुद्ध हाथी दाँत की मूठ लगी हुई तलवारें भेंट देकर भीतर प्रवेश करने पाया। उस समय मैंने उस द्वार पर औष्णीक, अंतिवास, रोमक, पुरुषादक और एकपाद नाम मनुष्यों को जिनमें किसी के दो और किसी के तीन आँखें और किसी किसी की आँखें माथे में थीं, देखा था। बहुत से राजा लोग अनेक प्रकार की भेंट और दश सहस्र खच्चर जो अनेक देशों में उत्पन्न होने के कारण अनेक रंग के और सिखाये हुए विख्यात थे, लेकर आये थे। जब उन्होंने वह सब और बहुत सा सोना चाँदी युधिष्ठिर को भेंट कर दिया तब भीतर सभा में जाने पाये। इसी प्रकार एकपाद नाम मनुष्यों ने अमूल्य सुवर्ण, बहुत से सुंदर घोड़े जिनका रंग तोते की नाक और बीरबहूटी के समान और चाल मन के वेग के समान थी भेंट दिये। ११-२३। चीन, शक, ओड्र, बर्बर, वार्षणेय, हारहूंण, कृष्ण, हैमवत, नीप और अनूप देशों के मनुष्य अनेक प्रकार के घोड़े और दश सहस्र बड़े बड़े खच्चर जिनकी गर्दन काली, रंग सुंदर, सिखाये हुए पुष्ट और सौ कोस चलनेवाले थे, भेंट देने को लेकर आये और सभा के द्वार पर रोके जाने के कारण से खड़े रहे। कंबूतीर के रहनेवाले राकब नाम मृगचर्म, रेशमी दुशाले, उत्तर देश के बने हुए अनेक प्रकार के रेशमी गुच्छे लगे हुए चित्र विचित्र ऐसे चिकने वस्त्र जिनमें सूत

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

की बुनावट मालूम नहीं पड़ती थी, भेड़ों के रोम के बने हुए कम्बल, सावर, तीच्ण धारवाली बड़ी बड़ी तलवारें, दुधारा खड्ग, शक्ति, परश्वध, पश्चिमदेश के बने हुए फरसे अनेक प्रकार के रस और बहुत से रत्न ले लेकर युधिष्ठिर के भेंट देने को आये, परन्तु द्वार पर रोक दिये गये और वहीं खड़े रहे। शक, तुषार, कंक, रोमश और सींग रखनेवाले अनेक देशों के मनुष्य बड़ी बड़ी दूर जानेवाले हाथी, अर्बुद, घोड़े और सुवर्ण आदि अनेक चीज़ें लेकर वहाँ आये, परन्तु भीतर जाने की उन लोगों को भी आज्ञा न मिली, द्वार ही पर खड़े रहे। २४-३१। पूर्व देश के राजा लोग मणि और सुवर्ण से भूषित हाथीदाँत के आसन, रथ आदि शयन और विचित्र कवच अनेक प्रकार के शस्त्र, रथ जो सुवर्ण से जटित अच्छे सिखाये हुए घोड़ों से युक्त और मृगचर्म से मढ़े हुए चित्र विचित्र झूलें अनेक प्रकार के रत्न, नाराच बाण, अर्द्ध नाराच बाण और नाना प्रकार के शस्त्र युधिष्ठिर को भेंट करने पर भीतर घुसने पाये थे। ३२-३५।

बावनवाँ अध्याय

दुर्योधन का धृतराष्ट्र से उन राजाओं का वृत्तांत कहना जिन्होंने युधिष्ठिर को यज्ञ में कर लालाकर दिया था

दुर्योधन बोला—उक्त लोगों के सिवाय और जिन जिन राजाओं ने युधिष्ठिर को यज्ञ में धन ला लाकर दिया था, उनका भी वृत्तांत मैं कहता हूं। खस, एकासन, ह्यर्ह, प्रदर, दीर्घवेणु, पारद, कुलिंद, तंगण और परतंगण नाम पहाड़ी देशों के राजा लोग जो मेरु और मन्दर पर्वतों के बीच में शैलोदा नदी के तट पर कीचक और वेणु नाम वृक्षों की छाया में बसते हैं, नम्रतापूर्वक युधिष्ठिर को भेंट करने के लिये एक द्रोण पिपीलकजाति का सुवर्ण और काले तथा लाल रंग के चमर, शुक्ल आदि मणि जिनका प्रकाश चन्द्रमा के समान था। हिमालय

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पहाड़ के पुष्पों के मधु, कैलास पर्वत के उत्तर ओर की बड़ी बल करनेवाली ओषधियां, अन्य बहुत प्रकार की चीज़ें ले लेकर आये और रोके जाने के कारण से सब पदार्थ लिये हुए द्वार पर खड़े रहे। १-७। हिमालय पहाड़ के परार्द्ध और उदयाचल का रूप देश समुद्र और लौहित्य पर्वत पर रहनेवाले राजा लोग जो फल और मूल खाते, चमड़े के वस्त्र पहिनते हैं तथा क्रूर शस्त्रधारी और क्रूरकर्मा कहलाते हैं, उनको भी मैंने देखा कि चन्दन, अगरु, काला अगरु आदि काष्ठों के भार और चर्म, रत्न, सुवर्ण, अनेक सुगन्ध देनेवाले पदार्थ, दश सहस्र दासियां, दूर दूर के मृग, पक्षी और अनेक पहाड़ी पदार्थों को लिये हुए युधिष्ठिर के द्वार पर खड़े हुए थे। कैरात, दर्द, दर्व, शूर, यमक, औदुंबर, दुर्विभाग, पारद, वाह्लीक, काश्मीर, कुमार, घोरक, हंसकायन, शिवि, त्रिगर्त्त, औधेष्ठ, मद्र, कैकय, अंबृष्ट, कौंकुर, तार्क्ष्य, वस्त्रप, पल्हव, वशाती, मौलेय, क्षुद्रक, मालव, पौंड्रक, कुक्कुर, शक, अंग, वंग, पुंड्र, शाणवति और गय आदि देशों के कुलीन और शस्त्रधारी क्षत्रियों ने सैकड़ों प्रकार के धन ला लाकर युधिष्ठिर को भेंट किये। ८-१७।

कलिङ्ग, मगध, ताम्रलिप्त, पुंड्रक, दौवालिक, सागरिक, पत्तोर्ण, शैवत्र, कर्ण और प्रावर्ण आदि देशों के राजा लोग युधिष्ठिर के द्वार पर आकर खड़े रहे। युधिष्ठिर ने उन सबको एक एक करके द्वारपालकों के हाथों से बुलवाया; और वे लोग एक एक सहस्र हाथी जिनके बड़े बड़े दांत सुनहरी डोरियों और कमल के रंगकीसी झूलों से शोभित थे, भेंट दे देकर सभा के भीतर गये। काम्यक सरके समीपी देश के उन हाथियों पर कवच पड़े हुए थे। १८-२१। इनके सिवाय और भी बहुत से देश देशांतरों से आये हुए राजाओं ने युधिष्ठिर को भेंटें दीं। चित्ररथ नाम गन्धर्वों के राजा ने चार सहस्र ऐसे घोड़े जो वायु के समान चलते थे, दिये। तुंबुरु नाम गन्धर्व ने सौ घोड़े जिनका रंग आम्र के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पत्तों के सदृश और प्रत्येक घोड़े के गले में एक एक सोने का हार पड़ा हुआ था, युधिष्ठिर को भेंट किये। राजा कृति ने शूकर देश के कईसौ हाथी निवेदन किये। बिटस और मत्स्य देश के राजाओं ने एक-एक हज़ार मतवाले हाथी जिनके गले में सोने की माला पड़ी हुई थी देकर युधिष्ठिर को प्रसन्न किया। पांशु देश के वसुदान नाम राजा ने छब्बीस हाथी, कांचन मालाधारी दो सहस्र घोड़े जो जवान, बलवान् और शीघ्रगामी थे, युधिष्ठिर को भेंट किये। उस यज्ञ में राजा द्रुपद ने चार सहस्र दासी, दश सहस्र दास, जिनके स्त्रियां भी थीं, कई सौ हाथी और हाथियों सहित छब्बीस रथ युधिष्ठिर को दिये और कहा—पाण्डवों के यज्ञ के लिये मैं अपना सब राज्य देता हूं। अर्जुन का मान रखने के लिये श्रीकृष्णचन्द्र ने भी चार सहस्र हाथी दिये। ये दोनों एक दूसरे की आत्मा हैं और आपस में प्राणों से अधिक प्रीति रखते हैं। श्रीकृष्णचन्द्र अर्जुन के लिये स्वर्ग भी छोड़ सकते हैं और अर्जुन भी उनके लिये अपने प्राण देने को तैयार हैं। २२-३२। मलयागिरि और दर्दुर पर रहनेवाले क्षत्रियों ने सुगन्धित चन्दन के रसों से भरे हुए सुवर्ण के कलश, प्रकाशयुक्त मणि, अगरु, चन्दन के भार, रत्न, सुवर्ण और महीन महीन वस्त्र युधिष्ठिर को भेंट किये। चोल व पांड्य देश के मनुष्य द्वार पर भी न पहुँचने पाये। सिंहल देश के क्षत्रियों ने समुद्र में उत्पन्न होनेवाली चीजें, वैडूर्यमणि, मोती, सैकड़ों भूलें, मणि और सुन्दर वस्त्र पहिने हुए दासियां लाकर भेंट कीं। ब्राह्मण, वैश्य और शूद्र लोग भी प्रीति और बहुत मान के कारण वहां भेंट ले ले कर आये। सब म्लेच्छ, सब वर्ण और नाना देशों के नाना जाति के मनुष्य उस यज्ञ में आये कि जिनके कारण वह युधिष्ठिर का यज्ञस्थान स्वर्ग के तुल्य हो गया। उन सबको और राजा लोगों की लाई हुई भेंट को देखकर मेरे मन में प्राण छोड़ देने की इच्छा हो गई। मैं आपसे युधिष्ठिर का वैभव कहां तक कहूं। एक छोटी सी बात है कि उसके यहाँ तीन पद्म और दश

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सहस्र तो केवल हाथी और घोड़ों पर चढ़नेवाले दास हैं। जिनको युधिष्ठिर कच्चा, पक्का दोनों प्रकार का भोजन देता है। एक अर्बुद रथ और अनगिनती प्यादे हैं। उनके भोजन का प्रबन्ध इस प्रकार से है कि तुले हुए सीधे पक्के भोजन और एक स्थान पर इकट्ठा किया हुआ अन्न तैयार रहता और बाँटने के समय पुण्याह शब्द किया जाता है। ३४-४४।

मैंने युधिष्ठिर के घर में किसी वर्ण के किसी आदमी को ऐसा नहीं देखा, जिसने भोजन और पान न किया हो अथवा जो संस्कृत और अलंकृत न होवें। अट्ठासी सहस्र स्नातक गृहस्थ ब्राह्मणों को युधिष्ठिर नित्य भोजन देता है। उनकी सेवा को प्रत्येक के लिये तीस तीस दासी नियत कर रक्खी हैं। वे लोग भोजन करके नित्य युधिष्ठिर को शत्रुनाश होने का आशीर्वाद देते हैं। दशसहस्र यतीलोग जो ऊपर को वीर्य रखते हैं, युधिष्ठिर के घरमें नित्यप्रति सुवर्ण के पात्रों में भोजन करते हैं। द्रौपदी इन सब लोगों के भोजन करने और न करने की खबर रखती है और जब तक ये सब नहीं खा लेते तब तक आप भोजन नहीं करती। यज्ञ में ऐसा कोई राजा न था, जिसने युधिष्ठिर को कर न दिया हो। हाँ एक राजा द्रुपदने सम्बन्ध और कृष्ण ने मित्रता के कारण से तो अलबत्ता कर नहीं दिया। ४५-५०।

तिरपनवाँ अध्याय

दुर्योधन का धृतराष्ट्र से सब राजाओं को युधिष्ठिर की सेवा करते हुए देखकर संताप होने का हाल वर्णन करना

दुर्योधन बोला हे पिता! बहुत से श्रेष्ठ, सत्यप्रतिज्ञ, महाव्रत, विद्यावान्, वेदांत के वक्ता, अवभृथ नाम यज्ञ स्नान के करनेवाले, धृतिमान्, लज्जावान्, धर्मात्मा, यशस्वी और मूर्द्धाभिषिक्त राजा लोग युधिष्ठिर की सेवा किया करते हैं। मैंने उन लोगों को दक्षिणा में देने के लिये

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

काँसे की दोहनी, सहस्रों गौ और अभिषेक के लिये छोटे बड़े पात्र लाते, युधिष्ठिर को भेंट देते हुए देखा है। १-४। राजा वाह्लीक ने जांबूनद के सुवर्ण से भूषित रथ लाकर दिया। राजा सुदक्षिण काम्बोज देश के श्वेत घोड़े उस रथ में जोतने को लाया। राजा सुनीथ अनुकर्ष नाम रथ को लेकर आया। चंदेरी देश के राजा ने आप अपने हाथ में ध्वजा लाकर दी। ५-६। राजा दाक्षिणात्य ने शस्त्र, मगधदेश के राजा ने माला और पगड़ी, राजा वसुदान ने हाथी, राजा मत्स्यने धन से भरे हुए छकड़े, राजा एकलव्य ने जूते, राजा अवन्ती ने अभिषेक के लिये अनेक प्रकार के जल, राजा चेकितान ने निषंग, राजा काशी ने धनुष और राजा शल ने एक तलवार जिसकी मूठ बहुत सुन्दर थी और सुनहरे भूषण अपने हाथों से ला लाकर राजा युधिष्ठिर को दिये। ७-९।

व्यासजी समेत धौम्य ऋषि ने युधिष्ठिर को अभिषेक कराया। उस समय उसके पास देवल, असित, परशुरामजी और बड़े-बड़े तपस्वी ऋषि इस प्रकार खड़े रहे मानों महेन्द्र के पास सप्तऋषि खड़े हुए हैं। अभिषेक के पीछे सात्यकि ने युधिष्ठिर के ऊपर छत्र लगाया। अर्जुन और भीमसेन पंखा हाँकते, नकुल और सहदेव चमर डुलाते और जिस वारुणि नाम शंख को पूर्व कल्प में प्रजापति ने इन्द्र को दिया था वही शंख समुद्र ने युधिष्ठिर के पास भेजा था। उससे श्रीकृष्णचन्द्र ने विश्वकर्मा की बनाई हुई काँवर में से जल ले लेकर युधिष्ठिर को यज्ञस्नान कराया। मैं यह सब देखकर कल्मष के कारण मूर्च्छित होगया। फिर सबने मिलकर जो मंगलकारी शंखध्वनि की उसको सुनते ही मेरे रोम खड़े हो गये। १०-१८। उस समय जो राजा तेजहीन थे मूर्च्छित हो होकर गिर पड़े। धृष्टद्युम्न, सब पांडव, सात्यकि और श्रीकृष्णजी मेरी तथा उन गिरे हुए राजाओं की गति को देखकर हँसने लगे। फिर अर्जुन ने पाँच सौ बैल जिनके सींग सुवर्ण से मढ़े हुए थे ब्राह्मणों को दिये। सो हे पिता! राजा रन्तिदेव, नाभाग, यौवनाश्व, मनु, पृथु,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वैन्य, भगीरथ, ययाति और नहुष भी युधिष्ठिर की बराबरी नहीं कर सकते और की तो किनमें गिनती है। उसकी लक्ष्मी और यह राजसूय यज्ञ राजा हरिश्चन्द्र के समान है। हे तात ! इसको देखकर मुझे अपना जीना व्यर्थ जान पड़ता है। विधाता ने यह द्वापरयुग अंधे की तरह होकर बनाया है। इसी कारण विपरीत बातें होती हैं। बड़े तो घटते जाते हैं, और छोटों की बढ़ोतरी है। सो हे पिता ! यही कारण है कि मेरा चित्त स्वस्थ नहीं रहता। और मैं शोच ही शोच में पीला पड़ गया हूँ। १९-२९।

चौवनवाँ अध्याय

राजा धृतराष्ट्र का दुर्योधन को पांडवों से द्वेष न करने को उपदेश करना

दुर्योधन की उक्त बातों को सुनकर राजा धृतराष्ट्र बोला—हे पुत्र ! निस्सन्देह तू ज्येष्ठ और बड़ाई के योग्य है, परन्तु तू पांडवों से द्वेष मत करे। द्वेष करनेवाले को मरने के समान दुःख होता है। युधिष्ठिर निष्कपट है, तुझसे कुछ द्वेष नहीं रखता है। बल और धन में तेरे समान है। तुझको उससे वैर करना उचित नहीं है। तेरा पराक्रम और कुल उससे कुछ अधिक नहीं है। फिर क्यों तू मोह के वश में होकर भाई की लक्ष्मी को लेना चाहता है। इससे तू शांत हो, शोच को छोड़ दे, जो तेरी इच्छा यज्ञ करने की होवे तो तू भी अपने ऋत्विजों को बुलाकर सप्ततंतु यज्ञ कर। तेरे पास भी राजा लोग धन, रत्न और आभरणों को लेकर आवेंगे, परन्तु पराए धन के लेने की इच्छा करना नीचों का काम है। इस संसार में वृद्धि उसी मनुष्य की होती है, जो धर्म से रहता है और अपने ही धन में संतोष करता है। पराए धन की इच्छा न करना अपने काम का उद्योग करना और शरणागत को पालना ये तीनों वैभव के लक्षण हैं। १-७। जो मनुष्य चतुर, विनीत, नित्य प्रसन्न और आपत्ति में दुःख को नहीं मानता, उसका सदैव कल्याण होता है।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सो हे पुत्र ! इन पांडवों को जो तेरी बांह के समान हैं, छेदन करके अपने स्वार्थ के लिये मित्रवर्गों से द्रोह उत्पन्न मत करे। पांडव तेरे भाई हैं, उनके पास जो धन है सो तेरा ही है। उनसे तुझको द्रोह करना उचित नहीं है। हमारे और पांडवों के पिता और पितामह एक ही थे। हम में उनमें कुछ भेद नहीं है, इससे तुझको उचित है कि अपने चित्त को सावधान करके मनमानता दान दे, मनमानते भोग भोग और जैसी स्त्रियों से इच्छा हो वैसी स्त्रियों से क्रीड़ा कर। ८-११।

पचपनवाँ अध्याय

दुर्योधन का धृतराष्ट्र से अनेक नीति के कारण कहकर यह कहना कि हमको पाण्डवों की लक्ष्मी लेना ही उचित है, नहीं तो मरना अच्छा है

धृतराष्ट्र की उक्त बातों को सुनकर दुर्योधन बोला—जिस मनुष्य में अपनी कुछ बुद्धि नहीं होती, केवल सुनी हुई बातों को जानता है, वह शास्त्र के अर्थ को इस प्रकार नहीं जान सकता जैसे चमचा किसी भोजन के पदार्थ के स्वाद को नहीं पहचानता या जैसे एक नाव में बँधी हुई दूसरी नाव स्वतंत्र नहीं होती, इसी प्रकार से आप मुझको सब पूर्वापर जानने पर भी मोहित बतलाते हैं। न जाने आप अपने स्वार्थ को क्यों नहीं पहचानते। मुझे बड़ा आश्चर्य है कि आप भी मुझसे द्वेष करते हैं। १-२। आप अपने पुत्रों को मरे के समान जानते हैं। अपने स्वार्थ के काम में भविष्य अर्थात् होनहार को आरोपण कर देते हैं। जिस मनुष्य के आगे चलनेवाला ही दूसरे की शिक्षा के अनुसार चलता है, वह भला क्योंकर न भूले, और उसे क्योंकर ठीक मार्ग मिले सो आप पंडित, बुद्धिमान्, वृद्धसेवी और जितेन्द्रिय होकर हम लोगों को भुलाते हैं। बृहस्पतिजी ने राजाओं की वृत्ति को संसार की वृत्ति से भिन्न कहा है। इससे सावधान राजा को अपने कार्य का विचार सदैव करना उचित है। क्षत्रियों की वृत्ति केवल विजय करना है। चाहे उसमें धर्म हो

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

या अधर्म। इससे विजय के विषय में और बातें शोचनी ठीक नहीं हैं। जो राजा शत्रु की लक्ष्मी को हरने का विचार करता है, वह सब दिशाओं को इस प्रकार से चलायमान कर देता है जैसे चाबुक सवार घोड़े को करता है। ३-८। वही उपाय राजा का शस्त्र है। चाहे गुप्त हो, चाहे प्रकट। जिससे शत्रु को बाधा पहुँचे। कुछ युद्ध करके लेना ही शास्त्र से लेना नहीं कहाता है। शत्रु मित्र का कुछ लेख किसी जगह नहीं है। शत्रु वही है जो अपने को दुःख देवे। लक्ष्मी का मूल असंतोष है। और अपने को बढ़ाने का यत्न करना यही श्रेष्ठ नीति है। ऐश्वर्य और धन के विषय में ममता करना बुद्धिमानों का काम नहीं है क्योंकि इन दोनों को एक दूसरे से बल करके लेता चला आया है। राजाओं का यही परमधर्म है। देखो इन्द्र ने नमुचि दैत्य से मित्रता करके उसके शिर को काट डाला था। आजतक शत्रु के जीतने को वही सनातन वृत्ति चली आती है। शत्रु से विरोध न करनेवाले राजा और देशों में न घूमनेवाले संन्यासी को पृथ्वी इस प्रकार से ग्रस लेती है जैसे बिल में रहनेवाले जीवों को सर्प ग्रस लेता है। ६-१४। कुछ शत्रुता जाति पर नहीं है। जिसकी जीविका अपने तुल्य हो वही अपना वैरी है। जो राजा मोह से अपने शत्रु के पक्ष की बढ़ोतरी चाहा करता है, उसकी जड़ इस प्रकार से कटती जाती है जैसे रोग के बढ़ने से दिन-दिन शरीर क्षय होता चला जाता है। जो शत्रु छोटा सा भी है, परन्तु पराक्रम में बढ़ गया है तो वह भी इस प्रकार से जड़ काट देता है, जैसे जड़ में लगी हुई दीमक और पास के वृक्षों को भी खा जाती है। इस कारण हे पिता! आपको भी शत्रु की लक्ष्मी की वृद्धि चाहना उचित नहीं है। जातिवालों में वृद्धि उसी मनुष्य की होती है जो अपने अर्थ की बढ़ोतरी इस प्रकार से किया करता है, जैसे जन्म होने के पीछे मनुष्य का शरीर दिन-दिन बढ़ता है। शीघ्र वृद्धि करनेवाला संसार में पराक्रम ही है। पाण्डवों की लक्ष्मी को देखकर मैं अत्यन्त दुःखी हूं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

या तो उस सब लक्ष्मी को लिये ही लेता हूं नहीं तो युद्ध में मरकर सुखपूर्वक सोऊंगा। भला आप भी तो बताइये कि मेरे इस प्रकार के जीने से क्या अर्थ निकलता है कि पाण्डव तो दिनप्रति बढ़ते जाते हैं और मेरी दिन-दिन घटोतरी होती है। १५-२१।

छप्पनवाँ अध्याय

धृतराष्ट्र का दुर्योधन के कहने के अनुसार जुआ खेलने को सभा बनवाना और विदुरजी को भेजकर पांडवों को बुलवाना

दुर्योधन की उक्त बातों को सुनकर शकुनि बोला—जिस युधिष्ठिर की लक्ष्मी को देखकर तुम इतने दुःखी होरहे हो, उसको मैं जुये में जीतकर तुमको दे सकता हूं। तुम युधिष्ठिर को बुलवाओ। मैं उसको जुआ रूपी युद्ध में विना सेना के जीत सकता हूं, क्योंकि वह खेलना नहीं जानता और मैं पाँसा फेंकने में बड़ा चतुर हूं। इस जुआरूपी युद्ध में तुम मेरे पाँसों को बाण, दाउँ लगाने को धनुष् और पाँसों के फेंकने को रथ समझो। यह सुनकर दुर्योधन बोला—हे पिता! हमारे मामा पाण्डवों की लक्ष्मी को पाँसों से जीत लेने को कहते ही हैं, आप पाण्डवों को जुआ खेलने को बुलवाइये। यह सुनकर धृतराष्ट्र बोला—पहले हम अपने बुद्धिमान् भाई विदुर से सलाह कर लें तब कुछ आज्ञा देंगे। दुर्योधन बोला कि विदुरजी जैसा पाण्डवों को चाहते हैं, वैसा मुझको नहीं चाहते हैं इस कारण से वह जुआ कराने की कभी सलाह न देंगे। किसी मनुष्य को कोई काम दूसरे के आश्रित होकर करना उचित नहीं है, क्योंकि दो मनुष्यों की एक सी बुद्धि कभी नहीं होती है। १-८। जो मनुष्य निर्भय रहकर पालन करता है वह सदैव पीड़ा पाता है जैसे वर्षा में चटाई भीज जाने से गल जाती है। मनुष्य को उचित है कि जब तक सामर्थ्य हो तब तक अपने कल्याण का उपाय करे। यह सुनकर धृतराष्ट्र बोला—हमको बलवानों के साथ विग्रह करना अच्छा नहीं दीखता। तू अनर्थ को अर्थ मानकर कलह के बीज बुआना

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चाहता है जिसमें आगे तीक्ष्ण तलवारें और बाण उत्पन्न होवें।९-१२। यह सुनकर दुर्योधन बोला—जूआ खेलने में नाश और युद्ध होने की कोई बात नहीं। नल आदि पुराने मनुष्यों ने भी जुआ खेला था। इससे अब आप शकुनि की बात को अंगीकार कीजिए और सभा के बनने की आज्ञा दीजिए। जूआ खेलना सुख का द्वार है। जो खेलता है उसको बड़ा सुख होता है। इससे हमको पांडवों के साथ जूआ खेलना योग्य है। यह सुनकर धृतराष्ट्र बोला—जो कुछ तू कहता है हमको उस में से कुछ अच्छा नहीं मालूम होता। अब तेरी इच्छा में आवे सो तू कर। आगे तुझे हमारा समझाना याद आवेगा, क्योंकि यह बात कदापि कल्याणकारी और धर्म के अनुकूल नहीं है। हम जानते हैं कि जो विदुरजी ने कहा था कि इस दुर्योधन के कारण सब कुल का नाश होगा, वही अब मेरे सामने आवेगा। वैशंपायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! राजा धृतराष्ट्र ने उक्त प्रकार से कहकर और दैव को अमिट जानकर दुर्योधन की सलाह के अनुसार मनुष्यों को चिल्लाकर आज्ञा दी कि बहुत जल्दी हमारे लिये एक सभा ऐसी तय्यार करो जो एक कोस लम्बी और एक कोस चौड़ी हो और उसमें सहस्र खम्भे और सौ द्वार होवें। उस सभा का बाहर का दरवाजा स्फटिकमणि का बनाया जावे, और सब जगह वैडूर्यमणि जड़ी जावे। यह आज्ञा पाकर सहस्रों कारीगरों ने जो बड़े बुद्धिमान् और चतुर थे थोड़े ही काल में अनेक प्रकार के रत्नों से जटित करके बड़ी मनोहर सभा तय्यार कर दी। फिर उसमें सुन्दर सुन्दर सुवर्ण के आसन बिछवा दिये गये। जब उस सभा के बन चुकने का हाल राजा धृतराष्ट्र से कहा गया तब राजा धृतराष्ट्र ने विदुरजी को बुलाकर आज्ञा दी कि तुम इन्द्रप्रस्थ जाकर पांडवों को मेरी आज्ञा कहकर लिवा लाओ। पांडवों से कह देना कि तुमको सभा देखने को बुलाया है, जो चित्र विचित्र आसन और रत्नों से युक्त है, उस सभा में तुम सब भाई मिलकर मित्रता का जूआ खेलना।१३-२२।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सत्तावनवाँ अध्याय

विदुर का राजा धृतराष्ट्र से जुआ का विरोध करना।

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! राजा धृतराष्ट्र अपने पुत्र दुर्योधन के मत को जानकर और भाग्य को अटल समझकर यह करने को तत्पर हुआ था; किन्तु विद्वानों में श्रेष्ठ विदुरजी अपने भाई धृतराष्ट्र की इस अन्यायरूपी आज्ञा से अप्रसन्न होकर कहने लगे—हे राजा! मैं तुम्हारी इस आज्ञा को अच्छा नहीं समझता हूं, ऐसा मत करो, मैं कुल-नाश से डरता हूं क्योंकि जुए में आपके पुत्रों से अवश्य कलह होने की आशंका है। १-३। धृतराष्ट्र बोला—हे विदुर! यदि भाग्य सीधा है तो कलह मुझको दुःख नहीं दे सकता; क्योंकि यह संपूर्ण संसार भाग्य ही के अनुसार ब्रह्मा से रचा जाता है, स्वतंत्र नहीं है। इस लिये हे विदुर! वहाँ जाकर मेरी आज्ञा से दुःसह तेजवाले कुन्ती के पुत्र युधिष्ठिर को जल्दी यहाँ बुला लाओ। ४-५।

अट्ठावनवाँ अध्याय

विदुरजी का धृतराष्ट्र की आज्ञा से इन्द्रप्रस्थ जाकर पांडवों को लाना और पांडवों का हस्तिनापुर में आकर सबसे मिलकर वास करना

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! राजा धृतराष्ट्र से आज्ञा पाकर विदुरजी शीघ्र चलनेवाले रथ में सवार होकर पांडवों के पास, ब्राह्मण आदि वर्णों से पूजित होकर, नगर में होते हुए युधिष्ठिर के महलों में, जो कुबेर के भवनों के सदृश बने हुए थे गये। युधिष्ठिर ने विदुरजी की यथायोग्य पूजा की और आदरसहित बैठाकर धृतराष्ट्र की क्षेम कुशल पूछने लगा। महाराज, आपका मन कुछ उदास जान पड़ता है, कहिए आप हमारी कुशल के लिये आये हैं या कुछ और प्रयोजन है और यह भी कहिए, धृतराष्ट्र के पुत्र धृतराष्ट्र की आज्ञा में चलते हैं या

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नहीं? और प्रजा उनके वश में है या नहीं। यह सुनकर विदुरजी बोले—राजा धृतराष्ट्र अपने पुत्र सहित कुशल हैं और पुत्र के गुणों से विनीत प्रसन्न और शोकरहित हैं। उसने तुम्हारी सबकी क्षेम कुशल पूछकर यह कहला भेजा है कि तुम्हारे भाइयों ने भी एक सभा तुम्हारी सभा के सदृश बनवाई है। उसको तुम सब भाई आकर देखो और भाई भाई मिलकर मित्रता का जुआ खेलो। यहाँ सब कौरवकुल के मनुष्य इकट्ठे होकर तुम्हें देखने की अभिलाषा रखते हैं। इसलिए हे राजा युधिष्ठिर! तुम वहाँ पहुँचने पर उन कपटी खिलाड़ियों को जिनको राजा धृतराष्ट्र ने जुआ खेलने को नियत किया है देखोगे। १-६।

यह सुनकर युधिष्ठिर बोले--जुआ खेलने में हमको कल्याण दिखाई नहीं देता है। ज्ञानवान् मनुष्य जान बूझकर जुआ कभी नहीं खेलते, परन्तु हम सब तो आपकी आज्ञा के अनुसार चलनेवाले हैं। आप कहिए आपकी समझ में यह काम कैसा है। विदुरजी बोले—मैं तो जुए को सदैव अनर्थ की जड़ समझता हूं। मैंने इसके निवारण करने के अनेक यत्न किए परन्तु मेरा कोई उपाय न चला, अन्त को धृतराष्ट्र का भेजा हुआ तुमको बुलाने को यहाँ चला आया, तुमको जिस बात में कल्याण दीखे वही करो। युधिष्ठिर बोले—धृतराष्ट्र के पुत्रों के सिवाय और कौन कौन कपटी खिलाड़ी हैं कि जिनके साथ हम असंख्य धन लेकर जुआ खेलें। विदुरजी बोले कि कन्धार का राजा शकुनि नाम बड़ा खिलाड़ी है वह मर्यादा छोड़कर खेलता है; और पाँसे अपनी इच्छा के अनुसार डाल सकता है। इसके सिवाय राजा विविंशति, चित्रसेन, सत्यव्रत, पुरुमित्र और जय भी बड़े खिलाड़ी हैं। युधिष्ठिर बोला—आप सत्य कहते हैं, वहाँ बड़े बड़े छली, कपटी और भय देनेवाले खिलाड़ी इकट्ठे हुए हैं, परन्तु मनुष्य कोई स्वाधीन नहीं हैं, सब प्रारब्धाधीन हैं इससे मैं धृतराष्ट्र की आज्ञा के अनुसार जुए में जाऊंगा। बड़ों की आज्ञा का पालन करना सदैव श्रेष्ठ होता है, परन्तु

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जो मुझको कोई बुलावेगा नहीं, तो मैं शकुनि से जुआ नहीं खेलूंगा। बुलाने पर हटूंगा भी नहीं, मेरा सनातन का यही व्रत है। १०-१६। वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! युधिष्ठिर ने विदुरजी से उक्त प्रकार से कहकर यात्रा की सामग्री तैयार करने की आज्ञा दी। प्रातःकाल होते ही सब भाई, सेवक और द्रौपदी आदि स्त्रियों सहित हस्तिनापुर को चले। देखो मनुष्यको जब दैवगति प्राप्त होनेवाली होती है, तब उसकी बुद्धि और तेज सब जाता रहता है। पाँसों से बँधे हुए मनुष्य की तरह वह ईश्वर के अधीन रहता है। इसी कारण युधिष्ठिर ने भी धृतराष्ट्र के बुलाने को अंगीकार कर लिया और विदुरजी के साथ साथ भाइयों सहित वाह्लीक के दिये हुए रथपर चढ़कर हस्तिनापुर पहुँचा। वहाँ धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोणाचार्य, कर्ण, कृपाचार्य, अश्वत्थामा, सोमदत्त, दुर्योधन, शल्य, शकुनि, दुःशासन, जयद्रथ और अन्य राजा लोग भाई बंधु तथा कौरवकुल के लोगों से यथायोग्य मिलकर भाइयों सहित धृतराष्ट्र के महल के भीतर गया। वहां जाकर उसने गांधारी को दण्डवत् करके उससे आशीर्वाद पाया। फिर उस वृद्ध अंधे राजा धृतराष्ट्र के पास गया। राजा धृतराष्ट्र ने उनको प्यार किया और सब कौरवकुल के मनुष्य उनको देखकर प्रसन्न हुए। १७-३१। इसके पीछे युधिष्ठिर आदि पाँचों भाई द्रौपदी आदि स्त्रियों सहित रत्नजटित मकानों में आज्ञा पाकर टिक गये। उस समय धृतराष्ट्र के पुत्रों की स्त्रियाँ द्रौपदी के वैभव को देखकर अप्रसन्न हुईं। पांडवों ने उन स्थानों में बसकर विश्राम किया। स्त्रियों से बातचीत करके सन्ध्यावन्दन आदि रात्रि के सब कर्म किये। फिर ब्राह्मणों से स्वस्त्ययन कराके सुन्दर सुन्दर भोजन खा पीकर आनन्दपूर्वक सो गये। प्रातःकाल उठकर नित्यकर्म किया और जुआ खेलनेवालों के साथ साथ सभा में गये। ३२-३८।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उनसठवाँ अध्याय

युधिष्ठिर का सभा में जाना और शकुनि से वार्तालाप होकर जुए का प्रारम्भ होना।

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! राजा युधिष्ठिर अपने भाइयों सहित सभा में सब राजाओं और छोटे बड़ों से यथायोग्य अवस्था के अनुसार मिलकर सुन्दर आसनों पर भाइयों सहित बैठ गया। फिर जब सब राजा लोग भी बैठ गये, तब राजा सुबल के पुत्र शकुनि ने युधिष्ठिर से कहा कि इस सभा में चौपड़ बिछी हुई है और पाँसे भी रक्खे हुए हैं, आइए जुआ खेलें। यह समय भी अच्छा है। सब मनुष्य आपकी बाट देख रहे हैं। यह सुनकर युधिष्ठिर बोला—जुआ छलरूप और पाप की जड़ है, न इसमें कुछ क्षत्रियों का पराक्रम है और न यह नीति के ही अनुसार है। इससे जुए की प्रशंसा करना तुमको उचित नहीं। सज्जन लोग जुआरियों की प्रशंसा नहीं करते इसलिए हे शकुनि! तुमको निर्दयी होकर हमको कुमार्ग से जीतना उचित नहीं है। १-६।

शकुनि बोला—जो जुआ खेलना अच्छे प्रकार से जानता है, वह सब क्रियाओं में चतुर हो जाता है और जीतना हारना तो केवल पाँसों के अधीन है। आप कुछ किसी बात की शंका न कीजिए। अपने योग्य दावँ लगाकर जुआ खेलिए। यह सुनकर युधिष्ठिर बोला—असित और देवल आदि बड़े-बड़े ऋषियों ने कहा है कि छलियों के साथ छल से जुआ खेलना बड़ा पाप है। युद्ध करके जीतना ही श्रेष्ठ है।७-१०। जो मनुष्य श्रेष्ठ हैं वे मुख से नहीं बकते और न किसी काम में कपट करते हैं। केवल युद्ध ही की इच्छा करते हैं, जो सत्पुरुषों का व्रत है। हे शकुनि, जिस धन से ब्राह्मणों के प्रयोजन निकलते हैं और विद्या सीखने का यत्न किया जाता है, उस धन से जुआ खेलकर तुमको दूसरों को जीतना उचित नहीं है। मेरी इच्छा नीच कर्म करके सुख भोगने और पराए धन को लेने की नहीं है। यह काम कपटी मनुष्यों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

का है, सत्पुरुष इसको अच्छा नहीं बताते हैं। यह सुनकर शकुनि बोला—जो आप जुआ खेल में छल बताते हैं तो ऐसा कौन सा काम है, जिसमें छल नहीं है। देखो जब पण्डित का अपंडित से, वेदपाठी का वेद न जाननेवाले से और अस्त्रविद्या जाननेवाले का विना अस्त्र जाननेवाले से सामना होता है, तब एक दूसरे को अपने-अपने काम में अपनी-अपनी शिक्षा की प्रबलता के अनुसार जीत लेता है। इसी प्रकार जुए में भी जो मनुष्य पाँसों के फेंकने की गति को अच्छे प्रकार जानता है, वह न जाननेवाले को जीत लेता है। इसमें छल का क्या काम है और जो छल है तो सभी बातों में छल है। इससे जो आप खेलना नहीं चाहते और खेलने को छल समझकर भयभीत हैं तो जाने दीजिए न खेलिए। ११-१७। यह सुनकर युधिष्ठिर बोला—मेरा सनातन व्रत यह है कि जो कोई मुझको जुआ खेलने को बुलाता है, उससे मैं अवश्य जुआ खेलता हूँ। इससे दैव करेगा वही होगा। मैं भी होनहार के वश में हूँ। अब आप बताइए कि कौन मनुष्य हमसे जुआ खेलेगा। हम उसको जानकर खेलना प्रारम्भ करें। यह सुनकर दुर्योधन बोला कि दावँ लगाने को रत्न और धन तो मैं दूँगा और हमारे मामाजी तुमसे जुआ खेलेंगे। युधिष्ठिर ने कहा—यह जुआ मुझको विषम मालूम होता है कि जिसमें दावँ कोई लगावेगा और खेलेगा कोई, परन्तु विद्वान् इसको अंगीकार करें? अच्छा आइए खेल प्रारम्भ कीजिए। १८-२१।

साठवाँ अध्याय

द्यूतसभा में राजा धृतराष्ट्र, भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य आदि का आना तथा युधिष्ठिर का कौरवों से जुआ खेलना।

युधिष्ठिर के जुआ खेलने को तय्यार होने पर राजा धृतराष्ट्र सब राजाओं सहित उस सभा में गया और उसके पीछे भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और विदुरजी भी गये। वहाँ एक एक सुन्दर सुन्दर सिंहा-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सनों पर दो दो और एक एक होकर बैठ गये। उनके बैठने पर वह सभा ऐसी शोभायमान दीखने लगी मानों स्वर्ग में सब देवता इकट्ठे हुए हैं। सबके सब शूरवीर और तेजस्वी थे। उनके बैठ जाने पर जुआ प्रारम्भ हुआ। युधिष्ठिर बोले—यह सागरावर्त्त में उत्पन्न हुई मणि की माला जो स्वर्णजटित और बहुत मोल की है, हम दावँ पर धरते हैं। तुम भी कहो कि इसके बराबर क्या धन लगाते हो? दुर्योधन बोला—हमारे पास बहुत सा धन और मणि हैं, आप किसी बात का सन्देह न कीजिए और दावँ जीतिए। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! इसके पीछे शकुनि ने पाँसे उठा लिये और उनको फेंककर बोला कि मैं जीता। १-६।

इकसठवाँ अध्याय

युधिष्ठिर का शकुनि से जुआ होना और युधिष्ठिर का बहुत सा धन हारना।

इसके पीछे युधिष्ठिर बोला—जो मेरे दावँ को कपट और छल से जीता है तो मैं और दावँ लगाता हूँ, ये सहस्र कुंभ सोने और चाँदी से भरे हुए हैं इनकी बराबर तुम भी दावँ लगाओ। यह सुनकर शकुनि ने पाँसा फेंका और कहा—मैंने यह भी जीता। तब युधिष्ठिर बोला—यह जड़ाऊ रथ जिसपर हम चढ़कर आये हैं, और जो सहस्र रथों के समान व्याघ्र के चर्म से मढ़ा हुवा घंटालियों से युक्त और आठ श्वेतरेत के बहुत श्रेष्ठ घोड़ों से जुता हुआ, जिसके चलने में झंझ-नाहट मेघ की गरजना के समान होती है, हम दावँ पर लगाते हैं। वैशम्पायनजी बोले कि छली शकुनि ने यह सुनकर पाँसा फेंका और कहा—मैं जीता। फिर युधिष्ठिर बोला—जो मेरी एक लाख तरुण दासियाँ मेरी आज्ञा से स्नातक ब्राह्मण मन्त्री और राजा लोगों की सेवा करती हैं, और माला कंगन घुँघरू आदि अनेक मणिजटित सुवर्ण के गहनों और सुन्दर-सुन्दर वस्त्रों से अलंकृत हैं और चौंसठ कला

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

और गाने बजाने में बड़ी प्रवीण हैं, उनको मैं दावँ पर लगाता हूँ। वैशम्पायनजी बोले—उस छली शकुनि ने उक्त दावँ को सुनकर पाँसे फेंके और कहा कि यह भी मैंने जीता। १-११। तब युधिष्ठिर बोले—जितनी दासी हैं उतने ही मेरे दास भी अनुलोम और प्रदक्षिण जाति के हैं, वे सब बड़े ज्ञानी जितेन्द्रिय और युवा हैं और रेशमी वस्त्र और कुण्डल धारण किये हुए दिन रात हाथों में सुवर्ण की झारियाँ लेकर अतिथियों को भोजन कराया करते हैं, मैं उन सबको दावँ पर लगाता हूँ। वैशम्पायनजी बोले—वह छली शकुनि यह सुनकर पाँसा फेंककर बोला—मैं जीता। १२-१४। तब युधिष्ठिर बोले—जो मेरे पास सहस्रों मतवाले हाथी सुनहरी झूल और माला धारण किये हुए, अच्छी तरह सिखाये हुए, राजाओं की सवारी के योग्य, युद्ध में किसी शब्द से न डरनेवाले, आठ-आठ हथिनियों से युक्त, और मेघ के समान गर्जनेवाले हैं, जिनके शरीर बड़े-बड़े और दांत लम्बे-लम्बे हैं उनको मैं दावँ पर लगाता हूँ। वैशम्पायनजी बोले कि शकुनि ने यह सुनके हँसकर पाँसा फेंका और कहा कि मैंने यह भी जीत लिया। १५-१८। तब युधिष्ठिर बोले कि हाथियों की संख्या के समान जो मेरे रथ हैं जिनमें सुनहरी पताका और ध्वजा लगी हुई हैं और सिखाये हुए घोड़े जुते हुए हैं और जिनपर चित्रयोधी रथी जो सहस्र-सहस्र मुद्रा मासिक पाते हैं, उनको मैं दावँ पर लगाता हूँ। वैशम्पायनजी बोले—यह सुनकर उस दुष्ट और वैर रखनेवाले शकुनि ने पाँसा फेंककर कहा कि मैं जीता। १९-२१। तब युधिष्ठिर बोले कि मेरे पास जो तित्तिर वर्ण के गंधर्वों के देश के सुनहरी माला पहिरे हुए सौ घोड़े हैं, जिनको चित्ररथ गंधर्व ने युद्ध में जीते जाने के कारण से अर्जुन को प्रीतिपूर्वक दिये थे, उनको मैं दावँ पर धरता हूँ। वैशम्पायनजी बोले—यह सुनकर उस छली शकुनि ने पाँसा फेंककर कहा यह भी मैं जीता। २२-२४। तब युधिष्ठिर बोले—हमारे पास अयुत रथ और

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

छकड़े हैं, जिनमें छोटे बड़े घोड़े जुते हुए हैं और वर्ण वर्ण के साठ सहस्र वीर और पुष्ट योद्धा जो नित्य चावल और दूध का भोजन करते हैं उनपर सवार हैं, मैं उन रथों को दावँ पर लगाता हूँ। वैशम्पायनजी बोले—वह छली शकुनि पाँसा फेंककर बोला—मैं जीता। २५-२८। तब युधिष्ठिर बोले—हमारे पास तांबे और लोहे के चार सौ घड़े जिनमें एक-एक द्रोण उत्तम सुवर्ण भरा हुआ है रक्खे हुए हैं, उनको मैं दावँ पर लगाता हूँ। वैशम्पायनजी बोले—उस छली शकुनि ने यह सुनकर पाँसा फेंक दिया और बोला कि मैं जीता। २६-३१।

बासठवाँ अध्याय

विदुरजी का धृतराष्ट्र को समझाना और दुर्योधन को त्याग करने का उपदेश देना।

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! जब उक्त रीति से घोर जुआ होने लगा तब सब संशयों को दूर करनेवाले विदुरजी बोले—हे राजा धृतराष्ट्र! जो कुछ मैं आपसे कहता हूँ, उसको समझिए। मैंने आपसे पहले भी वही कहा था पर मेरा कहना आपको अच्छा नहीं मालूम हुआ, सच है कि जब रोगी असाध्य हो जाता है तब उसको कोई दवा गुण नहीं करती। अब मैंने निश्चय समझ लिया कि जो इस पापी दुर्योधन ने उत्पन्न होते ही गीदड़ के रोने का सा शब्द किया था उसका फल अब आन पहुँचा है। यही आप सब लोगों के काल का हेतु होगा। आपने इस दुर्योधन को मोह से अपने घर में पुत्र नहीं किन्तु गीदड़ पाला है। अब इसके विषय में जो कुछ करना उचित है वह मैं शुक्रजी की कही हुई नीति के अनुसार कहता हूँ। १-४। जैसे मधु अर्थात् शहद का व्यापार करनेवाला मनुष्य शहद लगा हुआ देखकर वृक्षपर उसे लेने को चढ़ जाता है, परन्तु यह नहीं जानता कि इसपर चढ़कर मैं गिरूँगा और अन्त में उसकी यही गति होती है कि वह

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

गिर पड़ता है। इसी प्रकार यह दुर्योधन पूर्वापर को न जानकर इन महारथियों के साथ जुआ खेलकर वैर बिसाता है। मेरी जान में एक समय भोज के वंश में एक राजा ने अपने पुरवासियों के हित के लिये अपने पुत्र को जो अयोग्य था त्याग दिया था। उस पुत्र का नाम कंस था। और सब अंधक यादव और भोजवंशियों के त्याग करने पर श्रीकृष्णजी ने उसे मार डाला था। उसके मारे जाने पर सब स्वजातीय प्रसन्न हुए और उन को आनन्द करते हुए सौ वर्ष बीत गये। इसी प्रकार आप अर्जुन को आज्ञा दे दीजिये कि वह दुर्योधन को निग्रहण अर्थात् गिरिफ्तार कर लेवे। ऐसा करने से सब कौरवों को बड़ा आनन्द होगा। इससे हे राजा धृतराष्ट्र! आपको उचित है कि इस काग और गीदड़रूपी दुर्योधन के बदले में इन मयूर और शार्दूलरूपी पांडवों को मोल ले लेवें। और अपने को शोक के सागर में न डुबावें। ५-१०। मनुष्य को कुल के लिये एक आदमी को, ग्राम के लिये एक कुल को, देश के लिये एक ग्राम को, और अपनी आत्मा के लिये पृथ्वी का त्याग देना उचित है। देखो शुक्रजी ने जो सर्वज्ञ और सबके चित्त की वृत्ति के जाननेवाले हैं, असुरों से यह कहकर कि यह पुत्र तुम सबका शत्रु और सबको भय दिलानेवाला होगा जंभ को त्याग करवा दिया। इसी प्रकार से आपको भी इस दुर्योधन को त्याग देना उचित है। किसी राजा ने मांस और सुवर्ण के लोभ से एक पक्षी को जो वन में अपने घोंसले में रहता था और नित्य सुवर्ण उगिलता था, मार डाला। ऐसा करने से उस राजा के यह लोक और परलोक दोनों नाश हो गये। इससे आप भी पांडवों से द्रोह न कीजिये, नहीं तो आपको भी उस पक्षी के मारनेवाले राजा के समान दुःख होगा। आपको उचित है कि जैसे माली बागों में फूल बड़े स्नेह से तोड़ लेता है, उसी प्रकार आप भी इन कामरूपी वृक्ष के समान पांडवों में से गुणरूपी पुष्प चुन लीजिए। आप वायु के समान एक डाली को दूसरी डाली में भिड़ाकर अग्नि उत्पन्न करते

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हैं। इन पांडवरूपी वृक्षों में जुआरूपी अग्नि लगाकर पुत्र और मंत्रियों सहित क्यों मरना चाहते हैं, क्योंकि जो इन्द्र भी मरुद्गणों सहित पांडवों से युद्ध करे तो वह भी नहीं जीत सकता है। ११-१७।

तिरसठवाँ अध्याय

विदुरजी का अनेक पूर्वापर समझाकर धृतराष्ट्र को जुआ बंद कराने का उपदेश करना।

विदुरजी उक्त बातें कहकर फिर कहने लगे—हे राजा धृतराष्ट्र ! यह जुआ कलह की जड़ और आपस में फूट डालनेवाला है। आपका पुत्र जुआ नहीं खेलता है, किन्तु वैर की जड़ जमा रहा है। इसके अपराध से प्रतीप शंतनु और बाह्लीकवंशी सब मनुष्य महाकष्ट भोगेंगे। यह दुष्ट मदोन्मत्त होकर क्षेम को देश के बाहर इस प्रकार से निकाले देता है, जैसे गाय मतवाली होने पर अपने सींगों को आपही पीड़ित करती है। सुनिए, जो मनुष्य बुद्धिमान् होकर दूसरे की मति पर चलता है वह दुःखरूपी समुद्र में इस प्रकार से डूब जाता है जैसे बाल मल्लाह की नाव पर चढ़कर मनुष्य घोर समुद्र में डूब मरता है। १-४। आप तो यह जानकर प्रसन्न होते हैं कि मेरा पुत्र जुए में जीतता जाता है, परन्तु इस समय तो यह आपको विनोद देख पड़ता है और इसके अंत में यही जुआ युद्धरूप होकर मनुष्यों का नाश करेगा। आपने तो सब भाइयों के सम्मत के अनुसार यह नियम किया था कि हम पांडवों से अब विरोध न करेंगे, फिर आप इस कलह के मूल जुए को क्यों कराते हैं। हे प्रतीपवंशियो ! हे शंतनुवंशियो ! तुम तो सब दीर्घदर्शी हो, मैं शुक्रजी की कही हुई नीति को कहता हूँ उसको सुनो और मन्दबुद्धियों की मतिपर चलकर अपने को घोर अग्नि में मत जलाओ। भला यह तो बताओ कि जब इस जुए के मद से मतवाले होकर युधिष्ठिर भीमसेन अर्जुन नकुल और सहदेव क्रोध को न रोककर तुमुल युद्ध करेंगे, तब तुम लोगों की कौन रक्षा करेगा। तुम्हारे जुआ खेलने के पहिले

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

किस बात की कमी थी और जो अब तुम जुआ खेलकर पांडवों का धन जीत भी लोगे तो तुम्हारा क्या प्रयोजन निकलेगा। तुम सबको तो पांडवों को ही अपना धन जानना चाहिए। हम शकुनि को अच्छी तरह से जानते हैं, यह छलसे जुआ खेलना अच्छी तरह जानता है सो इसको जहाँ से आया है, वहीं जाने दो और पांडवों को मत लड़ाओ। ५-१०।

चौंसठवाँ अध्याय

दुर्योधन का क्रोध करके विदुरजी की निंदा करना और निकाल देना और विदुरजी का अनेक हितकारी बातें कहकर चला जाना।

विदुरजी की उक्त बातों को सुनकर दुर्योधन बोला—तुम सदैव हम लोगों की निन्दा करके दूसरों की श्लाघा किया करते हो। हम अच्छी तरह जानते हैं कि तुम दूसरों ही के हित में अनुरक्त रहते हो। हम लोगों का मूर्खों का सा अपमान किया करते हो। जो मनुष्य अपने स्वामी की निन्दा और दूसरों की बड़ाई करता है, उसको समझना चाहिए कि यह अपने स्वामी को नहीं चाहता है। तुम्हारी जीभ ही तुम्हारे मन और अंतःकरण की द्वेषता को प्रकट करती है, परन्तु हमको बड़ा आश्चर्य यह है कि जो मनुष्य द्वेष भी रखता है, वह भी लोकलज्जा से उस द्वेष को प्रकट नहीं करता है, परन्तु तुमको लोक-लज्जा भी नहीं है, तुम सर्प के समान गोद में और बिल्ली की तरह हमारे घर में रहकर हमारा ही गला काटते हो। स्वामी के साथ द्रोह करना बड़ा पाप है, परन्तु आश्चर्य है कि तुम पाप से नहीं डरते हो। हमने तो अपने शत्रुओं को जीतकर बड़ा लाभ उठाया है। तुम हमसे खोटे वचन मत कहो, तुमको हमसे मित्रता करके शत्रु से मिलाप रखना और अंतःकरण में हमसे द्वेष मानना उचित नहीं है। १-४।

जो मनुष्य क्षमा के अयोग्य वचन कहता है, उसको शत्रु समझना

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चाहिए। शत्रु की श्लाघा करने से तुम्हारा छिपा हुआ वैर ठीक-ठीक प्रकट होता है। तुमको लज्जा नहीं है और हमारे पिता के आश्रित होकर हमसे जो चाहे सो कह रहे हो अब तुम हमारा अपमान मत करो। हम तुमको अच्छी तरह जानते हैं। वृद्ध मनुष्यों के पास बैठकर बुद्धि सीखो और शत्रु की ओर मत लो करनेवाला तो मैं हूँ, तुमको हमारा अपमान करने और परुष वचन बोलने से क्या प्रयोजन है। हम तुमसे कुछ हित की सलाह नहीं पूछते हैं। इससे तुम हमको बार बार दुःख मत दो। इस संसार में शासन करनेवाला एक ईश्वर ही है, दूसरा कोई नहीं है। वही गर्भ में भी बालक को शासन करता है, और उसी की इच्छा से मैं भी यह कर्म कर रहा हूँ। देखो जो मनुष्य साँप को खिलाता और पहाड़ की चोटी पर चढ़कर चोटी को ही गिराता है, वह भी तो बुद्धि रखता है। जो दूसरा कोई उसकी बुद्धि का प्रेरक न हो तो क्या वह यह नहीं जान सकता है कि साँप को खिलाने से साँप काट खायेगा और पहाड़ पर से गिर पड़ूँगा। अच्छे लोग अपने पालन करनेवाले को कभी शिक्षा नहीं करते और जो कोई मनुष्य कपूर में आग लगा दे और शीघ्र उस आग को बुझाने का यत्न न करे तो उस कपूर की उसको फिर राख भी नहीं मिलती है। ५-१०। इसी प्रकार से जो मनुष्य अपना शत्रु और द्रोही हो उसको अपने पास बसाकर कपूररूपी कल्याण में आग लगवाना उचित नहीं है। इससे अब तुम हमारे यहाँ से चले जाओ और जहाँ चाहे तहाँ रहो। यह सुनकर विदुरजी बोले—जो मनुष्य इतनी ही बातपर दूसरे का त्याग करता है, उसके साथ मित्रता सदैव नहीं रहती। हमें अब निश्चय हो गया कि राजा लोगों के चित्त द्वेष से भरे हुए रहते हैं। पहले तो वे मिलकर मित्र बना लेते हैं और पीछे से उसी को मूसलों से मारते हैं। तुम मुझको अज्ञानी जानकर अपने को पण्डित समझते हो, परंतु अज्ञानी वही है जो पहले तो किसी को

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सुहृद् माने और पीछे उसी में दोष लगाकर उसकी बात का विश्वास न करे। जो मनुष्य मन्दबुद्धि होता है वह किसी प्रकार कल्याणकारी काम में नहीं लगाया जा सकता है जैसे वेदपाठी के घर में दुष्ट स्त्री होने से योग्य कर्म नहीं करती है। तुमको हमारा हितकारी उपदेश इस प्रकार अच्छा नहीं मालूम होता जैसे कुमारी स्त्री साठ वर्ष के पति को नहीं चाहती है। इससे जो तुमको हित और अहित काम अपनी इच्छा के अनुसार ही करना है तो हमसे सलाह मत लो। स्त्री, मूर्ख और लूले-लँगड़े मनुष्यों से पूछकर जो इच्छा हो सो करो। इसमें संदेह नहीं है कि इस संसार में ऐसे पापी मनुष्य जो मुँह देखी प्रिय बात को कहते हैं बहुत से मिलेंगे, परन्तु कड़ुवा बोलनेवाला कि जिसका परिणाम हितकारी हो और उस कड़ुये वाक्य को सुननेवाला संसार में होना कठिन है। ११-१६। राजा की सहायता वही मनुष्य कर सकता है जो राजा के प्रिय अप्रिय काम को करने के भय को छोड़कर और धर्म को श्रेष्ठ मानकर परिणाम में हित करनेवाले कड़ुये वचन कहता है। सो जैसे रोगी मनुष्य कड़ुई, तीक्ष्ण और कषैली ओषधियों को पीकर आरोग्य होजाता है इसी प्रकार से तुम भी हमारे कड़ुये, तीक्ष्ण, कषैले, यश करनेवाले और सुख देनेवाले औषधरूपी मंत्र को पीकर इस कल्मषरूपी रोग को शांत करो, ईश्वर करे तुम्हारा कल्याण उसी प्रकार से होवे जैसे मैं धृतराष्ट्र के कल्याण को चाहा करता हूँ। तुमको अब मेरा नमस्कार है। ब्राह्मण मुझे कल्याण होने का आशीर्वाद देवें जो मनुष्य पंडित होते हैं वे सर्पों को और नेत्रों में विष रखनेवाले पुरुषों को क्रोध नहीं दिलाते हैं। १७-२०।

पैंसठवाँ अध्याय

युधिष्ठिर का जुए में सब राज्य और धन हारना और पीछे अपने चारों छोटे भाई और अपने आप और द्रौपदी को भी हार जाना

उक्त बातों के समाप्त होने पर जुआ फिर होने लगा। उस समय

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

शकुनि युधिष्ठिर से बोला—आप बहुतसा धन हार चुके हैं, अब जो कुछ आपके पास और धन विना हारा हुआ हो उसे लगाइये। यह सुनकर युधिष्ठिर बोला मेरे धन की संख्या नहीं हो सकती है। मैं हारे और विना हारे धन को अच्छी तरह जानता हूँ, तुम्हारे कहने की कुछ आवश्यकता नहीं है। अच्छा अब मेरे पास जो अयुत, प्रयुत, पद्म, खर्ब, अर्बुद, शंख, महापद्म, निखर्ब, कोटि और इससे भी अधिक जितना धन है सबको दावँ पर लगाता हूँ, तुम पाँसा फेंको। वैशम्पायनजी बोले—वह छली शकुनि उक्त बात को सुनकर पाँसे फेंककर बोला—मैंने यह सब धन जीता। तब युधिष्ठिर बोला—अब मेरे पास जो बैल, घोड़े, गौ और असंख्य भेड़, बकरियाँ यहाँ और पर्णासा नदी और समुद्र के पास हैं उन सबको मैं दावँ पर लगाता हूँ। वैशम्पायनजी बोले—उस छली शकुनि ने यह प्रण सुनकर पाँसे फेंके और बोला—मैं जीता। तब युधिष्ठिर बोला—नगर, देश, पृथ्वी, ब्राह्मणों के धन के सिवाय सब वर्णों का धन और ब्राह्मणों के सिवाय सब मनुष्यों को मैं दावँ पर लगाता हूँ तुम पाँसा फेंको। वैशम्पायनजी बोले कि वह छली शकुनि उक्त प्रण को सुनकर प्रसन्न हुआ और पाँसा फेंककर बोला कि मैं जीता। इसके पीछे युधिष्ठिर बोला—ये हमारे भाई राजपुत्र जो कुण्डल आदि आभूषण पहिरे हुए बैठे हैं उन सबको मैं दावँ पर लगाता हूँ। वैशम्पायनजी बोले कि उस छली शकुनि ने यह सुनकर पाँसे फेंके और कहा—मैं यह भी जीता। १-११।

तब युधिष्ठिर बोला—मैं अपने नकुल नाम भाई को जो श्याम वर्ण और जवान है, नेत्र जिसके लाल-लाल, कंधे सिंह की तरह और बाहें लम्बी-लम्बी हैं, दावँ पर लगाता हूँ। वैशम्पायनजी बोले कि शकुनि यह सुनकर कहने लगा—अपने प्यारे भाई नकुल को हारकर फिर काहे से खेलोगे। यह कहकर उसने पाँसे फेंके और कहा—मैं जीता। तब युधिष्ठिर बोला—अब मैं अपने इस सहदेव भाई को जो धर्म का

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उपदेश करनेवाला और पंडित है, दावँ पर रखता हूँ, यद्यपि यह इस योग्य नहीं है। वैशम्पायनजी बोले—वह छली शकुनि यह सुनकर और पाँसे फेंककर बोला कि मैं जीता। सहदेव को जीतकर शकुनि बोला कि मैंने आपके दोनों प्यारे भाई नकुल और सहदेव जीत लिये। अब ये भीमसेन और अर्जुन आपके पास बड़े धनरूप हैं, इनको भी दावँ पर रखकर खेलिये। यह सुनकर युधिष्ठिर बोला कि तू बड़ा मूढ़ है, अधर्म तो करता है और नीति को नहीं देखता है। हम एक चित्त-वाले भाइयों में फूट डालना चाहता है। १२-१८। यह सुनकर शकुनि बोला कि आप बड़े हैं इससे मैं आपको नमस्कार करके कहता हूँ कि धन में चित्त लगाकर अधर्म करनेवाला मनुष्य नरकगामी होता है और जिन-जिन बातों को मतवाले ज्वारी लोग कहते हैं वे बातें स्वप्न अथवा जाग्रत् अवस्था में भी दिखाई नहीं देती हैं। यह सुन-कर युधिष्ठिर बोला कि अच्छा हम अपने अर्जुन भाई को जो हम सबको युद्ध में नाव की तरह पार उतारनेवाला और शत्रुओं को जीतने-वाला है, उसको मैं दावँ पर लगाता हूँ, यद्यपि वह इस योग्य नहीं है। वैशम्पायनजी बोले कि उस छली शकुनि ने उक्त प्रण को सुनकर पाँसा फेंका और कहा कि मैं जीता। उसको जीतकर कहने लगा कि मैं पांडवों के बड़े धनुर्धारी अर्जुन को तो जीत चुका, अब तुम्हारे पास भीमसेनरूपी धन और रह गया है, उसको भी दावँ पर लगा दो, वह धन भी खिलाड़ियों से जीतने के योग्य है। यह सुन-कर युधिष्ठिर बोला—हम अपने भीमसेन नाम गदाधारियों में श्रेष्ठ भाई को जो अकेला हम सबको ले चलनेवाला इन्द्र के समान हमको युद्ध में पार करनेवाला, क्रोधी, महात्मा तथा महाबलवान् है और जिसके कंधे सिंह केसे, भौंहें टेढ़ी और चितवन तिरछी है, दावँ पर लगाते हैं, यद्यपि वह इस योग्य नहीं है। १९-२५। वैशम्पायनजी बोले कि वह शकुनि यह सुनकर और पाँसा फेंककर बोला कि मैं जीता, और फिर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कहने लगा कि आप घोड़ा हाथी और सब धन सहित अपने भाइयों को हार चुके, अब जो कुछ धन आपके पास हारा हुआ न हो उसे दावँ पर लगाइये। यह सुनकर युधिष्ठिर बोला कि मैं सब भाइयों का प्यारा और इस जुये में हारनेवाला शेष रह गया हूँ सो मैं अपने आपको अब दावँ पर लगाता हूँ। वैशम्पायनजी बोले—उस छली शकुनि ने यह सुनकर पाँसा फेंका और कहा कि आपको भी जीता। इसके पीछे शकुनि कहने लगा—तुमने यह बड़ा नीच काम किया, जो धन के शेष रहने पर अपने आपको हार दिया। धन शेष रहने पर अपने को हारना पाप का हेतु होता है। २६-३०।

वैशम्पायनजी बोले—इसके पीछे शकुनि पाँसों को अलग अलग फेंक फेंककर उन हारे हुए लोकवीर पांडवों से कहने लगा—हे युधिष्ठिर! तुम्हारी स्त्री पांचाली बिना जीती हुई एक दावँ पर लगाने को और शेष है, उसको दावँ पर लगाकर अपने को जीत लीजिये। यह सुनकर युधिष्ठिर बोला—जो द्रौपदी छोटी बड़ी अथवा दुबली नहीं है, केश जिसके नील कुंचित हैं, शरीर में सुगंधि कमलों की सी आती है, नेत्र शरदृऋतु के फूले हुए कमलों के समान हैं, स्वरूप लक्ष्मी का सा है, और शील सम्पत्ति रूप सम्पत्ति और दया भी लक्ष्मी के समान है, उसके गुण आज्ञा का पालन, मीठा बोल और धर्म अर्थ और काम की सिद्धि को देखकर ऐसा कोई मनुष्य नहीं है जो उसे न चाहे। वह काम को पहिले से पहिले ही जान लेती है और गोपाल और छागपाल आदि सबके किये हुए और नहीं किये हुए कामों को देखती रहती है, उसका कमल तुल्य मुख पसीना निकलने से मल्लिका के समान दीखता है, कमर उसकी पतली बाल लम्बे-लम्बे और मुख अरुणाई लिये हुए है और उसके शरीर पर रोम बहुत नहीं हैं। यद्यपि उस सुन्दर अंग और कमर रखनेवाली द्रौपदी को दावँ पर लगाना बड़े दुःख की बात है, परन्तु मैं इसे भी दावँ पर धर कर खेलता हूँ।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वैशंपायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! युधिष्ठिर की उक्त बात को सुन उस सभा के वृद्धलोग धिक्-धिक् कहने लगे। ३१-४० । उस समय सब राजा लोग शोच करने लगे और भीष्म, द्रोणाचार्य और कृपाचार्य की देह में से पसीना निकलने लगा, और विदुरजी शिर पकड़ कर नीचे को मुख किये हुए सर्प के समान श्वास लेने लगे। तब धृतराष्ट्र प्रसन्न हो होकर बार-बार पूछने लगा—क्या जीता है, क्या जीता है। उस समय कर्ण, दुःशासन आदि हँसने लगे और सभा में बैठे हुए मनुष्यों की आँखों से आँसू गिरने लगे। इसके पीछे उस छली शकुनि ने द्रौपदी को दावँ पर धरा हुआ सुनकर पाँसे उठा लिये और फेंककर कहने लगा कि मैं जीता। ४१-४५।

छाछठवाँ अध्याय

दुर्योधन का विदुरजी को द्रौपदी को दासीकर्म करने के लिये लाने की आज्ञा देना और विदुरजी का उसकी निंदा करके ऐसा काम न करने का उपदेश देना

युधिष्ठिर के सर्वस्व हारने पर दुर्योधन ने विदुरजी से कहा—तुम आकर अब द्रौपदी को जो पांडवों की प्यारी स्त्री है, यहाँ ले आओ, जिसमें वह अपुण्यशीला दासियों के साथ रहकर हमारे घर की बुहारी दिया करे। यह सुनकर विदुरजी बोले—तू यमराज की पाश में बँधा होने के कारण अचेत हो रहा है जो ऐसे दुर्वचन कहता है। मृगरूप होकर तू क्यों व्याघ्रों को क्रोध दिला रहा है, तू यह नहीं जानता कि तेरे शिरपर बड़े विषधर सर्प बैठे हुए हैं। उनको क्रोधित करके अपने हठ से यमलोक को क्यों जाना चाहता है। द्रौपदी दासी किसी प्रकार नहीं हो सकती क्योंकि युधिष्ठिर ने पहिले अपने को हार-कर फिर द्रौपदी को दावँ पर रक्खा है। अपने हारने पर युधिष्ठिर द्रौपदी का ईश नहीं रहा। मुझे दीखता है कि यह दुर्योधन राजा वेणु की तरह शीघ्र नष्ट होनेवाला है। इस जुए से बड़ा भारी वैर उत्पन्न हो गया और

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दुर्योधन अन्त समय आने के कारण मतवाला हो रहा है। मनुष्य को परुष वचन बोलना, मर्मों को छेदना, नीचकर्म से शत्रु को वश में करना और दूसरे को जलानेवाली और उद्वेग करनेवाली बात कहना उचित नहीं है, ऐसा करने से मनुष्य नरकगामी होता है। १-६। जो मनुष्य मर्यादा के विपरीत ऐसे वचन दूसरे से कहता है जिनके कारण दूसरे को दिन रात शोच रहता है उसका फल कहनेवाला ही भोगता है, दूसरे का उससे कुछ बिगाड़ नहीं हो सकता। जो पण्डित हैं वे ऐसे वचन दूसरे से कभी नहीं कहते, देखो जैसे मछली आटे के लोभ से बंसी को निगल जाती है और वह बंसी उसी के गले को छेद डालती है। इसी प्रकार तुम अपनी भी गति जानकर पांडवों से वैर मत करो। पांडवों ने तुमसे कोई बात ऐसी नहीं कही जैसी तुम कह रहे हो। जो मनुष्य कुत्तों के समान हैं, वे सदैव तुम्हारी तरह वानप्रस्थ और तपस्वियों को देख-देख भूंका करते हैं। नरक का बड़ा द्वार कुटिलता है। दुर्योधन इस बात को नहीं जानता और दुःशासन आदि बहुत से मनुष्य इस द्यूत आदि कामों में उसके साथी हं। ये सब डूबना चाहते हैं और मेरे पथ्यरूपी वचनों को नहीं सुनते। अब इस दुर्योधन के कारण सर्वहरण और कुरुवंशियों का नाश होना चाहता है। सब सुहृदों को पथ्य के समान जो हमने शुक्र के कहे हुए वाक्य सुनाये हैं उनको यह लोग नहीं सुनते और अपने लोभ को बढ़ाते जाते हैं। ७-१२।

सरसठवाँ अध्याय

दुःशासन का द्रौपदी को बाल पकड़ कर सभा में खींचकर लाना और द्रौपदी का दुःखी होकर सभासदों से अपने दासी होने या न होने का प्रश्न करना

वैशंपायनजी बोले हे राजा जनमेजय ! दुर्योधन विदुरजी की उक्त बात को सुनकर धिक्कार देकर सब सभा के श्रेष्ठ मनुष्यों के बीच में प्रातिकामी सूत को देखकर कहने लगा—हे प्रातिकामी ! तू जाकर द्रौपदी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

को यहाँ ले आ। पांडवों से अब मत डर, ये विदुरजी डरे हुए हैं, सदैव विपरीत ही कहते हैं और हमारी वृद्धि कभी नहीं चाहते। वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! वह प्रातिकामी दुर्योधन की आज्ञा पाकर पांडवों के रहने के स्थान में इस प्रकार घुस गया जैसे कुत्ता सिंहों के घर में घुस जावे और द्रौपदी के पास जाकर कहने लगा— युधिष्ठिर जुए के मद में मतवाले हो रहे हैं। उन्होंने तुमको हार दिया है और दुर्योधन ने तुमको जीता है, सो तुम अब दुर्योधन के घर को चलो और वहाँ दासियों के साथ काम काज करो। यह सुनकर द्रौपदी बोली—ऐसा कौन राजपुत्र मूढ़ जुए के मद से मतवाला होगा, जो स्त्रीरूपी धन से जुआ खेलेगा। तू क्या बक रहा है, क्या युधिष्ठिर के पास जुआ खेलने को और कुछ धन नहीं है? प्रातिकामी बोला—युधिष्ठिर जुए में सब राज्य और धन हार गये। अन्त में जब कुछ न बचा तब उन्होंने पहिले अपने भाई और अपने को हार दिया और पीछे तुमको भी हार गया। द्रौपदी बोली—अच्छा तू सभा में जाकर खिलाड़ी राजा से यह पूछि आ कि तुमने पहिले मुझको हारा है या अपने को? उसके उत्तर को सुनकर फिर तेरे साथ चलूँगी, यद्यपि इसमें मुझको बड़ा दुःख है। वैशम्पायनजी बोले—द्रौपदी की बात को सुनकर वह प्रातिकामी सभा में गया और युधिष्ठिर से पूछने लगा—आपसे द्रौपदी ने पूछा है कि आपने पहिले किसको हारा है, मुझको या अपने को। १-१०। यह सुनकर युधिष्ठिर ने अच्छा अथवा बुरा कुछ उत्तर नहीं दिया, चुपका बैठा रहा। तब दुर्योधन बोला—द्रौपदी से कह दो कि तू यहीं आकर यह प्रश्न कर जिसमें जो कुछ बात हो यहाँ सब लोग सुनें। वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! वह प्रातिकामी दुर्योधन की आज्ञा पाकर फिर द्रौपदी के पास गया और कहने लगा— हे राजपुत्री! तुझको सभासद्लोग सभा ही में बुलाते हैं, मैं जानता हूँ कि अब कौरवों के नाश होने का समय आ गया है। दुर्योधन अपनी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वृद्धि अब नहीं चाहता, इसी कारण तुझको वहीं बुलाता है। द्रौपदी बोली—हाँ तू सच कहता है, ईश्वरने ऐसा ही रच रक्खा था। मूर्ख और पण्डित सब किसी पर दुःख और सुख दोनों पड़ते हैं परन्तु संसार में धर्म बड़ा श्रेष्ठ है। मुझे निश्चय है मेरा धर्म ही मेरी रक्षा करेगा। तू अब फिर सभा में जाकर सब नीति जाननेवाले और गुणवान् श्रेष्ठ सभा में बैठे हुए मनुष्यों से कह दे कि कौरवों को अपना धर्म छोड़ना उचित नहीं है। मुझे निश्चय करके ठीक ठीक उत्तर दें। उत्तर पाने पर मैं जैसा वे कहेंगे वैसा ही करूंगी। यह सुनकर वह प्रातिकामी फिर सभा में गया और जो कुछ द्रौपदी ने कहा था कह सुनाया, परन्तु पांडवों ने उसको दुर्योधन की हठ जानकर कुछ उत्तर नहीं दिया। नीचे को गर्दन झुकाये हुए बैठे रहे। वैशम्पायनजी बोले—इसके पीछे राजा युधिष्ठिर ने उस बात को सुनकर जो दुर्योधन किया चाहता था, द्रौपदी के पास दूत भेजकर कहला भेजा कि तू यद्यपि रजस्वला और एक वस्त्र ही पहिरे हुए है परन्तु अब यहाँ आकर अपने श्वशुर राजा धृतराष्ट्र के सम्मुख खड़ी हो जा। यह सुनकर वह दूत द्रौपदी के पास गया और जो कुछ युधिष्ठिर ने कहा था कह सुनाया। ११-२०। उस समय पाण्डवों ने दुःखी दीन और सत्य से पूर्ण होकर लज्जा के मारे ऊपर को दृष्टि नहीं की परन्तु दुर्योधन ने पाण्डवों का मुख देखकर प्रसन्न होकर प्रातिकामी को आज्ञा दी कि तू द्रौपदी को यहीं ले आ। यहाँ सब कौरववंशियों के सामने जो कुछ उसको कहना हो सो प्रत्यक्ष में कहे। यह सुनकर उस सूत ने द्रौपदी के कोप से भयभीत होकर और दुर्योधन की आज्ञा को तिरस्कार करके सभावाले मनुष्यों से पूछा—मैं द्रौपदी से क्या जाकर कहूं? यह सुन कर दुर्योधन ने दुःशासन को आज्ञा दी कि यह मेरे सूत का बेटा भीमसेन से डरा हुआ है। अब तेरा शत्रु कुछ नहीं कर सकते, तू आप जाकर द्रौपदी को पकड़ ला। यह आज्ञा पाकर दुःशासन सभा में से उठकर उन महारथी पाण्डवों के घर के भीतर चला गया और द्रौपदी से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बोला—हे पांचाली! हे कृष्णा! तुझको कौरवों ने जुए में जीता है और धर्म से पाया है। अब तू लज्जा छोड़कर दुर्योधन के सामने अपने को धिक्कार देती हुई चल और कौरवों की सेवा कर। यह सुन द्रौपदी अत्यन्त दुःखी होकर अपने मुख को हाथों से पोंछकर चिल्लाती हुई उधर को भागी, जिधर राजा धृतराष्ट्र के घर की स्त्रियां थीं। यह देखकर दुःशासन क्रोध करके उसके पीछे गर्जता हुआ दौड़ा और उसके शोभायमान केश पकड़ लिये। देखो ईश्वर की क्या गति है कि जो बाल राजसूय यज्ञ में अवभृथ नाम स्नान में मंत्रों के जल से सींचे गये थे, उन्हीं को दुःशासन ने पाण्डवों के पराक्रम को कुछ न समझकर पकड़कर मरोर डाला। और खींचकर उस दुःखी द्रौपदी को सभा की ओर ले चला। २१-३०। तब द्रौपदी ने खींचने और झुकने की अवस्था में धीरे से कहा—अरे मंदबुद्धि! अरे नीच! मैं रजस्वला हूं और एक वस्त्र पहिरे हुए हूं, तू मुझको सभा में मत लेचल और हे कृष्ण! हे विष्णु! हे हरि! हे नर! कह कहकर रक्षा के लिये पुकारा और रोने लगी, तब दुःशासन बोला—चाहे तू रजस्वला हो, चाहे एक वस्त्र पहिरे हो, चाहे नंगी हो, तुझको हम ने जुए में जीतकर दासी किया है, अब तेरा रहना दासियों में ही योग्य है। वैशम्पायनजी बोले—तब वह द्रौपदी जिसका आधा वस्त्र गिर गया था, बाल फैल गये थे, और दुःशासन के खींचने के कारण से काँप रही थी, क्रोध करके धीरे से बोली—इस सभा में सब बड़े बूढ़े गुरु के समान सब शास्त्र जाननेवाले बैठे हुए हैं। उनके आगे मैं इस प्रकार से क्योंकर जा सकती हूं। अरे निर्दयी! अरे नीच! मुझको नंगी क्यों करता है और क्यों खींचता है। जो इन्द्र भी तेरी सहायता को आजावेगा तो भी इन राजपुत्रों के क्रोध करने पर तू नहीं बचेगा। अरे दुष्ट! इस समय युधिष्ठिर धर्म के विचार में है, जो कि बड़ा सूक्ष्म है, उस धर्म को वही लोग जानते हैं, जिनकी बड़ी सूक्ष्म बुद्धि होती है। सो मैं उस युधिष्ठिर में सिवाय गुणों के दोष तो यत्किंचित् भी नहीं देखती हूं।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हाय! तू मुझको इस रजस्वला की अवस्था में कौरवों के सामने खींचे लिये जाता है, इनमें से इस बात को देखकर किसी को लज्जा नहीं आती। मुझे अब निश्चय हो गया कि ये सब भी तेरी ही सलाह में हैं। देखो सब कौरव इस अधर्म और मर्यादारहित काम को देख रहे हैं, इनको धिक्कार है। निश्चय अब इन सब भरतवंशियों का धर्म और चलन नष्ट हो गया है। आज द्रोणाचार्य, भीष्म, विदुर और धृतराष्ट्र सब पराक्रमरहित हो गये हैं, जो कुरुवंशियों में वृद्ध और मुख्य होकर ऐसा अधर्म देखते हैं। ३१-४०। वैशंपायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! इसके पीछे द्रौपदी ने उक्त प्रकार कह कहकर अपने पतियों की ओर क्रोध से कटाक्ष करके देखा। उन कटाक्षों को देखकर सब पांडव जो क्रोध में भरे हुए थे क्रोध से महा दीप्त हो गये। उनको इतना दुःख हुआ कि ऐसा राज्य और सब खज़ाने के जाने पर भी नहीं हुआ था। दुःशासन ने द्रौपदी को अपने पतियों की ओर देखते हुए देखकर उसके बाल पकड़ कर उसे हिलाया और बड़े शब्द से हँसकर कहा—अरे दासी! अरे दासी! यह देखकर कर्ण ने भी हँसकर उस बात को माना और सुबल के पुत्र राजा कंधार ने दुःशासन की बड़ाई की, उस समय कर्ण दुर्योधन और दुःशासन को छोड़कर जितने सभा में बैठे हुए मनुष्य थे, सबको बड़ा दुःख हुआ। उस समय भीष्मजी द्रौपदी से बोले—हे सुन्दरी! यद्यपि निर्द्धनी दूसरे के धन को जुए में दावँ पर नहीं लगा सकता, परंतु स्त्री को अपने पति के वश में समझकर धर्म की सूक्ष्मता को विचारकर मैं तेरे प्रश्न का ठीक ठीक उत्तर नहीं दे सकता हूं। हाँ, युधिष्ठिर ने यह तो सबके सामने कहा था कि पहिले मैं जीता गया हूं परन्तु युधिष्ठिर चाहे सब पृथ्वी छोड़ दे परन्तु धर्म को नहीं छोड़ेगा इससे मैं तेरे प्रश्न का क्या उत्तर दूं? यह शकुनि जुआ खेलने में अपने समान दूसरा नहीं रखता है। युधिष्ठिर ने तुझे दावँ पर इसी की प्रेरणा से लगाया था, परन्तु यह कहता है कि तू छल से दावँ पर नहीं लगाई गई, इससे मैं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तेरे प्रश्न का यथोचित उत्तर नहीं दे सकता हूं, यह सुनकर द्रौपदी बोली—इस राजा ने, जो जुआ खेलना नहीं जानता है, दूसरों की प्रेरणा से जुआ खेलकर इन नीच दुष्टात्मा और जुआ खेलने को अच्छा जाननेवाले ज्वारियों के कहने से मुझे क्यों सभा में बुलवाया है? और युधिष्ठिर जो सब पांडव और कौरवों में श्रेष्ठ हैं, इन नीच और छल से खेलनेवाले ज्वारियों से जुआ खेलकर अपने को हारने पर मुझे क्योंकर हारकर इनको दे सकते हैं। ४१-५०। सो मैं इन सब कौरवों से जो सब पुत्र और पुत्रों की स्त्रियों के स्वामी हैं अपने उक्त प्रश्न का उत्तर पूछती हूं, सब जने इसको विचारकर ठीक ठीक कहें। वैशंपायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! उस समय उस दीन वचन कहती रोती और अपने पतियों की ओर देखती हुई द्रौपदी से दुःशासन ने बहुत परुष और कठोर वचन कहे, और भीमसेन ने द्रौपदी को जो दुःख के योग्य न थी और जिसका उत्तरीय वस्त्र गिर पड़ा था, खेंची हुई देखकर युधिष्ठिर पर क्रोध किया। ५१-५३।

अरसठवाँ अध्याय

भीमसेन का युधिष्ठिर पर कोप करना और दुःशासन का द्रौपदी को सभा में ले जाना, द्रौपदी का सभा में अपने जीते जाने अथवा न जीते जाने का प्रश्न करना, उसका उत्तर न मिलना, और दुःशासन का द्रौपदी को नंगा करने को उसका वस्त्र खींचना, उस समय द्रौपदी का कृष्णचन्द्र को याद करना, और कृष्णचन्द्र का वहाँ गुप्त आना, और द्रौपदी की लज्जा रखना।

भीमसेन बोला—हे युधिष्ठिर! ज्वारियों के घर में जो कोई दासी भी होती है तो उसपर भी दया करके उसको जुए में दावँ पर नहीं लगाते हैं। राजा काशी आदि ने जो जो धन, रत्न और द्रव्य भेंट किये थे, उनको और सब वाहन, शस्त्र, राज्य और हम सब और अपने आपको जिनको इन छलियों ने छल से आपसे जीत लिया है, जुए में

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दावँ पर लगाते हुए देखकर मुझको क्रोध नहीं हुआ क्योंकि आप इन सबके ईश हैं परन्तु आपने जो द्रौपदी को दावँ पर लगाया, यह बड़ा मर्यादा के विपरीत काम किया। यह द्रौपदी जो दुःख के योग्य नहीं है, पाण्डवों से विवाहे जाने पर आपके कारण से इतना क्लेश पा रही है। इस कारण से मैं अब तुम पर क्रोध करता हूँ और तुम्हारी दोनों भुजाओं को अग्नि में जलाऊँगा। हे सहदेव! उठ और अग्नि ले आ। यह सुनकर अर्जुन बोला—हे भीमसेन! तुमने ऐसी बात जैसी अब कही है कभी नहीं कही थी। हम जानते हैं कि इन निर्दयी शत्रुओं ने तुम्हारे धर्म और गौरव को बिगार डाला है, तुमको धर्म पर रहना उचित है, भला ऐसा कौन होगा जो धर्मात्मा और शीलवान् बड़े भाई को छोड़कर जैसा मन में आवे वैसा करे, और जो शत्रु के बुलाने पर राजा ने क्षत्रियों का धर्म विचार कर यह जुआ खेला है, वह भी कीर्ति का करनेवाला है। भीमसेन बोला—हे अर्जुन! तू सच कहता है, जो मैं इस प्रकार का धर्म न समझता होता तो इन की दोनों बाहों को अवश्य अग्नि में जला देता। १-१०।

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! इसके पीछे विकर्ण नामी धृतराष्ट्र का पुत्र पाण्डवों को दुःखी और द्रौपदी को क्लिश्यमान देखकर कहने लगा—हे राजा लोगो! जिस बात को द्रौपदी पूछती है, उसको विचार कर स्पष्ट कहो, नहीं तो वचन के विवेक न करने से नरकगामी होगे। हमारे कुल में जो वृद्ध लोग भीष्मपितामह, धृतराष्ट्र और विदुर जी हैं उन्होंने और हम सबके गुरु द्रोणाचार्य और कृपाचार्य ने कुछ उत्तर नहीं दिया इससे आप सब राजा लोग जो प्रत्येक दिशा से आकर यहां इकट्ठे हुए हैं, काम और क्रोध को छोड़कर अपनी-अपनी बुद्धि से विचार कर जैसा उचित हो वैसा उत्तर दीजिए। देखिए, इस द्रौपदी ने आपसे बारम्बार इस प्रश्न को किया है, सो आपको विचार-कर उसका उत्तर ही देना उचित है। इस प्रकार से विकर्ण ने बहुत सी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बातें उन राजाओं से कहीं, परन्तु किसी ने कुछ बुरा भला जवाब नहीं दिया। तब विकर्ण श्वास ले लेकर और हाथ मल मलकर कहने लगा—हे राजाओ! तुम लोग स्पष्ट कहो चाहे मत कहो, मेरी समझ में जैसा कुछ उत्तर आता है वह मैं कहता हूँ। राजा के व्यसन अर्थात् शौक चार हैं, मृगया अर्थात् १ शिकार खेलना, २ मद्यपान, ३ पाँसों का खेल, और ४ स्त्रीभोग। ११-२०। इन चारों कर्मों में राजा सदैव धर्म मार्ग को छोड़कर बर्ताव करता है और इन कर्मों में लिप्त होने पर जो कुछ काम राजा करता है, उसको कोई नहीं मानता है। इस खेल में युधिष्ठिर को ज्वारियों ने खेलने को बुलाया था, अपने आप युधिष्ठिर खेलने नहीं आया और जिस समय युधिष्ठिर खेल में सर्वस्व हारकर अपने आपको भी भाइयों सहित हार गया उस समय उस जुए की आग में इसने शकुनि आदि और खिलाड़ियों की प्रेरणा से द्रौपदी को जो साधारण मात्र पाँचों पांडवों की पत्नी है, दावँ पर लगा दिया इससे मेरे विचार में द्रौपदी नहीं जीती गई। यह सुनकर सभा में बैठे हुए मनुष्य विकर्ण की प्रशंसा और शकुनि की निन्दाकर करके बड़ा शब्द करने लगे। जब वह शब्द बन्द होगया तब कर्ण क्रोधित होकर विकर्ण की बाँह पकड़कर कहने लगा—हे विकर्ण! तू बड़ी विपरीत बात कहता है, हम जानते हैं कि जैसे अरणी काष्ठ से अग्नि उत्पन्न होकर उसी काष्ठ को जला देती है, उसी प्रकार से तू भी जिस कुल में उत्पन्न हुआ है उसी को नाश करना चाहता है। देखिए, सब बड़े-बड़े लोग यहाँ बैठे हुए हैं वे सब द्रौपदी को जीती हुई मानकर उसके बार बार पूछने पर भी कुछ नहीं कहते हैं पर तू अज्ञान बालक होकर क्यों निकला पड़ता है और वृद्धों की तरह बोलता है। तेरा यह कहना कि द्रौपदी जीती नहीं गई है केवल तेरे धर्म न जानने का कारण है। २१-३०।

भला हमें भी तो बता कि तू द्रौपदी को बिना जीती क्योंकर समझता है? इस पांडव युधिष्ठिर ने सब सभा के सामने सब धन दावँ पर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लगा दिया, क्या द्रौपदी सब धन में नहीं है? जो तू उसको विना जीती हुई कहता है। जब पांडवों ने आपही कह दिया और आज्ञा दे दी फिर कौनसी बात ऐसी रही जिससे तैंने उसको विना जीती समझा, और जो तू इस द्रौपदी को एक वस्त्र पहिरे हुए सभा में लाना अधर्म जानता है तो उसका उत्तर यह है कि देवताओं ने स्त्री का पति एक ही कहा है इससे जो स्त्री एक पति से दूसरा पति भी करती है, वह बंधकी कहलाती है । द्रौपदी तो अनेक पतियों से रमण करती है, इसका सभा में लाना और एक वस्त्र पहिरे हुए होना तो कुछ बात नहीं है। जो इसको नंगा भी किया जावे तो भी कुछ आश्चर्य की बात नहीं है। शकुनि ने इन सब पाण्डव और द्रौपदी को सब धन सहित धर्म से जुए में जीता है, सो हे दुःशासन ! यह विकर्ण तो अज्ञानी है तुम इन पाण्डव और द्रौपदी के वस्त्रों को भी उतार लो, यह सुनकर सब पाण्डवों ने अपने अपने वस्त्र उतार कर अलग रख दिये और सभा में बैठ गये, उसी समय दुःशासन बल से द्रौपदी के वस्त्रों को खैंच कर नंगी करने लगा। ३१-४० । वैशंपायनजी बोले—हे राजा जनमेजय ! उस समय द्रौपदी हरि का स्मरण करके कहने लगी— हे गोविंद ! हे द्वारकावासी ! हे कृष्ण ! हे गोपीजनप्रिय ! हे केशव ! हे नाथ ! हे रमानाथ ! हे व्रजनाथ ! हे आर्त्तिनाशन ! हे जनार्दन ! हे महायोगी ! हे विश्व के अंतर्यामी ! हे विश्वकर्त्ता ! क्या तुम मेरे इस दुःख को नहीं जानते हो, मैं तुम्हारी शरण हूं, मेरी रक्षा कीजिए और इस कौरवरूपी समुद्र में डूबती हुई को बाहर निकालिए। हे जनमेजय ! द्रौपदी इस प्रकार से कृष्णचन्द्र का स्मरण कर करके अपना मुख ढाँपकर बड़े दुःख से विलाप करने लगी।४१-४४। उसकी आरत-वाणी को सुनकर श्रीकृष्णचन्द्र गद्गद हो गये और अपनी कमला-सन शय्या को छोड़कर तुरन्त द्वारका से द्रौपदी के पास आन पहुँचे। ४५ । जब उसका धर्मरूपी वस्त्र जिसको वह पहिरे हुए थी गिर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पड़ा तब उसी समय कृष्णचन्द्र ने उसको नाना प्रकार के उत्तम वस्त्रों से ढक दिया। ४६। ज्यों-ज्यों दुःशासन उसके वस्त्र को खींचता जाता था, त्यों त्यों श्वेत, काले, पीले अनेक रंगों के वस्त्र निकलते आते थे। यहाँ तक कि द्रौपदी के धर्म के कारण सैकड़ों वस्त्र प्रकट हो गये। उस समय चारों ओर से बड़ा हलहला शब्द होने लगा और सब राजा लोग दुर्योधन की निन्दा कर करके द्रौपदी की प्रशंसा करने लगे, और भीमसेन ने अपने हाथ से हाथ मलकर सब राजाओं के बीच में यह सौगंद खाई और कहा—मैं सब राजाओं को सुनाकर प्रतिज्ञा करता हूं कि युद्ध में मैं इस नीच और पापी दुःशासन के हृदय को फोड़कर इसका लोहू पीऊंगा आजतक ऐसी प्रतिज्ञा न किसीने की है, न कोई करेगा, परन्तु जो मैं इस अपनी प्रतिज्ञा को सत्य न करूं तो मुझको मेरे पहिले पुरुषाओं की गति न मिले। ४७-५३।

वैशंपायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! भीमसेन की भयानक प्रतिज्ञा को सुनकर सब राजा लोग उसकी प्रशंसा करके दुर्योधन की निन्दा करने लगे। इसके पीछे जब वस्त्रों का ढेर छकड़े के अनुमान का हो गया तब दुःशासन वस्त्र खींचते-खींचते थककर बैठ गया, और सभा में बैठे हुए राजा लोग पांडवों की गति को देखकर धिक्कार दे-देकर बड़ा शब्द करने लगे कि जिसके सुनने से रोम खड़े हो गये। ५४-५६। इसके पीछे सुजन मनुष्यों ने धृतराष्ट्र की निन्दा करके पुकारकर कहा—बड़े दुःख की बात है कि द्रौपदी के प्रश्न का उत्तर अभीतक कौरवों ने स्पष्ट नहीं दिया, और विदुरजी ने सब सभावालों को जो एक-एक दो-दो करके चलने लगे थे, रोककर दोनों हाथ उठाकर पुकार-कर कहा—देखो, द्रौपदी अपना प्रश्न करके अनाथ की तरह रो रही है सो तुम्हारे स्पष्ट उत्तर न देने के कारण से धर्म पीड़ा पा रहा है। जो मनुष्य दुःखी और पीड़ावान् होता है, वह सभा में आता है और सभा के मनुष्य अपने सत्य और धर्म से उसके दुःख को दूर किया करते

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हैं। ५७-६०। इससे मेरी प्रार्थना है कि इस सभा के श्रेष्ठ मनुष्य इस धर्मरूपी प्रश्न का उत्तर काम क्रोध और बलको छोड़कर सत्य-सत्य देवें। जैसे विकर्ण ने अपनी बुद्धि के अनुसार उत्तर दिया है इसी प्रकार से आप लोग भी अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार इसका उत्तर दीजिए। ६१ ६२।

जो सभा में बैठनेवाले धर्मदर्शी मनुष्य किसी प्रश्न का स्पष्ट उत्तर नहीं देते हैं उनको झूठ बोलने का पाप लगता है, और जो मनुष्य धर्मदर्शी होकर सभा में बैठकर धर्मविपरीत बात कहता है उसको मिथ्या बोलने का पूरा-पूरा पाप लगता है। देखो, हम अब तुमको अंगिरावंशी सुधन्वा मुनि और प्रह्लाद का संवाद जो इस समय के योग्य है सुनाते हैं। प्रह्लाद नामी एक दैत्यों का राजा था, उसका विरोचन नामी एक पुत्र था; एक समय वह अंगिरावंशी सुधन्वा मुनि के पास उनकी कन्या को माँगने गया, उस समय केशिनी नाम कन्या ने उन दोनों अर्थात् सुधन्वा और विरोचन से पूछा—तुम दोनों में से कौन श्रेष्ठ है, वे दोनों अपने-अपने को श्रेष्ठ बताने लगे और दोनों ने प्रण किया कि जो हार जावे अर्थात् जो एक की अपेक्षा में दूसरा श्रेष्ठ न ठहरे वह दूसरे को मार डाले तब वे दोनों विवाद करते हुए प्रह्लाद के पास गये और उससे पूछा कि आप सच सच कहिए कि हम दोनों में से कौन श्रेष्ठ है। यह सुनकर प्रह्लाद डरकर सुधन्वा को देखने लगा तब सुधन्वा ने क्रोधित होकर कहा—जो तू झूठ बोलेगा अथवा प्रश्न का उत्तर न देगा तो इन्द्र अपने वज्र से तेरे शिर के सौ टुकड़े करेगा। ६३-७०। यह सुनकर प्रह्लाद डरके मारे इस प्रकार से काँपने लगा जैसे हवासे पीपल का पत्ता हिलता है, और कश्यपजी के पास जाकर पूछने लगा—महाराज, आप इस लोक में देवता असुर और ब्राह्मण सब के कर्मों को जानते हैं इससे इस धर्मसंकट में मुझे यह बताइए। जो मनुष्य प्रश्न का उत्तर न दे अथवा देवे भी तो विपरीत उत्तर दे तो

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उसकी कैसी गति होती है। कश्यपजी बोले—जो कोई जान बूझकर प्रश्न का उत्तर स्पष्ट नहीं देता है उसकी आत्मा वरुण की सहस्र पाशों से बाँधी जाती है, और जो साची होकर दोनों ओर मिलकर ठीक-ठीक नहीं कहता है उसकी भी यही गति होती है। जब एक वर्ष हो जाता है तब उसकी एक पाश छूटती है। इसी प्रकार सहस्र वर्षों में वह उन पाशों से छूटता है। इससे जो सत्यवादी हैं सो सत्य ही सदैव कह देते हैं। जिस सभा में धर्म की बात को अधर्म की बातों से और की और कह देते हैं उस सभा के बैठनेवाले धर्म को दूर करने के कारण पाप के भागी होते हैं, और बुरे को बुरा न कहने के कारण आधा पाप सभापति को, चौथाई पाप करनेवाले को, और चौथाई सभा में बैठने-वालों को लगता है। जिस सभा में बुरे को बुरा कहकर निन्दा करते हैं उस सभा के बैठनेवाले पाप से छूट जाते हैं और वह पाप केवल करनेवाले ही को लगता है। सो हे प्रह्लाद, जो मनुष्य पूछेजाने पर धर्म के विपरीत बात कहता है उसकी अगली और पिछली सात-सात पीढ़ी और सब किये हुए शुभ कर्म नष्ट हो जाते हैं। ७१-८०।

देवतालोग इन नीचे लिखे हुए दुःखों को एकसा ही जानते हैं। अर्थात् जिसका धन जाता रहता है, जिसका पुत्र मर गया है, जो ऋणी है, जिसका काम बिगड़ गया है, जिस स्त्री का पति मर गया है, जिसको राजा ने ग्रस्त अर्थात् गिरफ़्तार किया है, जिस स्त्री के पुत्र नहीं है, जिसको व्याघ्र ने घेर लिया है, जिस स्त्री के सौत है और जिसको साची ने मारा है। ८१-८३। सो जो मनुष्य झूठ बोलता है उसको ये ऊपर लिखे हुए सम्पूर्ण दुःख प्राप्त होते हैं, और साची अर्थात् गवाह दो प्रकार के होते हैं। एक तो आँख के देखनेवाले, दूसरे कान से सुनने-वाले। इस कारण से साची को सदैव सत्य ही बोलना चाहिए। सत्य बोलने से उसका धर्म और अर्थ नहीं बिगड़ता है। कश्यपजी की उक्त बात को सुनकर प्रह्लाद ने अपने पुत्र विरोचन से कहा—सुधन्वा तुझसे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

श्रेष्ठ है और सुधन्वा का पिता अंगिरा ऋषि और उसकी माता मुझसे और तेरी माता से श्रेष्ठ है, इसलिए सुधन्वा अब तेरे प्राणों का स्वामी है। यह सुनकर सुधन्वा बोला—हे प्रह्लाद तुमने पुत्रके स्नेह को छोड़कर धर्म से सत्य को नहीं छोड़ा, इससे अब मैं आशिष देता हूं कि तेरा यह पुत्र सौ वर्षतक जिये, मैं हारने के कारण से इसको नहीं मारूंगा। विदुरजी बोले—हे राजाओ! इसी प्रकार से तुम सब भी धर्म के अनुसार द्रौपदी के प्रश्न का ठीक-ठीक उत्तर दो। ८४-८८।

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! विदुरजी की बात को सुनकर किसी ने कुछ उत्तर नहीं दिया। परंतु कर्ण ने दुःशासन से कहा—इस द्रौपदी दासी को घर ले जाओ। यह सुनकर दुःशासन उस कंपित लज्जित और विलाप करती हुई द्रौपदी को खींचकर लेजाने लगा। ८९-९०।

उनहत्तरवाँ अध्याय

द्रौपदी का विलाप करना, और कहना कि मेरे प्रश्न का उत्तर मिले और भीष्मजी का यह कहना कि जो उत्तर युधिष्ठिर देवें वही प्रमाण है

द्रौपदी उस समय बोली—अरे दुष्ट दुःशासन! जबतक मेरे प्रश्न का उत्तर न मिले तबतक दया कर। मैं इन कौरवों की सभा में दुःशासन से अत्यन्त विह्वल और दुःखी हो रही हूँ। कौरवों को मैं नमस्कार करती हूँ, मेरा अपराध क्षमा हो, मैंने पहिले नमस्कार नहीं की थी। पृथ्वी पर पड़ी हुई वह द्रौपदी जो दुःख के योग्य न थी विलाप करने लगी, और कहने लगी कि मुझको केवल स्वयंवर में ही राजा लोगों ने देखा था, उसके पहले और पीछे किसी ने भी किसी स्थानपर नहीं देखा, सो अब मैं सभा में पड़ी हुई हूँ। हाय! मुझको कभी सूर्य और वायु ने भी घरमें नहीं देखा था, अब मुझको सभा में सैकड़ों मनुष्य देख रहे हैं। मुझे वायु भी स्पर्श करता थी तो ये पांडव नहीं सह सकते थे। हाय! अब वे ही पाण्डव इस दुरात्मा के हाथ से मेरी ऐसी गति देख

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

रहे हैं। हाय ! मैं इन कौरवों की पुत्रवधू और इस दुःख को सहने के योग्य नहीं हूँ सो ये कौरव भी काल की विपरीतता से मेरी यह गति अपनी आँखों से देख रहे हैं। इससे और क्या बुरी बात होगी कि इस सभा में मुझको चारों ओर से सब मनुष्य देख रहे हैं। हाय ! इन राजाओं का धर्म कहाँ गया ! पहले धर्मात्मा लोग स्त्री को सभा में कभी नहीं लाते थे। हाय ! कौरवों का सनातन धर्म नष्ट होगया है। मैं पांडवों की पटरानी, धृष्टद्युम्न की बहिन और कृष्णकी सखी होने के कारण से सभा में आने के योग्य नहीं हूँ, सो हे कौरवो ! अब यह कौरवों के यश को दूर करनेवाला दुष्ट दुःशासन मुझको बड़ा क्लेश दे रहा है, मैं उस क्लेश को अब सह नहीं सकती हूँ। इससे मुझको जीती या मरी हुई जानकर जैसा उचित समझो, दो में से एक बात कह दो, कि मैं दासी हूँ कि अदासी, मैं फिर उसी के अनुसार करूँगी। १-१२।

यह सुनकर भीष्मजी बोले—हे द्रौपदी ! मैं पहले ही कह चुका हूँ कि धर्म की गति बड़ी सूक्ष्म है, उसको महात्मा लोग भी नहीं जानते हैं। १३। इस लोक में बलवान् मनुष्य जिस धर्म को मानता है, वही धर्म है और उस धर्म को मर्याद पर दूसरा चलनेवाला अधर्मी गिना जाता है। १४। इससे मैं तेरे गहन गौरव और सूक्ष्म प्रश्न का उत्तर यथोचित नहीं दे सकता हूं। १५। ये कौरव लोभ और मोह के वश में हो रहे हैं, अब निश्चय इनका नाश होगा और तेरे पति ये सब पाण्डव धर्म के मार्ग से अलग होना नहीं चाहते हैं। हे द्रौपदी ! मैं जानता हूँ कि तुझको यहाँ बड़ा कष्ट हो रहा है परन्तु इस कष्ट पर भी तू अपने धर्म को नहीं छोड़ती है, ऐसा काम सिवाय तेरे और कौन कर सकता है। देख, ये द्रोणाचार्य आदि वृद्ध लोग जो धर्म के जानने-वाले हैं नीचे को मुख किये हुए मुरदे के समान बैठे हुए हैं, कहते कुछ नहीं हैं, इससे हमारी समझ में यह युधिष्ठिर ही कहे कि तू जीती गई है या नहीं। १६-२०।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सत्तरवाँ अध्याय

दुर्योधन का द्रौपदी से अपना प्रश्न पांडवों ही से पूछने को कहना और भीमसेन का क्रोध करके उत्तर देना

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय ! द्रौपदी अत्यन्त विलाप करती रही, परन्तु किसी राजा ने दुर्योधन के भय से कुछ उत्तर नहीं दिया। दुर्योधन उनको चुप देखकर हँसता हुआ द्रौपदी से बोला—तू अपना यह प्रश्न भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव से पूँछ, वही निश्चय करके इसका उत्तर देंगे। जो ये लोग युधिष्ठिर को झूठा ठहराकर यह कह दें कि युधिष्ठिर तेरा स्वामी नहीं है तो तू दासीभाव से छुटा दी जावेगी। अथवा युधिष्ठिर आप ही जो धर्मात्मा और इन्द्र के तुल्य है, इस प्रश्न के उत्तर में कहे कि मैं द्रौपदी का स्वामी हूँ या नहीं इन दोनों बातों में से जिसे चाहे उसे अंगीकार कर, देख तेरे दुःख के कारण ये सब कौरव दुःखी हो रहे हैं और पांडवों का अल्पभाग्य देखकर कुछ नहीं कहते हैं। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय ! दुर्योधन की बात को सुनकर सब सभा के मनुष्य ऊँचे स्वर से दुर्योधन की प्रशंसा करने लगे और प्रसन्न होकर पांडवों की ओर देखने लगे और कहने लगे कि देखो अब युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव क्या उत्तर देते हैं। १-१०।

उस समय राजाओं के चुप होने पर भीमसेन अपनी दोनों भुजाओं को पकड़ कर बोला—हे दुर्योधन ! जो हमारा यह बड़ा भाई युधिष्ठिर हमारे कुल का स्वामी न होता तो हम तेरे इस दोष को कभी क्षमा नहीं करते। हमारे पुण्य तप और प्राणों का यही स्वामी है, जो यह अपने को हारा हुआ माने तो हम सबको भी जीता हुआ समझो। जो मनुष्य इस प्रकार से द्रौपदी के बालों को खींचे और पृथ्वी पर डालकर पैर छुवावे वह मेरे हाथों से जीता हुआ किसी प्रकार से नहीं बच सकता है। देखो, ये मेरी दोनों भुजा लम्बी-चौड़ी परिघ के समान हैं, जो

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

इन्द्र भी इन भुजाओं के बीच में आ जावे तो वह भी नहीं बच सकता है; परन्तु क्या कहूँ मैं अब धर्म के बंधन में पड़ा होने, युधिष्ठिर के गौरव और अर्जुन के रोकने के कारण से इस संकट के पार नहीं हो सकता हूँ। नहीं तो युधिष्ठिर जो आज्ञा दे देवें तो अभी इन धृतराष्ट्र के पुत्रों को इस प्रकार से पीसकर मार डालूँ जैसे सिंह नीच मृग को मार डाले। यह सुनकर भीष्म, द्रोणाचार्य और विदुरजी बोले कि तुम क्षमा करो, तुम इसी योग्य हो। ११-१८।

इकहत्तरवाँ अध्याय

युद्ध में भीमसेन का दुर्योधन की जाँघ तोड़ने का प्रण करना, कौरवों का द्रौपदी के साथ बहुत अनीति करना; उस अनीति से धृतराष्ट्र की सभा के पास उत्पातसूचक गीदड़ों का बोलना, उसको सुनकर धृतराष्ट्र का द्रौपदी को वर देना, और पांडवों का दास भाव से छूटना

कर्ण बोला कि इस सभा में भीष्म, विदुर और द्रोणाचार्य ये तीनों धर्मवान् हैं; क्योंकि ये तीनों अपने स्वामी को बड़ा दुष्ट बताते हैं और पाप करने से नहीं डरते हैं। हे द्रौपदी! शिष्य, अस्वतंत्र स्त्री, दास की स्त्री, और दास का सब धन यह स्वतंत्र नहीं होते हैं इससे तू दुर्योधन के घर में रहकर सब परिवार की सेवा कर, अब पांडव तेरे स्वामी नहीं हैं, ये धृतराष्ट्र के सब पुत्र ही तेरे स्वामी हैं, और इन राज-पुत्रों में से जिसको चाहे उसी को वर ले, जिससे तू दासीभाव से मुक्त हो जावे, क्योंकि जिस दासी के बहुत से पति होते हैं वह दासी निंदित होती है। ये युधिष्ठिर आदि पाँचों पांडव हारकर दास हो गये हैं, तू भी इनकी स्त्री होने से दासी है। इससे ये पांडव अब तेरे स्वामी नहीं रहे। जो ऐसा नहीं होता तो क्या ये पांडव जिन्हों ने तुझको जुए में हार दिया है, पराक्रम और यत्न न करते। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! भीमसेन कर्ण की उक्त बात को सुनकर क्रोध के मारे भयानक स्वरूप हो गया और लाल-लाल आँखें निकालकर धर्म की

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

फाँसी में बँधा हुआ होने के कारण गरम श्वास ले लेकर कहने लगा—हे युधिष्ठिर ! मैं इस सूत के बेटे पर क्रोध नहीं करता हूँ क्योंकि यह सत्य है कि हम दास हो गये हैं परन्तु, जो तुम द्रौपदी को दावँ पर लगाकर जुआ न खेलते तो शत्रु हमसे ऐसे क्यों कहते । वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय ! दुर्योधन भीमसेन की बात को सुन राजा युधिष्ठिर से जो अचेत और चुप बैठा था कहने लगा कि ये चारों भाई अर्थात् भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव तुम्हारे आज्ञाकारी हैं। इसलिए तुम द्रौपदी के प्रश्न का उत्तर दो कि तुम उसको जीती हुई मानते हो या नहीं । १-१० ।

यह कहकर दुर्योधन ने जो ऐश्वर्य के मद से मोहित हो रहा था, कर्ण की ओर इशारा करके और मुसकरा के द्रौपदी को अपनी जाँघ जो केले के खंभ, हाथी की सूँड़ और वज्र के समान गौरवयुक्त थी वस्त्र को हटाकर दिखलाई । यह देखकर भीमसेन ने अपनी लाल-लाल आँखें निकालकर सब राजाओं को सुनाकर कहा जो मैं तेरी इस जाँघ को युद्ध में गदा मारकर न तोड़ डालूँ तो मुझको पितृलोक न मिले। उस समय भीमसेन के कान, नाक आदि अंगों में से क्रोध की अग्नि इस प्रकार निकलने लगी जैसे जलते हुए वृक्ष के कोटर अर्थात् खखालों में से अग्नि निकलती है। इसके पीछे विदुरजी बोले कि हे प्रतीपवंशी राजाओ! अब भी समझो भीमसेन का बड़ा डर है। इन भरतवंशियों की मति तो देवताओं ने पहिले ही हर ली है, जिसके कारण से ऐसी-ऐसी अनीति करते हैं। हे दुर्योधन ! यह जुआ मर्यादा से आगे बढ़ गया, जिसके कारण से तुम स्त्री को सभा में लाकर विवाद कर रहे हो, और कुमंत्र ही करते चले जाते हो, मुझे तुम सब का कल्याण दिखाई नहीं देता है। हे कौरवो ! आप लोगों को इस धर्म को समझना उचित है क्योंकि धर्म को न समझने से सभा को दूषण लगता है। जो युधिष्ठिर अपने को विना हारे द्रौपदी को हार देता तो निस्सन्देह वह उसका

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

स्वामी रहता और ऐसे ज्वारी से धन जीतना जो उस धन का स्वामी नहीं है, स्वप्न में मिले हुए धन के समान है। इससे तुम लोगों को राजा कंधार की सलाह को छोड़कर धर्म से हटना उचित नहीं है। ११-२०। यह सुनकर दुर्योधन बोला कि अच्छा अब मैं इस झगड़े को भीमसेन अर्जुन नकुल और सहदेव के ही ऊपर डाले देता हूँ। ये ही अपने मुख से कह दें कि युधिष्ठिर इसका स्वामी नहीं है, मैं अभी द्रौपदी को दासीभाव से मुक्त कर दूँगा। यह सुनकर अर्जुन बोला कि ये युधिष्ठिर हम सब के स्वामी थे परन्तु तुम लोग इस बात को समझो कि अपने को हारने पर किसी के स्वामी रहे। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! इसके पीछे धृतराष्ट्र के यज्ञ स्थान के निकट गीदड़ बड़े शब्द से रोने लगे कि जिसको सुनकर भयानक पक्षी बोलने और गधे रेंकने लगे। उस शब्द को सुनकर विदुर, भीष्म, द्रोणाचार्य और कृपाचार्य यह कहने लगे कि कल्याण हो! कल्याण हो! और विदुरजी और गांधारी ने धृतराष्ट्र के पास जाकर उस उत्पात को जना दिया। वह सुनतेही कहने लगा—अरे दुर्बुद्धि दुर्योधन! तू बड़ा नीच है जो श्रेष्ठ कुरुवंशियों की सभा में स्त्री से बात करता है और फिर विशेषकर इस धर्मपत्नी द्रौपदी से। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! धृतराष्ट्र दुर्योधन से इस प्रकार से कहकर द्रौपदी के पास आये और शांतिपूर्वक कहने लगे—हे द्रौपदी! तू बहुओं में सब से श्रेष्ठ सती और पतिव्रता है, जो कुछ तेरी इच्छा हो हमसे माँग। यह सुनकर द्रौपदी बोली—जो आप मुझको वरदान देना चाहते हैं तो मेरे पति धर्मात्मा युधिष्ठिर को अदास कर दीजिए और मेरे मनस्वी प्रतिबिंध पुत्र को कोई दासपुत्र न कहे जैसा वह राजाओं से लालित होकर राजपुत्र कहाता था वैसा ही रहे। २१-३१।

धृतराष्ट्र बोले—अच्छा हमने यह वरदान दिया, ऐसा ही होगा परन्तु तू एक ही वरदान के योग्य नहीं है, मैं तुझको और वरदान देना चाहता हूँ, जो इच्छा हो सो माँग। द्रौपदी बोली—अच्छा महाराज!

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव अदास होवें और उनको उनके रथ और धनुष् दे दिये जावें। धृतराष्ट्र बोले कि ऐसा ही होगा। अब तू तीसरा वर मुझसे और माँग। तुझे दो वरदान देने से मेरी तृप्ति नहीं हुई है क्योंकि तू धर्मचारिणी और मेरी सब बहुओं में श्रेष्ठ है। यह सुनकर द्रौपदी बोली कि महाराज! बहुत लोभ करने से धर्म का नाश होता है इससे मैं अब तीसरा वर माँगना नहीं चाहती हूँ। शास्त्र में वैश्य को एक, क्षत्रिय को दो, राजा को तीन, और ब्राह्मणों को सौ वर तक लिखा है सो ये मेरे पति अब दासभाव से छूटकर शुभ कर्म करके बहुत कल्याण पायेंगे। ३२-३७।

बहत्तरवाँ अध्याय

भीमसेन का कर्ण की बात सुनकर क्रोध करना और
युधिष्ठिर का उसके क्रोध को शांत करना

कर्ण बोला कि हमने आजतक जितनी स्वरूपवान् स्त्रियाँ सुनी हैं उनमें से ऐसा कर्म किसी स्त्री का नहीं सुना है। इस द्रौपदी ने पांडव और धृतराष्ट्र के पुत्रों के क्रोध को शांत करके पांडवों को महादुःखरूपी समुद्र में से नौकारूप होकर निकाला है। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! भीमसेन यह बात सुनकर कि पांडवों की गति स्त्री हुई, बड़ा क्रोधित हुआ और दुःखी होकर कहने लगा—हमने देवलऋषि से सुना है कि संतान, शुभकर्म और विद्या ये तीनों लोक का प्रकाश करनेवाली हैं अर्थात् इन्हीं तीनों रूप रखनेवाली ज्योति से प्रजा उत्पन्न होती है, और ये ही तीनों उन मनुष्यों का जिनकी देह अपवित्रता से छूटी है, या जिनको जातिवालों ने छोड़ दिया है, अथवा जो शून्य स्थान में हैं, उपकार करनेवाले हैं। सो वह संतान विना स्त्री के कैसे हो सकती है इस कारण स्त्री ही सबकी परमगति है। हे अर्जुन! सत्य है कि जो मनुष्य परपुरुष की संगति से उत्पन्न होवे, वह ऐसा क्यों न कहे जैसा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कर्ण कहता है। अर्जुन बोला—हे भीमसेन ! जो अच्छे पुरुष होते हैं वे नीच आदमी से बात नहीं करते हैं। चाहे वह कुछ कहे या न कहे। और संतलोग दूसरे के किये हुए उपकार को जानकर सदैव सुकृत ही का स्मरण करते हैं और किये हुए वैर को कभी हृदय में नहीं आने देते हैं। तब भीमसेन बोला कि हे युधिष्ठिर ! यहाँ विवाद वृथा बात करने से क्या लाभ है ? आप आज्ञा दीजिए तो हम बाहर निकल कर इन सब शत्रुओं को मारकर निर्मूल कर दें, फिर आप इस पृथ्वी का शासन अच्छी प्रकार से कीजिएगा। १-१०।

यह कहकर भीमसेन वहाँ भाइयों सहित इस प्रकार से देखने लगा जैसे मृगों में सिंह देखता है। उस समय भीमसेन युधिष्ठिर के शांतस्वरूप को देखकर दुःखित हुआ और क्रोध के कारण उसके कान, नाक आदि मार्गों से ज्वाला निकलने लगी और प्रलयकाल के रुद्र स्वरूप के सदृश उसका मुख भौं आदि के चढ़ाने से ऐसा भयानक हो गया कि उसके सम्मुख मनुष्य नहीं देख सकता था। तब युधिष्ठिर ने उसके ऐसे स्वरूप को देखकर हाथ पकड़कर कहा कि भाई ऐसा मत कहो, चुपके होकर बैठो। इसके पीछे युधिष्ठिर अपने दोनों हाथ जोड़कर धृतराष्ट्र के सम्मुख खड़ा हो गया और कहने लगा। ११-१७।

तिहत्तरवाँ अध्याय

धृतराष्ट्र का युधिष्ठिर को शिक्षा करना और युधिष्ठिर का इन्द्रप्रस्थ को विदा होकर जाना

युधिष्ठिर बोला कि महाराज ! मेरे लिये क्या आज्ञा है, मैं आप ही की आज्ञा में रहना चाहता हूँ। यह सुनकर धृतराष्ट्र ने कहा—अब तुम निर्विघ्न, कल्याणपूर्वक अपने घर को जाओ और धनसहित आनन्द से राज्य करो। मुझे वृद्ध जानकर मेरी आज्ञा को हितकारी और कल्याणकारी समझो। तुम धर्म की सूक्ष्मगति को पहिचानते हो,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

ज्ञानी, नम्र और वृद्धों की सेवा करनेवाले हो। बुद्धिमान् मनुष्यों में सदैव क्षमा रहती है इससे तुम भी अब शांत होकर रहो। देखो—शस्त्र, पत्थर आदि कड़ी वस्तुओं पर नहीं चलता है और जो वस्तु नरम होती है उसको काट डालता है। उत्तम मनुष्य वैर को अपने मन में नहीं रखते हैं और न विरोध करते हैं किन्तु गुणों पर ही ध्यान करते हैं। हे युधिष्ठिर! जो मनुष्य संत होते हैं वे दूसरे के वैर को याद करके बदला लेने का उपाय नहीं करते हैं। जो मनुष्य बातचीत करने में खोटा वचन बोलते हैं वे महानीच होते हैं और जो उस खोटे वचन को सुनकर खोटा ही उत्तर देते हैं वे मध्यम पुरुष हैं। परन्तु जो उत्तम और धैर्यवान् मनुष्य होते हैं वे अप्रिय और मर्म छेदनेवाले वचन कह सुनकर विषाद नहीं करते हैं। और जो सन्त लोग हैं वे अपनी आत्मा के समान दूसरे का भला चाहकर सदैव शुभ कर्म करने में मन रखते हैं और जो कोई उनके साथ वैर भी करता है उसको कभी मन पर नहीं लाते हैं। १-१०।

सच है कि साधुलोग चाहे जैसा हो अपनी मर्यादा से बाहर नहीं होते हैं। वैसा ही इस सभा में तुमने भी किया कि अपनी धर्म की मर्यादा से बाहर नहीं हुए। सो हे युधिष्ठिर! तुम अब मुझे वृद्ध अंधे और अपनी माता गांधारी की ओर देखकर इस दुर्योधन के किये हुए कर्म को अपने मन से निकाल दो। यह जुआ मेरी ही प्रेरणा से हुआ था, मुझे पुत्रों का बल अबल और मित्रों को देखना था। तुम कौरवों के राजा हो तुमको किसी बात का शोच करना उचित नहीं है। निस्सन्देह हमारे मंत्री विदुरजी बड़े पण्डित और बुद्धिमान् हैं और तुम धर्मात्मा अर्जुन धैर्यवान्, भीमसेन पराक्रमी और नकुल सहदेव बड़ों की शुश्रूषा करनेवाले हैं, ईश्वर करे तुम्हारा कल्याण हो! तुम्हारी बुद्धि धर्म में रहे, और दुर्योधन आदि भाइयों से तुम्हारी प्रीति रहे, अब तुम खांडवप्रस्थ को जाओ। वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय!

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उक्त बातों को सुनकर युधिष्ठिर ने सब बातों के करने के लिये प्रतिज्ञा की और वहाँ से भाई और द्रौपदीसहित इन्द्रप्रस्थ को रथों में सवार हो होकर चल दिये। ११-१८।

चौहत्तरवाँ अध्याय

दुर्योधन का धृतराष्ट्र से अनेक कारण कहकर पांडवों को फिर जुआ खेलने के लिये बुलवाना

उक्त कथा को सुनकर राजा जनमेजय ने वैशम्पायनजी से पूछा कि महाराज, जब धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को सब रत्न देकर चले जाने की आज्ञा दे दी, तब धृतराष्ट्र के पुत्रों के मन की कैसी गति हुई। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! दुःशासन पाण्डवों को धन-सहित जाने की आज्ञा दिया हुआ जानकर महादुःखी हुआ और अपने भाई दुर्योधन के पास जो उसे श्रेष्ठ जानता था, जाकर कहने लगा—देखो भाई, किस दुःख से तो शत्रु को वश में करके हमने धन लिया था, परन्तु इस बुड्ढे ने सब किया कराया व्यर्थ कर दिया। यह सुनकर दुर्योधन, शकुनि और कर्ण तीनों पाण्डवों से बदला लेने के लिये धृतराष्ट्र के पास जल्दी से पहुँचे और स्नेहसहित कहने लगे।

पहिले दुर्योधन बोला—हे पिता! आपने जो शुक्र की कही हुई नीति बृहस्पतिजी ने देवताओं से कही थी, वह नहीं सुनी है। मनुष्य को चाहिए कि अपने अहितकारी शत्रु को युद्ध और पराक्रम करने के पहिले ही जिस उपाय से हो सके मार डाले। हमारी इच्छा थी कि हम पाण्डवों के धन से सब राजाओं को अपने वश में कर लें। ऐसा करने पर जो पाण्डवों से हमसे युद्ध भी होता, तो हमारी कुछ हानि नहीं थी। भला ऐसा कौन मनुष्य होगा जो विषधारी साँपों को अपने आपको नाश करने के लिये अपने कंधों और पीठ पर छोड़ेगा। १-१०। सो हे पिता! पाण्डव भी साँपों के समान क्रोधित हो रहे हैं जिस

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

समय रथों में चढ़कर शस्त्र लिये हुए आवेंगे उसी समय सबको मारकर एक को न छोड़ेंगे। देखो, अर्जुन चलते समय रथ में बैठकर तरकसों को बाँधकर बार-बार गाण्डीव धनुष को उठाता था और चारों ओर श्वास ले लेकर देखता था, और भीमसेन भी अपनी भारी गदा को उठाकर रथ को जोतकर जल्दी से चल दिया। नकुल ने भी अपनी ढाल और तलवार ले ली और सहदेव और युधिष्ठिर यों ही गये हैं। उनकी चेष्टा से ऐसा जाना जाता है कि वे रथों को दौड़ाते हुए सेना लेने को गये हैं, सेना लाकर अवश्य उत्पात करेंगे; क्योंकि हमने उनके साथ जो-जो उत्पात किये हैं और द्रौपदी को जो-जो क्लेश दिये हैं, उनको वे कभी न सह सकेंगे। इससे मैं चाहता हूँ कि आप फिर उनको लौटाकर जुआ कराइए। अब के हम उनसे यह प्रण अर्थात् दावँ बदेंगे कि जो पाँसा डालकर जीते, वह दोनों का राज्य करे, और हारनेवाला मृगछाला ओढ़कर बारह वर्ष तक वन में वास करे, और तेरहवें वर्ष में गुप्त रहे। यदि उस तेरहवें वर्ष में कोई उसको यह जान ले कि यह फलाने हैं तो वह फिर बारह वर्ष तक वन में बसे। ऐसा करने से हम पाण्डवों को अपने वश में कर सकेंगे; क्योंकि यह शकुनि पाँसों की विद्या को अच्छी तरह से जानता है और जो पाण्डव तेरह वर्ष का व्रत पूरा भी कर आवेंगे, तो उतने काल में हम सब मित्रों को वश में करके और बहुत सी सेना को आदर सहित इकट्ठी करके हाथों हाथ उनको युद्ध में जीत लेंगे। इससे हे पिता! आपको हमारा उक्त कहा करना उचित है। यह सुनकर धृतराष्ट्र बोला कि अभी जाकर पाण्डवों को जो दूर भी निकल गये हों तो भी शीघ्र लिवा लाओ जिसमें वे आकर फिर उक्त दावँ बदकर जुआ खेलें। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! इसके पीछे द्रोणाचार्य, सोमदत्त, वाह्लीक, कृपाचार्य, विदुर, अश्वत्थामा, युयुत्सु, भूरिश्रवा, भीष्मपितामह और विकर्ण ने पृथक्-पृथक् कहा कि अब जुआ होना उचित नहीं है; परन्तु धृतराष्ट्र ने उनके कहने पर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

ध्यान न देकर अपने बड़े पुत्र का प्रिय करने के लिये उन पाण्डवों को फिर बुलवाया जो जुआ खेलना नहीं चाहते थे। ११-२७।

पचहत्तरवाँ अध्याय

गांधारी का धृतराष्ट्र को समझाकर दुर्योधन को त्यागने का उपदेश करना और कहना न मानकर धृतराष्ट्र का पांडवों को फिर जुआ खेलने को बुलवाना

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय ! इसके पीछे गांधारी पुत्र के स्नेह से धृतराष्ट्र के पास आई और शोकयुक्त होकर धर्म के अनुसार कहने लगी कि आपको वह बात अब समझना चाहिए जो विदुरजी ने दुर्योधन के जन्म लेने के समय कही थी कि इस कुलकलंकी को त्याग कर दो; क्योंकि इसने उत्पन्न होते ही गीदड़ के रोने का सा शब्द किया था। मुझे दीखता है कि अब कुल का नाश होनेवाला है, आप तो बूढ़े, बड़े हैं, आप क्यों इन बालकों की बातों में आकर गहरे पानी में डूबते हैं। १-४। आपको इस कुल के नाश होने का कारण बनकर बँधे हुए पुल को गिराना और बुझी हुई अग्नि को जलाना उचित नहीं है। भला ऐसा कौन काल का मारा होगा जो शांत हुए पांडवों को फिर कोपित करके अपना नाश कराना चाहे। आप वृद्ध हैं, आपको बालकों की सी बुद्धि करना उचित नहीं है। हाँ, जो दुर्बुद्धि हो उसको तो अलबत्ता शास्त्र का देखना भी गुणकारक नहीं हो सकता है। इससे आप मेरे कहने से इस कुल के नाश करनेवाले दुर्योधन को त्याग दीजिए। ५-८। आपने पुत्र के स्नेह से पहिले इसको नहीं त्यागा था सो अब उसका फल आ पहुँचा है। आप तो धर्मात्मा, ब्रह्मज्ञानी और शमपरायण हैं। आप अपनी बुद्धि को असावधान न कीजिए। जो मनुष्य क्रूर होते हैं, उनके घर की लक्ष्मी शीघ्र नष्ट हो जाती है और शीलवान् पुरुषों के घर में लक्ष्मी दिन दिन बढ़कर बेटे पोते तक को मिलती है। यह सुनकर धृतराष्ट्र बोला—जो इस कुल का

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नाश ही होनेवाला है तो मैं उसको नहीं रोक सकता हूँ। जो तू कहती है वह सब हो; परन्तु पाण्डव यहाँ आकर हमारे पुत्रों से जुआ खेलें। ६-१२।

छिहत्तरवाँ अध्याय

धृतराष्ट्र की आज्ञा से युधिष्ठिर का शकुनि से फिर जुआ खेलना और सम्पूर्ण राज्य आदि हार जाना

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! इसके पीछे प्रातिकामी धृतराष्ट्र की आज्ञा से पांडवों के पास जो दूर निकल गये थे पहुँचा और कहने लगा—आपको धृतराष्ट्र ने बुलाया है और यह कहा है कि सभा में चौपड़ बिछ रही है, यहाँ आकर पाँसे फेंककर जुआ खेलो। यह सुनकर युधिष्ठिर बोला—मनुष्य को बुरी और भली दोनों प्रकार की गति ईश्वर ही की इच्छा से मिलती है, उसको कोई मनुष्य दूर नहीं कर सकता है। इससे यद्यपि मैं जानता हूँ कि जुआ खेलने में क्षय के सिवा कोई लाभ नहीं है; परन्तु मैं वृद्ध धृतराष्ट्र की आज्ञा को उल्लंघन न कर सकने के कारण से जुआ खेलूँगा। १-४। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! जब विपत्ति मनुष्य के निकट आ जाती है तब उसकी बुद्धि भी विपरीत हो जाती है। देखो—सुनहरे हरिण का होना असम्भव होने पर भी रामचन्द्र का मन लोभित हो गया था। पांडव उक्त रीति से कहते हुए और शकुनि के छल को विचारते हुए जुआ खेलने को फिर लौट पड़े। हस्तिनापुर में आकर सभा में दैव की प्रेरणा से सब संसार का नाश करने के लिये फिर जुआ खेलने को बैठ गये। उनको देख-देख कर सब लोग बहुत दुःखी हुए। बैठ जाने पर शकुनि बोला—जो धन वृद्ध ने छोड़ दिया है उसका हम तुमसे एक दावँ बदकर खेलना चाहते हैं। वह यह है कि एक ओर तो दोनों का राज्य और सब धन, घोड़ा, हाथी, बैल, बकरी आदि रख दिया

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जावे और दूसरी ओर बारह वर्ष का वनवास, और तेरहवें वर्ष में गुप्त रहना, इस नियम से कि उस तेरहवें वर्ष में जो कोई बराबरवाला मनुष्य यह जान लेवे कि ये फलाने हैं तो फिर वह बारह वर्ष तक वन में वास करे, सो हम तुममें से जो जीते सो दोनों ओर का राज्य करे, और हारनेवाला हमारे में से हो चाहे तुम, मृगचर्म ओढ़कर उक्त रीति से वन में वास करे, हे युधिष्ठिर! आओ उक्त दावँ बदकर हमसे जुआ खेलो। ५-१५।

यह सुनकर सब सभा के मनुष्य ऊपर को हाथ उठा-उठाकर कहने लगे—हे धृतराष्ट्र! इन बान्धवों को धिक्कार है, कोई इस काम से उत्पन्न होनेवाले भय को न जानकर नहीं समझता है। युधिष्ठिर उन मनुष्यों की बात को सुनकर धर्म और लोकलाज के वश में होकर कौरवों का नाश होना निकट जानकर जुआ खेलने की इच्छा करके कहने लगा—मुझसा धर्म को पालनेवाला राजा जुआ खेलने को बुलाया हुआ क्योंकर लौट सकता है, अच्छा आओ जुआ खेलें। १६-२०। यह सुनकर शकुनि बोला—आप दावँ को फिर समझ लीजिए कि एक ओर तो हम तुम दोनों का राज्य घोड़ा, हाथी, बैल, बकरी और खजानासहित रक्खा हुआ है, और दूसरी ओर बारह वर्ष का वनवास और तेरहवें वर्ष में गुप्तवास करना है, और जो उस तेरहवें वर्ष कोई बराबरवाला मनुष्य वनवास करनेवाले को जान जाय तो वह फिर बारह वर्ष तक वन में बसे। सो हम तुम दोनों में से जो हार जायगा, वह उक्त रीति से वनवास करेगा और जीतनेवाला दोनों ओर का राज्य करेगा। यह सनकर युधिष्ठिर ने एक बार के ही कहने से उस दावँ को अंगीकार किया और शकुनि पाँसा फेंककर बोला कि मैं जीता। २१-२५।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सतहत्तरवाँ अध्याय

दुःशासन और दुर्योधन का पांडवों की हँसी करना, और पांडवों का दुर्योधन, शकुनि, दुःशासन और कर्ण के वध की प्रतिज्ञा करना, और पांडवों का मृगचर्म ओढ़कर वन को चलना

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय ! पांडवों ने सर्वस्व हारकर वन को जाने के लिये मृगचर्म ले लिये। उस समय उनको राज्यहीन और मृगचर्म लिए हुए वन को जाने के लिये तैयार देखकर दुःशासन कहने लगा—अहा अब दुर्योधन चक्रवर्ती राजा होगया और पांडव सब हारकर विपत्ति में पड़ गये। देवताओं ने सब ओर से हम पर कृपा की, जो आज हम अपने शत्रुओं से गुणों में अधिक और श्रेष्ठ होगये। अब पांडव बहुत दिनों तक नरक भोगेंगे और सुख और राज्य से हीन होकर नष्ट होकर फिरेंगे। १-५। ये ही पांडव थे जिन्होंने धन के मद से धृतराष्ट्र के पुत्रों की हँसी की थी, देखो अब ये धन और सर्वस्व हारकर वन को जाते हैं। ६। अब इनके सुन्दर वस्त्र और कवचों को उतार कर इन्हें मृगछाला ओढ़ने को दे दो, क्योंकि शकुनि से जुये के दावँ में इन्होंने यही प्रण किया था। ७। आज हमारे समान इस संसार में कौन है। ये पांडव जो सदा विचार किया करते रहते थे, अब थोथे तिलों के समान पराक्रमहीन हो गये। ८। इनके ये मृगछाला के वस्त्र यज्ञ में दीक्षित होकर पहनने के नहीं हैं, किन्तु ये मृगचर्म अदीक्षित मनुष्यों केसे हैं। ९। राजा द्रुपद तो बड़ा बुद्धिमान् था, उसने यह काम अच्छा नहीं किया जो द्रौपदी सी सुंदर कन्या को इन नपुंसक पांडवों को ब्याह दिया। १०। हे द्रौपदी ! इन पांडवों के साथ वन में जाकर तुझको क्या सुख मिलेगा। ये बिचारे धन और स्थान से हीन होकर मृगछाला ओढ़े हुए आपही दीन हो रहे हैं, इससे तू हम सब कौरवों में से जो क्षमावान्, जितेन्द्रिय और धनवान् हैं, जिसको चाहे अपना पति कर ले, जिसमें तुझे वन का दुःख न सतावे। ११-१२। अब ये

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पांडव ऐसे हैं जैसे थोथे तिल अथवा चमड़े के बनाये हुए मृग अथवा चावल रहित धान। सो जैसे थोथे तिलों को बटोरने से कुछ लाभ नहीं होता है, इसी प्रकार इन पतित पांडवों की सेवा करने से तुझको कोई सुख नहीं मिलेगा। १३-१४। भीमसेन उस दयाहीन दुःशासन के उक्त परुष वचनों को सुनकर क्रोध से भर गया और उसके पास जाकर उसे इस प्रकार पकड़ कर जैसे सिंह किसी मृग को पकड़ लेवे कहने लगा—अरे दुष्ट! अरे पापी! तू ऐसे निष्फल वचन शकुनि की छल की विद्या से धन जीतकर कहता है और इन वचनरूपी बाणों से हमारे मर्म-स्थानों को छेदे डालता है, क्यों घबराता है, मैं तेरे भी मर्मस्थानों को युद्ध में काट तेरे क्रोधी और लोभी सब सहायकों को मारकर तुझे इन बातों की याद दिलाऊंगा। १५-१८।

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! वह नीच दुःशासन जिसने लज्जा छोड़ दी थी, उस मृगचर्म ओढ़े हुए भीमसेन की उक्त बात को सुनकर तीन बेर गौ गौ कह कहकर नाचने लगा। जिसके कहने से यह प्रयोजन था कि हम तुझे गौ जानकर छोड़े देते हैं। १९। यह सुनकर भीमसेन बोला—अरे दयाहीन! तू क्यों ऐसे परुष वचन बकता है, तू छल से धन को जीतकर बरबरा रहा है, मैं यह सत्य प्रतिज्ञा करता हूं कि युद्ध में मैं तेरी छाती को फाड़कर तेरे लोहू को पीऊँगा, और तेरे सब भाइयों को मारकर अपनी छाती ठंढी करूँगा। जो ऐसा मैं न करूँ तो मुझको जो लोक अच्छे कर्मों के करने से मिलते हैं सो न मिलें। २०-२२। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! इसके पीछे जब पाण्डव वन को चलने लगे तब दुर्योधन खेल की तरह अपनी चाल भीमसेन की सी बनाकर चलने लगा। तब भीमसेन उसको मुख फेरकर नकल बनाते हुए देखकर कहने लगा—चाल बनाने से तू भीम-सेन नहीं हो सकता है, तुझे भाई बेटों सहित मारकर इस बात को याद कराऊंगा और इस तेरी हँसी का उत्तर दूंगा। फिर भीमसेन ने सभा से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

निकलने के समय युधिष्ठिर के पीछे-पीछे चलकर दुर्योधन की हँसी को याद करके और क्रोध को रोककर कहा—मैं तो दुर्योधन को मारूँगा, अर्जुन कर्ण को मारेगा, और इस ज्वारी शकुनि को सहदेव मारेगा। और मैं दूसरी यह प्रतिज्ञा भी करता हूँ—देवता मेरी इस प्रतिज्ञा को युद्ध के आने पर सत्य करें कि मैं दुर्योधन को पृथ्वी पर गिराकर इसके शिर को अपने पावँ से रगड़ूँगा और इस दुरात्मा दुःशासन की छाती को सिंह के समान फाड़कर इसका लोहू पीऊँगा। २३-२९। इसके पीछे अर्जुन ने कहा कि हे भीमसेन! सत्पुरुषों का निश्चय बातों से नहीं जाना जाता है। अब से चौदह वर्ष के पीछे जो कुछ होगा सो होगा। तब भीमसेन बोला कि दुर्योधन, शकुनि, दुःशासन और कर्ण इन चारों दुरात्माओं के लोहू को पृथ्वी पीवेगी। तब अर्जुन ने भीमसेन को प्रसन्न करने की इच्छा से प्रतिज्ञा की कि मैं तुम्हारी आज्ञा से इस नीच और कुबुद्धि कर्ण को और इसके साथी सब राजाओं को जो मेरे सम्मुख आवेंगे मारकर यमलोक में पहुँचाऊँगा। ३०-३४। जो आज से चौदहवें वर्ष में यह नीच दुर्योधन हमारे राज्य को हमें न देगा तो निस्संदेह मैं इन सब बातों को सच करके दिखाऊँगा, चाहे हिमालय पहाड़ चलने लगे, सूर्य की प्रभा जाती रहे. और चन्द्रमा में शीतलता न रहे, परन्तु मैं अपनी प्रतिज्ञा से नहीं डोलूँगा। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! इसके पीछे प्रतापवान् सहदेव क्रोध से लाल-लाल आँखें किये हुए और साँप की तरह श्वास लेता हुआ शकुनि को मारने की इच्छा से अपनी भुजाओं को पकड़ कर कहने लगा—अरे गान्धार देशी मनुष्यों के यश को दूर करनेवाले शकुनि! ये पाँसे जिनके बल तू नाच रहा है पाँसे नहीं हैं किंतु ये तेरे प्राण को नाश करनेवाले तीक्ष्ण बाण हैं। जो तू क्षत्रिय धर्म को छोड़कर युद्ध में भाग न जायगा तो जैसी भीमसेन ने आज्ञा दी है, उसी प्रकार से मैं तुझको तेरे भाई बंधु और साथियों सहित मारूँगा। ३५-४१। इसके

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पीछे सहदेव की प्रतिज्ञा सुनकर नकुल ने कहा—इन धृतराष्ट्र के पुत्रों को जिन्होंने काल से प्रेरित होकर मरने की इच्छा से द्रौपदी को रूखे वचन सुनाये हैं, मैं युधिष्ठिर की आज्ञा से मारकर यमलोक में पहुँचाऊँगा और द्रौपदी को प्रसन्न करने के लिये पृथ्वी पर धृतराष्ट्र के पुत्रों का बीज नाश कर दूँगा। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! इसके पीछे वे लंबी भुजा रखनेवाले पांडव उक्त रीति से प्रतिज्ञा करके धृतराष्ट्र के पास गये। ४२-४६।

अठहत्तरवाँ अध्याय

युधिष्ठिर का भीष्मपितामह आदि सब बड़े बूढ़ों से बिदा माँगकर वन को चलना

युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र की सभा में जाकर कहा कि मैं सब भरतवंशी मनुष्य, भीष्मपितामह, राजा सोमदत्त, राजा वाह्लीक, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, दूसरे राजा, अश्वत्थामा, विदुर, धृतराष्ट्र के सब पुत्र, युयुत्सु, संजय और अन्य मनुष्यों से जो इस सभा में बैठे हुए हैं, जाने की आज्ञा माँगता हूँ और थोड़े दिनों में समय बिताकर फिर आकर आप लोगों को देखूँगा। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! युधिष्ठिर की बात को सुनकर किसी ने कुछ उत्तर नहीं दिया। लज्जा से सब नीचे को मुख किये हुए बैठे रहे, परन्तु उन सबोंने मन में पांडवों को आशीर्वाद दिया। इसके पीछे विदुरजी ने कहा—यह कुंती वृद्ध सुकुमारी और सुख भोगने के योग्य है, वन जाने के योग्य नहीं है, सो उसको यहीं छोड़ जाओ। वह मेरे घर में रहेगी और परमेश्वर तुम्हारा सब तरह कल्याण करे। १-६। यह सुनकर पांडव बोले—आप हमारे चचा और बाप के समान हैं। हम आपकी शरण हैं, जैसा आप कहते हैं वैसा ही होगा। आप हमारे परमगुरु हैं और जो कुछ आप हमको आज्ञा दें सो हम करें। यह सुनकर विदुरजी बोले—हे युधिष्ठिर! जिसको कोई अनीति और अधर्म से जीत लेता है, उसको विपत्ति

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पाकर दुःखी होना उचित नहीं है। ७-६। तुम तो धर्म को सब प्रकार से जानते हो। यह अर्जुन जय करनेवाला, भीमसेन शत्रुओं को मारनेवाला, नकुल अर्थ संग्रह करनेवाला, सहदेव दंड देनेवाला, धौम्य पुरोहित ब्रह्मज्ञानियों में श्रेष्ठ और द्रौपदी धर्मचारिणी है। १०-११। तुम सब आपस में प्रीतिपूर्वक संतुष्ट होकर रहना। शत्रु तुम्हारे बीच में फूट न डालने पावे। तुमको सब चाहते हैं और तुम्हारे इस जत्थे के कारण इन्द्र के समान प्रबल शत्रु भी तुम्हारा कुछ नहीं कर सकता है। १२-१३।

तुमने पहले हिमालय पहाड़ में सावर्ण ऋषि से, वारणावत नगर में व्यासजी से, भृगुतुंग पर्वत पर परशुरामजी से, दृषद्वती नदी पर शिवजी से, अंजन पर्वत पर असित नाम महार्षि से, कल्माष नदी के किनारे भृगुजी से, और सदैव नारदजी से शिक्षा पाई है। और सिवाय इसके धौम्य ऋषि तुम्हारे पुरोहित हैं, इसलिए तुमको अपनी बुद्धि को मलीन करना उचित नहीं है। तुम्हारी बुद्धि ऐलवंशी राजा पुरूरवा से भी अधिक है। १४-१७। तुम्हारी शक्ति से सब राजा जीते जा सकते हैं, और धर्म तुम्हारा ऐसा है कि ऋषिलोग भी वैसा धर्म नहीं कर सकते हैं। सो तुमको अपना मन उस जय में जो इन्द्र और यमराज के अधीन है और कोप करने के नियम में लगाना चाहिए। १८। परमेश्वर करे तुम दान करने में कुबेर के समान और वशीकरण में वरुण के समान हो। जल तुमको सौम्यता, परोपकार और सबका उपजीवन होने के गुण देवे। १६। पृथ्वी क्षमा देवे, सूर्यमंडल से तुमको सब प्रकार का तेज मिले, वायु तुमको पराक्रम देवे और पंचभूत तुमको सब प्रकार की संपत्ति देवें। २०। अब हम तुमको जाने की आज्ञा देते हैं, जाओ तुम्हारा कल्याण होगा। परमेश्वर करे तुम आरोग्य रहो और तुम्हारे सब काम सिद्ध होवें। इस धर्मसंकट की विपत्ति को सहकर जब फिर लौट कर तुम आओगे, तब हम तुमको

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

देखेंगे। २१-२३। वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! युधिष्ठिर उक्त बातों को सुनकर और तथास्तु कहकर भीष्म और द्रोणाचार्य को नमस्कार करके चल दिया। २४।

उन्नासीवाँ अध्याय

द्रौपदी का कुंती से विदा माँगना, कुन्ती का विलाप करना और विदुरजी का कुंती को अपने घर लिवा ले जाना और पांडवों का द्रौपदीसहित वन को जाना

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय! युधिष्ठिर के चलने पर द्रौपदी कुंती आदि जो जो स्त्रियाँ वहाँ पर मौजूद थीं, सबको नमस्कार करके सबसे जाने की आज्ञा माँगी। उस समय पांडवों के महलों में रोने का बड़ा भारी शब्द हुआ, और कुंती द्रौपदी को जाते हुए देखकर शोक से विह्वल होकर बड़े दुःख से कहने लगी। १-३। कि हे पुत्री! तुझे इस विपत्ति को देखकर शोच करना उचित नहीं है, तू स्त्री के धर्म को अच्छी तरह जानती है और सुशीला है। ४। तुझसे पतियों की सेवा आदि धर्म के कहने की भी मुझे कुछ आवश्यकता नहीं है। क्योंकि तू आप पतिव्रता और दोनों कुलों की भूषण है। ५। ये कौरव बड़े भाग्यवान् हैं जो तेरे तेज से जल नहीं मरे। अच्छा अब तू निर्विघ्न होकर जा, मेरे हृदय में से तू कभी नहीं उतरेगी। ६। जो स्त्रियाँ श्रेष्ठ होती हैं, उनका चलन कैसी ही होनहार विपत्ति पड़े नहीं बिगड़ता है। तू अपने धर्म पर चलनेवाली है, इससे तेरा कल्याण बहुत जल्दी होगा। ७। हे सहदेव! वन में तुम इस द्रौपदी की सदैव रक्षा करते रहना। इसको कोई दुःख न होने पावे। ८। यह सुनकर द्रौपदी जो रजस्वला थी और जिसके शिर के बाल खुले हुए थे, यह कहकर कि ऐसा ही होवे, रोती हुई चल दी। ९। उसके पीछे पीछे कुंती भी महादुःखी होकर चली और आगे जाकर उसने अपने पुत्रों को जिनके सब वस्त्र और गहने उतार लिये गये थे देखा। १०। कुंती ने उन सबको मृगछाला

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

ओढ़े हुए और लज्जा से नीचे को शिर झुकाये हुए देखकर सबको छाती से लगाया और महादुःखी होकर विलाप करती हुई कहने लगी—तुमने सदैव दृढ़ भक्ति से देवताओं की पूजा की है और सत्य, धर्म और मर्यादा के विपरीत कभी कोई काम नहीं किया है, तुमको यह दुःख कैसे प्राप्त हुआ, हाय यह विधाता की विपरीत गति है। मैं नहीं जानती हूँ कि किसके शाप से तुमको यह दुःख मिला है। ११-१४। यह मेरे ही भाग्य का दोष है। मैंने तो तुम सबको उत्तम पुरुषों से उत्पन्न किया है। तुम सब पराक्रमी बली, सच्चे और तेजस्वी हो। हाय, तुम सब वन के कठिन-कठिन स्थानों में विना धन के दुर्बल होकर कैसे रहोगे। १५-१६। जो मुझे ऐसा मालूम होता कि तुमको वनवास होगा, तो शतशृंग पर्वत पर से पांडु के मरने पर यहाँ कभी न आती। १७। तुम्हारा पिता जो तपस्वी और बड़ा बुद्धिमान् था, धन्य था, जिसने इन पुत्रों की पीड़ा को नहीं देखा और स्वर्ग में रहना अंगीकार किया। १८। और माद्री भी जो इस धर्म को जाननेवाली, ब्रह्मज्ञानी, कल्याणी और परमगति थी, धन्य है, जो पति के संग मरकर चली गई, मैं भी सब बातों में उसी के समान हूँ, परन्तु मैंने जीकर यह क्लेश पाया, मुझको धिक्कार है। १९-२०। मैं तुम सब दुःखी महात्मा और प्यारे पुत्रों को नहीं छोड़ूँगी, मैं भी वन को चलूँगी, हाय द्रौपदी मुझे क्यों छोड़े जाती है। २१। क्या विधाता ने मेरे शरीर का अन्त नहीं लिखा है, जो ऐसी विपत्ति में भी मेरे प्राण नहीं निकलते हैं। २२। हे कृष्ण, द्वारकावासी! हे बलदेवजी के छोटे भाई! इस समय तुम कहाँ हो, जो मेरी और इनकी इस दुःख से रक्षा नहीं करते हो। २३। यह बात विख्यात है कि जो कोई तुमको आदि और सनातन जानकर तुम्हारा ध्यान करता है, उसको तुम अपना दर्शन देकर उसके दुःख को दूर करते हो, अब क्या कारण है जो सहाय नहीं करते। २४। हे द्वारकावासी! ये पांडव धर्मात्मा, महात्मा, यशस्वी और पराक्रमी हैं, दुःख पाने के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

योग्य नहीं हैं, इन पर अपनी दया कीजिए। २५। हाय, इन पांडवों पर यह आपत्ति भीष्म, द्रोणाचार्य और कृपाचार्य के बैठे रहने पर जो नीति के जाननेवाले और इस कुल के शिरोमणि हैं, कैसे पड़ी? ।२६। हाय, हे महाराज पांडु अब तुम कहाँ हो, इन अपने पुत्रों को जो जूए में हारे हुए और वनवास करने को आज्ञा दिये हुए हैं; क्या शिक्षा करते हो? । २७ । हे माद्री के पुत्र, सहदेव ! तू मत जाय, लौट आ, तू मुझको अपने शरीर से भी अधिक प्यारा है। मुझे कुपुत्र की तरह छोड़कर मत जा। २८। तेरे ये सब भाई सत्यप्रतिज्ञ हैं। इससे तू इनको ही जाने दे, तू यहाँ रहकर मेरी रक्षा कर, तुझे मेरी रक्षा करने का यहीं फल प्राप्त होगा। २९।

वैशम्पायनजी बोले—हे राजा जनमेजय ! इसके पीछे पांडव उस विलाप करती हुई कुन्ती से आज्ञा लेकर उसे प्रणाम करके आनन्द-रहित होकर वन को चल दिये । ३० । और विदुरजी महादुःखी होकर उस विलाप करती हुई कुन्ती को अनेक प्रकार से धैर्य देकर घर को लिवा ले गये। ३१। और धृतराष्ट्र के पुत्रों की स्त्रियाँ द्रौपदी के सभा में ले जाने और वस्त्र उतारने के हाल को सुनकर कौरवों की निन्दा कर करके रोने लगीं और अपने-अपने मुखों पर हाथ रख रखकर चिन्ता करने लगीं। ३२-३३। और धृतराष्ट्र को भी अपने पुत्रों की अनीति को याद कर करके दुःख के कारण से चैन नहीं पड़ा। ३४। उस समय उसने शोच और चिन्ता से व्याकुल होकर विदुरजी को शीघ्र बुलाने की आज्ञा दी। ३५। विदुरजी सुनते ही धृतराष्ट्र के पास गये । तब वह महादुःखी होकर विदुरजी से कहने लगा। ३६।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अस्सीवाँ अध्याय

विदुरजी का धृतराष्ट्र के पूछने पर पांडवों के अनेक रूपों से जाने का वृत्तान्त कहना, दुर्योधन का द्रोणाचार्य की शरण में जाना, और द्रोणाचार्य का उनकी रक्षा करने की प्रतिज्ञा करना

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! धृतराष्ट्र विदुरजी को देखकर शोक युक्त होकर पूछने लगा—युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव, धौम्य, पुरोहित और द्रौपदी किस प्रकार से वन को जा रहे हैं। १-३। विदुरजी बोले—युधिष्ठिर अपने मुख को कपड़े से ढके हुए, भीमसेन अपनी भुजाओं को देखता हुआ, अर्जुन बालू को पृथ्वी पर फेंकता हुआ, सहदेव मुखपर भस्म लगाता हुआ, नकुल अपने शरीर में धूल मलता हुआ, द्रौपदी अपने शिर के खुले हुए बालों से मुख को ढके हुए और रोती हुई, और धौम्य पुरोहित हाथ में कुशा लिये हुए, सामवेद के उन मंत्रों को पढ़ता हुआ जिनके देवता यम और रुद्र हैं जा रहे हैं। युधिष्ठिर सबके आगे है। और युधिष्ठिर के पीछे और सब हैं। ४-८। यह सुनकर धृतराष्ट्र बोला—पाण्डव इस प्रकार से नाना रूप बनाकर क्यों जा रहे हैं। ९। विदुरजी बोले—यद्यपि आपके पुत्रों ने युधिष्ठिर का धन और राज्य छल करके ले लिया है, परन्तु युधिष्ठिर अपने धर्म को छोड़ना नहीं चाहता है। इससे उसने तुम्हारे पुत्रों पर दया करके इस विचार से कि जो मैं अपनी क्रोध भरी हुई आँखें खोल दूँगा तो सब मनुष्य भस्म हो जायँगे अपने मुख को कपड़े से ढक लिया है। १०-१२। और भीमसेन अपनी भुजाओं के बल से गर्वित होकर इस विचार से भुजाओं को देखता जाता है कि मेरे समान किसी की भुजाओं में बल नहीं है, मैं अपनी भुजाओं के अनुरूप शत्रुओं को मारने में कर्म करूँगा। १३-१५। और अर्जुन क्रोध से बालू इस कारण से बखेरता जाता है कि युद्ध में मैं इसी प्रकार से बाणों के समूह के समूह शत्रुओं पर छोड़ूँगा और सहदेव ने मुख पर भस्म

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

इस प्रयोजन से लगाई है कि मुझको इस समय कोई न पहिचान सके। १६-१७। और नकुल का स्वरूप बहुत सुन्दर है, सो उसने सब देह में धूल इस कारण से लगा ली है कि राह में मुझे देखकर कोई स्त्री मुझपर कामासक्त न हो जावे। १८। और द्रौपदी महादुःखी रोती हुई एक वस्त्र पहिरे हुए रजस्वला की अवस्था में रज से गीले वस्त्र को लिये हुए यह कहती हुई जा रही है कि जिनके कारण से मुझको यह दुःख प्राप्त हुआ है, उनको स्त्रियाँ अब से चौदहवें वर्ष में राँड़, होकर अपने-अपने पतियों को रज के लोहू से भरी हुई जलदान देकर हस्तिनापुर को जावेंगी। १९-२१। और धौम्यऋषि कुशाओं को नैर्ऋत्य-कोण की ओर किये हुए यमसम्बन्धी सामवेद के मंत्रों को गाता हुआ इस प्रयोजन से जाता है कि कौरवों के नाश होने पर मैं इसी प्रकार से सामवेद पढ़ता हुआ पाण्डवों के आगे-आगे चलूँगा। २२-२३। और सब पुरवासी बार-बार यह कहते हैं हाय-हाय हमारा स्वामी इस प्रकार से जाता है कुरुओं को धिक्कार है। जिनकी बुद्धि वृद्ध होने पर भी बालकों की सी है। २४। और जो हम सबको अनाथ करके लोभ के कारण से पाण्डु के पुत्रों को देश से निकाल देते हैं। २५। इन लोभी और क्रूर कौरवों से हम क्या प्रीति करें। २६। सो हे राजा धृत-राष्ट्र! वे पांडव उक्त रीति से अपने मन की बात को रूप और चिह्नों से दर्शाते हुए वन की ओर चले गये। २७। हस्तिनापुर से निकलते ही विना बादल के आकाश से पानी की वर्षा हुई, पृथ्वी में भूकम्प हुआ, राहु ने विना पर्व के सूर्य को ग्रस लिया, और नगर के दहिनी ओर उल्कापात हुआ। २८-२९। और देवताओं के मंदिर अँटारियाँ और यज्ञस्थान की सीवों के वृक्षों पर मांस खानेवाले गृध्र और काक आदि पक्षी और गीदड़ बोलने लगे। ३०। सो हे धृतराष्ट्र! ये सम्पूर्ण उत्पात तुम्हारे खोटे मंत्र के कारण से भरतकुल के नाश होने के निमित्त हुए हैं। ३१।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! जिस समय विदुरजी धृतराष्ट्र से उक्त प्रकार से कह रहे थे उसी समय उन कौरवों की सभा में नारदजी महर्षियों को साथ लिये हुए आये और कहने लगे आज से चौदहवें वर्ष में दुर्योधन के अपराध के कारण से भीमसन और अर्जुन के बल से सब कौरवों का नाश होगा। ३२-३४। यह कहकर नारद जी ब्राह्मी-सिद्धि को धारण किये हुए स्वर्ग को चढ़कर अन्तर्द्धान हो गये। ३५। वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! इसके पीछे कर्ण, दुर्योधन, और शकुनि, द्रोणाचार्य को आश्रय लेकर उनके पास गये और सब राज्य उनको देने लगे। ३६। तब द्रोणाचार्य ने क्रोध से दुर्योधन, दुःशासन, कर्ण और सब भरतवंशियों से कहा कि इन देवपुत्र पाण्डवों को सब ब्राह्मण अवध्य कहते हैं अर्थात् वे मारे नहीं जा सकते हैं, परन्तु हम इन शरण आये हुए धृतराष्ट्र के पुत्रों की सब राजाओं सहित अपने बल के अनुसार रक्षा करेंगे, इनको त्यागेंगे नहीं। देखो होनहार बड़ा बलवान् है। अब तो पाण्डव हारजाने के कारण से धर्म के अनुसार वन को चले गये हैं, परन्तु तेरह वर्ष व्यतीत होने पर जब लौटेंगे तब इस वैर का बदला अवश्य लेंगे। ३७-४०। मैंने पहिले राजा द्रुपद को मित्रता की लड़ाई में भ्रंसित किया था सो उसने मेरे मारने के लिये पुत्र होने के निमित्त याज और उपयाज नामी ऋषियों से यज्ञ कराया था। उस यज्ञ में अग्निकुंड से धृष्टद्युम्न पुत्र और द्रौपदी नाम कन्या प्रकट हुई। ४१-४२। सो वह धृष्टद्युम्न पांडवों का साला है और उनसे बड़ी प्रीति रखता है। मुझको उससे बड़ा भय है। ४३। क्योंकि वह ज्वाला के वर्ण के सदृश देवताओं का दिया हुआ धनुष बाण और कवच सहित प्रकट हुआ है। ४४। वह पांडवों के पक्ष में रहेहीगा और दूसरे अर्जुन सब रथी और महारथियों में श्रेष्ठ है इससे उनके साथ युद्ध होनेपर हमारे प्राणों का नाश होगा। इससे बढ़कर और कौन सी दुःख की बात है। सब लोकों में यह विख्यात है कि धृष्टद्युम्न द्रोणा-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चार्य के मारने को उत्पन्न किया गया है और द्रोणाचार्य की मृत्यु है। ४५-४७। हे दुर्योधन! यह काल तेरे कारण से प्राप्त हुआ है। यह तेरा सुख हिमऋतु में ताड़ के पेड़ की छाया के समान एक मुहूर्त मात्र का है। अच्छा, अब तुम यज्ञ करो, दान दो, और सुख भोगो। ४८-४६। चौदहवें वर्ष में तो तुम्हारा नाश होवे ही गा, यह सुनकर धृतराष्ट्र बोला कि हे विदुर! आचार्य ठीक कहते हैं। तुम जल्दी से जाकर पांडवों को लौटा लाओ। ५०। जो वे न लौटें तो फिर इस प्रकार से न जाने पावें जैसे अब जा रहे हैं। यहाँ से सत्कार पाकर रथों पर सवार होकर शस्त्र लिये हुए प्यादों के साथ जावें। ५१।

इक्यासीवाँ अध्याय

पांडवों के वन को चलेजाने पर धृतराष्ट्र को बड़ी चिन्ता करना

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! जब पांडव जुए में हारकर वन को चले गये तब धृतराष्ट्र बड़ी चिन्ता करने लगा। १। संजय उसको व्याकुलचित्त और चिन्ता से श्वास लेते हुए बैठा हुआ देखकर कहने लगा कि धन सहित पृथ्वी को पाकर और पाण्डवों को वनवास देकर अब किस बात का शोच कर रहे हो। २-३। धृतराष्ट्र बोला—जिन मनुष्यों का उन पांडवों से जो महारथी बलवान् और चतुर हैं वैर हो जावे वे निधड़क क्योंकर बैठ सकते हैं। ४। संजय बोला कि यह वैर भी तो आपही का किया हुआ है, जिसके कारण अब सब लोक का नाश होगा। ५। देखो तुम्हारे निर्लज्ज और मंदबुद्धि पुत्र दुर्योधन ने भीष्म, द्रोणाचार्य और विदुरजी के मना करने पर भी प्रातिकामी को भेजकर धर्मचारिणी द्रौपदी को सभा में बुलवाया। ६-७। सत्य है जिसको देवता पराभव देना चाहते हैं उसकी बुद्धि पहिले ही से हर लेते हैं। ८। और जब नाश होनेवाला होता है तब बुद्धि के पापरूप हो जाने से अनीति ही नीति जान पड़ती है। ६।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

है। ६। हित तो अनहित, और अनहित हित दिखाई देता है और वही उसको अच्छा जान पड़ता है। १०। काल दण्डा लेकर किसी के शिर को तो नहीं फोड़ता है। विपरीत बातों को अनुकूल मानने ही से यह जाना जाता है कि यह काल के वश में हो रहा है। ११। यह रोगरूपी युद्ध सभा में द्रौपदी को लानेवालों ने खड़ा किया है। १२। भला वह द्रौपदी इस योग्य थी, जो विना योनि के अग्निकुंड में से प्रकट हुई और सब धर्मों की जाननेवाली और स्वरूपवान् थी। १३। सिवाय ज्वारियों के उसको सभा में बुलाने का कौन साहस कर सकता है। इसके सिवाय जब वह द्रौपदी अपने रजस्वला धर्म में रुधिर से भरी हुई एक वस्त्र पहिरे हुए अपने पतियों को जो धन राज्य और वस्त्रों को हार जाने के कारण से दास होकर धर्म की फाँसी में बँधे होने के कारण पराक्रम नहीं कर सकते थे देख रही थी। १४-१६। उस समय दुर्योधन और कर्ण ने उस दुखिया से जो अनादर करने के योग्य न थी, कड़ुवे वचन कहे। १७। यह सुनकर धृतराष्ट्र बोला कि हे संजय! तुम सत्य कहते हो, वह द्रौपदी अपनी क्रोध भरी हुई आँखों से देखकर पृथ्वी को भी भस्म कर सकती है। और मेरे पुत्र भी मुझे उस भस्म के शेष से मालूम होते हैं। १८। देखो जब सब भरतवंश की स्त्रियां गांधारी सहित उस धर्मिष्ठा युवान धर्मपत्नी और स्वरूपवान् द्रौपदी को सभा में आई हुई देखकर रो रही थीं, और अपने-अपने पुत्रों के पास बैठ-बैठ कर सोच कर रही थीं, और ब्राह्मणों ने उसके सभा में लाने को देखकर क्रोध किया था, और सायंकाल को अग्निहोत्र भी नहीं किया था, तब प्रलय की दुंदुभी बजने लगी। वज्र के गिरने का सा शब्द हुआ, दिन में उल्का गिरे, और पर्व न होने पर भी राहु ने सूर्य को ग्रस लिया। इसी प्रकार से रथशाला में अपने आप आग लग गई। १९-२३। ध्वजा गिर पड़ी, और दुर्योधन की यज्ञशाला के पास सियार बड़े भयानक शब्द से बोलने लगे। २४।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

यह देखकर भीष्म, द्रोणाचार्य, वाह्लीक, सोमदत्त, और कृपाचार्य तो चल दिये और विदुरजी की प्रेरणा से मैंने कहा कि हे द्रौपदी ! तू मुझसे वर माँग। मैं जो तेरी इच्छा होगी सो ही दूँगा। तब द्रौपदी ने मुझसे यह माँगा कि सब पाण्डव अदास कर दिये जावें। २५-२७। मैंने वह वरदान उसको दे दिया और पाण्डवों को धनुष और रथों सहित जाने की आज्ञा दे दी। इसके पीछे मुझसे विदुरजी ने कहा कि भरतवंशियों का अन्त यहीं तक है। यह द्रौपदी राजा पांचाल की बेटी स्वर्ग की लक्ष्मी है, इसके समान दूसरी उत्तम स्त्री नहीं है। पाण्डवों ने इसको दैव की इच्छा से पाया है, सो इसको सभा में लाने के क्लेश को पाण्डव कभी नहीं सह सकेंगे। २८-३०। और न राजा द्रुपद जो महारथी हैं और वृष्णिवंशी लोग इस द्रौपदी के दुःख को जिसकी रक्षा कृष्ण करते हैं सहेंगे। ३१। जिस समय अर्जुन पांचाल देश की सेना लेकर आवेगा और भीमसेन उस सेना में अपनी गदा को घुमाता हुआ युद्ध के लिये खड़ा होगा, उस समय कोई राजा अर्जुन के गांडीवधनुष के शब्द को सुनकर भीमसेन की गदा के वेग को न सह सकेगा। इससे मैं पांडवों के साथ विग्रह करना अच्छा नहीं जानता हूँ। मेरी समझ से आप पाण्डवों से संधि कर लीजिए। ३२-३४। मैं पाण्डवों को कौरवों से सदैव अधिक बलवान् जानता हूँ। देखो राजा जरासंध जो बड़ा तेजस्वी और बलवान् था, भीमसेन के हाथों से मारा गया। इससे पांडवों से आपकी संधि ही रहे तो ही अच्छा है। ३५-३६। आप दोनों ओर के बलाबल को विचार कर शंका छोड़कर जैसा उचित जानिए वैसा कीजिए, ऐसा करने से तुम्हारा कल्याण होगा। ३७। सो हे संजय ! विदुरजी ने उक्त प्रकार से कह कह कर मुझको बहुत समझाया परन्तु मैंने अपने हित करने के लिये उनकी सलाह को अंगीकार नहीं किया। ३८।

सभापर्व समाप्तम्

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor